वितस्ता

संपादिका

प्रो. रुबी ज़ुत्शी

हिंदी-विभाग, कश्मीर विश्वविद्यालय, राष्ट्रीय मूल्यांकन
एवं प्रत्यायन परिषद् द्वारा ए+ ग्रेड श्रीनगर 190006

वितस्ता

संपादक मण्डल -:

1. प्रो. रुबी ज़ुत्शी
2. प्रो. ज़ाहिदा जबीन
3. डॉ. भारतेंदु कुमार पाठक
4. श्रीमती नायराह कुरैशी
5. डॉ. मुदस्सिर अहमद भट्ट

परामर्श मण्डल-:

1. **प्रो. ज़ोहरा अफ़ज़ल**

पूर्व कला संकाय अध्यक्ष एवं विभागाध्यक्ष, हिंदी विभाग, कश्मीर विश्वविद्यालय, श्रीनगर

2. **प्रो. अब्दुल बिस्मिल्ला**

हिंदी-विभाग, जामिया मिलिया इस्लामिया विश्वविद्यालय (नई दिल्ली)

3. **प्रो. अनिल राय**

डीन अंतर्राष्ट्रीय संबंध, सामाजिक विज्ञान व मानवीय विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय

4. **प्रो. मोहन**

अध्यक्ष, हिंदी-विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय

5. **प्रो. चंद्रदेव यादव**

हिंदी-विभाग जामिया मिलिया इस्लामिया विश्वविद्यालय (नई दिल्ली)

मनोज सिन्हा
उपराज्यपाल, जम्मू-कश्मीर

राजभवन
श्रीनगर-190001

आज़ादी का
अमृत महोत्सव

यह अत्यंत प्रसन्नता का विषय है कि कश्मीर विश्वविद्यालय का परास्नातक हिंदी-विभाग अपनी वार्षिक शोध पत्रिका वितस्ता २०२४ का प्रकाशन करने जा रहा है।

भाषाओं के प्रति अपरिमित श्रद्धा और सम्मान हमारी परंपरा की अद्वितीय विशेषता रही है। मौलिक आलेखों का उद्देश्य समाज के जीवन मूल्यों को प्रतिबिंबित करना है जिसमें कला, संस्कृति, राष्ट्रीय हित तथा सृजनात्मकता भी प्रकट होती है। वितस्ता को कश्मीर घाटी की एकमात्र हिन्दी भाषा शोध पत्रिका का गौरव हासिल है और यह हमारी चेतना की अमूल्य संपत्ति भी है।

हिन्दी के अनेक महान रचनाकारों ने संस्कृति की निरन्तरता को समृद्ध एवं संरक्षित कर आने वाली पीढ़ियों को चिंतन की अमूल्य विरासत सौंपी है। मुझे विश्वास है वितस्ता के इस अंक से बौद्धिक बहस के दौरान कुछ ऐसे अध्ययन लोगों के समक्ष प्रस्तुत किए जाएंगे जिससे ज्ञान के अक्षय भंडार के प्रचार-प्रसार में मदद मिलेगी।

मैं हिंदी विभाग की अध्यक्षा तथा उनके सहयोगियों के प्रयासों की सराहना करता हूँ और इस शोध पत्रिका के सफल प्रकाशन की कामना करता हूँ।

मनोज सिन्हा
(मनोज सिन्हा)

Prof. (Mrs.) Nilofer Khan

Vice Chancellor
University of Kashmir
Hazratbal Srinagar - 190006
Jammu and Kashmir (India)

July 16, 2024

MESSAGE

I am delighted to know that the Post Graduate Department of Hindi, University of Kashmir is publishing its Departmental Research Journal "VITASTA" for the year 2024.

Hindi language has a rich linguistic heritage that traces back to Sanskrit reflecting India's diverse cultural history. Its role in uniting diverse linguistic communities in our country cannot be overstated. Hindi, with its rich culture, remains a symbol of India's heritage. To ensure this essence of Hindi Language endures through generations, it must be diligently nurtured and promoted at every level. The PG Department of Hindi, University of Kashmir has significantly contributed to this effort, and I believe it will continue to strive for its further growth and preservation.

I extend my congratulations and best wishes to all the contributors who worked hard to make this journal a success.

Prof. Nilofer Khan

Email: vcoffice@kashmiruniversity.ac.in | Website: www.kashmiruniversity.ac.in | Phone No: + 91 194 - 2272000 / 2001 | Fax No: + 91 194 - 2272086

वितस्ता का अर्धशतक

आपके हाथों में वितस्ता का ५०वाँ अंक हैं, यह न केवल अत्यंत हर्ष एवं प्रसन्नता की बात है अपितु इस पत्रिका को कश्मीर घाटी की एकमात्र शोध पत्रिका होने का गौरव प्राप्त है| वितस्ता पत्रिका के प्रकाशन का प्रारंभ सन् 1958 ई. में डॉ. हरिहर प्रसाद गुप्ता के संपादन में हुआ| कुछ वर्षों के विराम पश्चात् सन् 1966 ई. में डॉ. रमेश कुमार शर्मा जी ने इसका पुनः प्रकाशन कर इस पत्रिका को पुनर्जीवित कर विशुद्ध अनुसंधानात्मक रूप प्रदान किया| इस पत्रिका के माध्यम से शामी सेठी, डॉ. अयूब खान 'प्रेमी', डॉ. निज़ामुद्दीन, डॉ. रोशन लाल ऐमा, डॉ. भूषण लाल कौल, डॉ. सोमनाथ कौल, डॉ. रमेश कुमार शर्मा, डॉ. अशोक कुमार पंडित, डॉ. रामदयाल कटारा आदि साहित्यकार प्रकाश में आए|

90 के दशक में वितस्ता के प्रकाशन में पुनः कुछ वर्षों का विराम लगा क्योंकि कश्मीर विश्वविद्यालय के हिंदी विभाग के कला-संकाय सदस्यों, आचार्यों को कश्मीर घाटी से पलायन करना पड़ा था| पलायन की त्रासदी पश्चात् पूर्व हिंदी विभाग अध्यक्षा प्रो. ज़ोहरा अफ़ज़ल जी ने इस पत्रिका को पुनः सुचारू रूप से निरंतर प्रकाशित किया जो वर्तमान समय तक जारी है|

आज वितस्ता की आयु 66 वर्ष है, इन 66 वर्षों में इस पत्रिका का संपादन कार्य अनेक विद्वान आचार्यों तथा कश्मीर विश्वविद्यालय के हिंदी विभाग के अनेक अध्यक्षों के द्वारा किया गया| 3 विशेषांकों (जम्मू कश्मीर में हिंदी, प्रेमचंद तथा हिंदी के विकास में संचार माध्यमों की भूमिका विशेषांक) तथा 46 सामान्य अंकों के प्रकाशन की वितस्ता की गौरवशाली यात्रा रही है| वितस्ता की इस समृद्धता तथा विराट साहित्यिक यात्रा के लिए वे सभी साहित्यकार, लेखक, विद्यार्थी-शोधार्थी विशेष बधाई के पात्र

हैं कि उन्होंने समय-समय पर रचनात्मक योगदान देकर इस पत्रिका को निरंतर प्रकाशित होते रहने में अपना महत्वपूर्ण अवदान दिया|

इस अर्द्धशतकीय अंक के संपादन का दायित्व अथवा सौभाग्य मेरे लिए अत्यंत सुखद एवं हर्ष का विषय है| कश्मीर जैसे हिंदीतर क्षेत्र में केसरी घाटियों तथा बर्फ़ से ढकी पहाड़ियों के बीच झेलम के समान वितस्ता पत्रिका का निरंतर प्रवाहित एवं प्रकाशित होना हिंदी भाषा एवं साहित्य के उज्जवल भविष्य का द्योतक है| वर्तमान समय में यह पत्रिका कश्मीर में हिंदी भाषा, साहित्य, अनुसंधान तथा लेखन-पक्रिया का एक मात्र अनुसंधानपरक मंच बनकर उभर रही है|

वास्तव में कश्मीर विश्वविद्यालय के आदरणीय कुलपति महोदया प्रो. नीलोफर खान, आदरणीय कुलसचिव प्रो. नसीर इक़बाल के सहयोग से ही यह अंक प्रकाशित करने में हम सफल हुए हैं| इस अंक के लिए रचनात्मल योगदान योगदानकर्ताओं ने भी सहर्ष अपनी रचनाएँ, समीक्षाएँ एवं शोध-आलेख प्रेषित किए, उनका भी हार्दिक आभार| इस अंक में प्रकाशित रचनाओं व आलेखों में व्यक्त विचार लेखकों के निजी हैं, संपादक व संपादक-मंडल का उनसे सहमत होना आवश्यक नहीं है| आशा करती हूँ कि यह अंक भी हिंदी भाषा व साहित्य प्रेमियों, शोधार्थियों के लिए लाभप्रद साबित होगा| इस पत्रिका को और बेहतर बनाने के लिए अपने सुझाव लिखिए| वितस्ता पत्रिका के साथ जुड़िए और हिंदी साहित्य संसार को और समृद्ध करने में अपना योगदान दीजिए|

धन्यवाद

संपादिका
प्रो. रुबी जुत्शी

विषय सूची

सम्पादकीय प्रो. रुबी ज़ुत्शी

09 भारतीय नारी : गौरव, गरिमा और महिमा प्रो. रुबी ज़ुत्शी

17 कश्मीरी की लोकप्रिय रामायण: रामावतारचरित
डॉ. शिबन कृष्ण रैणा

25 सेठ गोविन्ददास के नाटकों में गाँधीवाद डॉ. शगुफ्ता नियाज़

39 कश्मीर के आलंकारिक आचार्य डॉ. भारतेंदु कुमार पाठक
एवं डॉ. वनीत कौर

42 श्रीरामचरितमानस की भाषा का भाषावैज्ञानिक अध्ययन
डॉ. आलोक कुमार सिंह

55 कश्मीर में स्थित बौद्ध धर्म स्मारक डॉ. अमृता सिंह

61 कश्मीर की आदि संत कवयित्री लल्लद्यद व एकत्व की अवधारणा
डॉ. मुदस्सिर अहमद भट्ट

68 हिमाचल प्रदेश की मन्दिर वास्तुकला डॉ. सुरेश शर्मा

78 मानव तस्करी की समस्या को बयां करती हिंदी आदिवासी कहानियां
नेहा यादव

95 सूर्यबाला की कहानी में अभिव्यक्त वृद्ध जीवन का द्वंद्व: समस्याएं और समाधान (विशेष संदर्भ: 'बाऊजी और बंदर' और 'दादी और रिमोट')
कोमल कुमारी

106 हिंदी भाषा के विशेषण शब्दों में परिवर्तनीयता
सीताराम गुप्ता

118 नारी के प्रति नारी की संवेदनहीनता को दर्शाती ममता कालिया की कहानियां: माँ, उमस एवं शाल
श्वेता रानी

128 संघर्षमय जीवन की महागाथा: मणिकर्णिका

अपर्णा भारती

136 मलबे का मालिक कहानी में मानवीय मूल्यों का विघटन

आशा देवी

143 माँ-बेटे पूजा गुप्ता

149 रिश्ते की बात डॉ. प्रदीप कुमार शर्मा

154 डॉ. स्वदेश कुमार भटनागर की कविताएँ

डॉ. स्वदेश कुमार भटनागर

158 डॉ. पूनम मानकर पिसे की कविताएँ डॉ. पूनम मानकर पिसे

161 लेखकों, शोधार्थियों के लिए दिशानिर्देश

163 इस अंक के योगदानकर्ताओं की सूची

भारतीय नारी : गौरव, गरिमा और महिमा

प्रो. रुबी ज़ुत्शी

समाज की वास्तविक स्थिति का अनुमान उस समाज में विद्यमान स्त्रियों की दशा को देखकर लगाया जा सकता है। परिवर्तित होते समय के साथ नारी की स्थिति में भी परिवर्तन आया है। जहाँ प्राचीन काल की नारी लक्ष्मी स्वरूपा, देवी मानी जाती थी, वह स्वतंत्र थी, अपनी इच्छा से वर का चुनाव कर विवाह कर सकती थी, एक योद्धा की भाँति युद्धभूमि में अपना कौशल सिद्ध कर सकती थी या यूँ कहें कि समाज में पुरुषों के साथ सम्मान और गरिमा से कंधे से कंधा मिलाकर चलती थी वहीं परिवर्तित होते समय ने उसके स्वतंत्र अस्तित्व को सामाजिक बंधनों और अवरोधों में जकड़कर उसे घर की चार दीवारी में कैद कर दिया। पुरुष प्रधान समाज में मानो नारी मात्र एक वस्तु व भोग्या बनकर रह गई, जिसकी अपनी कोई पहचान और गरिमा ही नहीं थी। वह हर प्रकार से चाहे आर्थिक, सामाजिक यहाँ तक कि मानसिक रूप से भी पुरुषों पर निर्भर थी। नैतिकता के नाम पर कई बेड़ियों में बंधती चली गई नारी बाल-विवाह, दहेज-प्रथा, सती-प्रथा, अनमेल विवाह जैसे कई कुप्रथाओं और शोषण का शिकार होती चली गई। इतना ही नहीं सामाजिक व्यवस्था के चलते पुत्र तथा पुत्री के मध्य किए जाने वाले अंतर के कारण नारी जटिल जीवन स्थितियों का शिकार हो घुटन, शोषण, अकेलेपन, संत्रास भरा जीवन यापन करने के लिए विवश हुई। सिमोन द बोउआर के कथनानुसार "स्त्री की स्तिथि अधीनता की है। स्त्री सदियों से ठगी गई है और उसने कुछ स्वतंत्रता हासिल की है तो बस उतनी ही जितनी पुरुष ने अपनी सुविधा के लिए उसे देनी चाही। यह त्रासदी उस आधे भाग की है, जिसे आधी आबादी कहा जाता है।"[1] इन बेड़ियों से मुक्ति पाने के लिए नारी को वैचारिक युद्ध लड़ना है, इस सब में कैद स्त्री तभी मुक्ति पा सकती है जब दोनों ही स्तरों (व्याहवारिक और

अकादमिक) पर कार्य किए जाएं। स्त्री को कैद से मुक्ति दिलाने के लिए केवल सहानुभूति से काम नहीं चलने वाला है। जगदीश चतुर्वेदी के अनुसार "स्त्री को कैद से मुक्ति दिलाने के लिए व्यावहारिक एवं अकादमिक दोनों ही स्तरों पर जंग लड़ी जानी चाहिए। जो लोग सोचते हैं कि सिर्फ आंदोलन करके जंग जीती जा सकती है, वे गलत सोचते हैं। स्त्री की मुक्ति के लिए पढ़ाई और लड़ाई का एक साथ चलना बेहद ज़रूरी है। स्त्री की जंग जब तक वैचारिक स्तर पर नहीं जीती जाती तब तक स्त्री मुक्ति का सपना साकार नहीं होगा।"[2]

वर्तमान समय में महिलाएं अपनी स्थिति के प्रति चेतन, जागरुक हैं। वह आर्थिक रूप से स्वावलंबित, आत्मनिर्भर, सामाजिक बेड़ियों से मुक्त, आत्मविश्वास और दृढ़ हैं तो इसके पीछे कई समाज सुधारकों और आंदोलनकारियों का अनथक संघर्ष और प्रयास है। अपनी शक्ति और अधिकारों के प्रति जागृत व सक्रिय हो चुकी नारी सशक्त हो समाज, परिवार और देश की उन्नति के लिए महत्वपूर्ण योगदान दे रही है। नारी के अविस्मरणीय योगदान ने ही सदा उसे उत्कृष्ट स्थान प्रदान किया है। नारी के संघर्ष, समर्पण, कर्तव्य और सेवा भाव ही उसे गौरवमय बना, उसकी गरिमा और महिमा का बखान करते हैं। महिला कथा-लेखिकाओं ने अपने लेखन द्वारा स्त्री विषयक चिंतन को बखूबी उभारा है। इन लेखिकाओं ने नारी जीवन की विषमताओं, विडंबनाओं, आशा-निराशा, जीवन की कटुता आदि का यथार्थ चित्रण अपनी रचनाओं में किया है। शिक्षित व कामकाजी होते हुए भी पुरुष वर्ग उन्हें पूर्ण रूप से समान अधिकार देने में असमर्थ है, इस प्रकार की वास्तविकता का उल्लेख करते हुए महिला कथाकारों ने नारी के अधिकार अस्तित्व की पहचान की माँग की है। महिला लेखन की कमान संभालने वाली लेखिकाओं में उषा प्रियंवदा, अलका सरावगी, कुसुम अंसल, मृदुला गर्ग, प्रभा खेतान, मैत्रेयी पुष्पा, कृष्ण सोबती, मन्नू भण्डारी आदि जैसी प्रबुद्ध

लेखिकाएं सम्मिलित हैं। महिला रचनाकारों के संदर्भ में डॉ. शोभा वेरेकर लिखती हैं "महिला लेखन में विलक्षण पठनीयता, विश्वसनीयता, जिजीविषा और मार्मिकता के कारण ही इसे विशाल पाठक वर्ग मिला है। आत्म अभिव्यक्ति की आकांक्षा के साथ-साथ आत्म सजगता और परिवेश चेतना महिला कहानीकार के रचनात्मक सरोकार का केन्द्रीय बिन्दु रहा है।"[3]

लेखिका **उषा प्रियंवदा** की अधिकांश रचनाएं नारी प्रधान हैं। उन्होंने अपनी रचनाओं के माध्यम से नारी जीवन के विविध पक्षों को बड़ी कलात्मकता के साथ प्रस्तुत किया है। अपने प्रथम उपन्यास 'पचपन खंभे लाल दिवारे' के माध्यम से लेखिका ने एक ऐसी स्त्री का वर्णन किया है जो अपने परिवार को आर्थिक संकट से उभारने, परिवार के दायित्व के लिए अपने प्रेम व इच्छाओं का त्याग करती है। वह अपने चारों ओर पारिवारिक प्रतिबद्धता, सामाजिक दायित्व, पद तथा गरिमा की दीवारें बना लेती है। रुकोगी नहीं राधिका, शेषयात्रा, अंतरवंशी जैसे उपन्यासों में लेखिका ने दो संस्कृतियों के संघर्ष में पिसकर अकेलेपन से जूझती, विदेशी परिस्थितियों के मध्य स्वयं को संतुलित कर पाने के द्वंद्व में जीवन यापन करने वाली महिलाओं का चित्रण किया है।

लेखिका **कुसुम अंसल** द्वारा रचित उपन्यासों को नारी जीवन का जीवंत दस्तावेज़ कहा जा सकता है। उनके उदास आँखें, नीव का पत्थर, उस तक, एक और पंचवटी जैसे उपन्यास जहाँ एक ओर नारी जीवन की समस्याओं, उतार-चढ़ाव, मुक्ति, अस्तित्व की तलाश व उसकी संभावनाओं के प्रयास को उभारते हैं तो वहीं दूसरी ओर इसी अस्मिता की तलाश की राह में भटकाव को भी चित्रित करते हैं। इनकी रचनाओं में चित्रित नारी पात्र को पाश्चात्य संस्कृति के बढ़ते प्रभाव के चलते संबंध विच्छेद से उत्पन्न तनाव के कारण अपनी गरिमा और 'स्व' को खोजते दिखाया है। अपने 'स्व' को पाने

के लिए वे मानवीय भावनाओं के अंतर्मन तक पहुँचती हैं। हिन्दी साहित्य की लोकप्रिय लेखिकाओं में से एक **मृदुला गर्ग** ने आत्म निर्भर नारी का उल्लेख अपने उपन्यासों और कहानियों में किया है। अपनी जीवंतता के कारण ये नारी पात्र कठिनाइयों का सामना करते हुए स्वयं अपना मार्ग बनाते हैं। आपने नारी सशक्तिकरण, नारी जागरण, नारी मुक्ति आंदोलन को प्रमुख रूप से उजागर किया है। नारी जीवन के सामाजिक और मनोवैज्ञानिक रूप को बड़ी निडरता के साथ प्रस्तुत किया है। अपनी रचनाओं के माध्यम से मृदुला गर्ग ने इस तथ्य को उभारने का प्रयास किया है कि समय के साथ मूल्यों, परंपराओं में भी परिवर्तन आना आवश्यक है, क्योंकि कोई भी व्यक्ति किसी भी संबंध को केवल तब तक ही निभा सकने में समर्थ है जब तक उससे उसके व्यक्तित्व-निर्माण में किसी प्रकार की बाधा उत्पन्न न हो या उसकी गरिमा आहत न हो।

लेखिका **मैत्रेयी पुष्पा** का मानना है कि समाज में पुरुषों के समक्ष स्त्रियों को प्राप्त अधिकारों का सही उपयोग ही वास्तव में स्त्री मुक्ति है। नारी में जागृत हुई 'स्व' की भावना के चलते वह अपनी गरिमा और अस्तित्व को पहचानने लगी। उनकी रचनाओं में ऐसी महिलाओं का चित्रण मिलता है जो संघर्षरत हैं, अपनी लड़ाई स्वयं लड़ते हुए अपने अधिकारों को प्राप्त करती हैं। उन्होंने अधिकांश रचनाओं में ऐसे नारी पात्रों का चित्र उकेरा है जो स्त्री की चिर-बंदिनी मूक छवि को तोड़कर विद्रोह को दर्शाती हैं। मैत्रेयी पुष्पा की रचनाएं अन्य रचनाकारों से इस अर्थ में भी भिन्न हैं कि वे स्त्री-सशक्तिकरण की अवधारणा को घर-परिवार की सीमाओं से बाहर निकालकर सामाजिक, राजनैतिक सरगर्मियों के बीचों-बीच ले आती हैं। आपने भोगे गए सत्य, स्त्री पीड़ा, संघर्ष, स्त्रियों की समस्याओं तथा जीवन संघर्ष को बड़ी संवेदनशीलता के साथ प्रस्तुत किया है। मैत्रेयी पुष्पा ने दहेज प्रथा, अनमेल विवाह, भ्रूण हत्या, बाँझपन, वेश्यावृति, विधवा नारी, देह-विक्रय, बलात्कार जैसी

समस्याओं का उल्लेख करते हुए, इनका प्रतिकार करती नारी की शक्ति तथा विवेक से भी अवगत कराया है। लेखिका ने बखूबी इस यथार्थ की ओर ध्यान आकर्षित किया है कि जब तक कामकाजी महिलाएं अपना सारा वेतन अपने परिवारवालों के हाथों में सौंपती हैं तब तक उन्हें शाबाशी, तारीफ़ें, घर की लक्ष्मी, सीता-सावित्री जैसे संबोधन दिए जाते हैं किन्तु अपनी यही आय उन्हें देने से इनकार करने पर वह चरित्रहीन बन जाती हैं। उपन्यास 'गुनाह-बेगुनाह' इसका सशक्त उदाहरण है जिसमें समीना तथा लक्ष्मी मैडम का अपने ससुरलवालों को अपनी आय उन्हें न देने पर वे उनकी दृष्टि में चरित्रहीन नारी बन चुकी थीं जो केवल गुलछर्रे उड़ाती थीं यथा "खत्म हो गई सीता और सावित्री। अब उनकी निगाह में मैं एक नाजायज़ औरत थी जो तनख्वाह मिलते ही यारों के साथ गुलछर्रे उड़ाने निकल जाती थी।"[4] इस संदर्भ में डॉ. ज्योति किरण का यह कथन "इस समाज में जब स्त्रियाँ अपनी समझ और काबलियत जाहिर करती हैं तब वह कुलचछनी मानी जाती हैं, जब वह खुद विवेक से काम करती हैं तब मर्यादाहीन समझी जाती हैं। अपनी इच्छाओं, अरमानों के लिए जब वह आत्मविश्वास के साथ लड़ती हैं और गैर समझौता वादी बन जाती हैं, तब परिवार और समाज के लिए वह चुनौती बन जाती है।"[5] इस सत्य को उभारता है कि नारी की गरिमा पर समाज जब चाहे उँगली उठा सकता है।

ज्ञानपीठ पुरस्कार से सम्मानित सुप्रसिद्ध लेखिका **कृष्णा सोबती** पुरुष प्रधान समाज में महिलाओं के लिए एक अलग जगह स्थापित करते हुए एक विद्रोही के रूप में उभरी, जिन्होंने अन्याय के विरुद्ध आवाज़ उठाई। साहित्य के क्षेत्र में आप बेबाक, यथार्थ लेखन के लिए प्रसिद्ध हैं, क्योंकि आपने नारी अस्मिता पर प्रमुखता से प्रश्न उठाए। इनकी रचनाओं में वर्णित नारी पात्र वर्तमान समाज के लिए प्रेरणा स्त्रोत हैं। इनके द्वारा रचित पात्र यदि

एक ओर सम्मानता के लिए छटपटाते हैं तो वहीं दूसरी ओर उससे जूझते हुए भीतर से ही राह भी ढूँढ लेते हैं। उन्होंने स्त्री को किसी वैचारिक ढाँचे के दायरे में बँधकर अवतरित होते नहीं दिखाया बल्कि आत्मविश्वास से पूर्ण, दृढ़, जीवट और संघर्षशील दिखाया है। ये महिलाएं स्वाभिमानी हैं जो स्त्री-जीवन को एक नया विस्तार प्रदान करती हैं। अपने 'स्व' की स्थापना करना तथा अपने पैरों पर खड़े होकर जीवन की राह चुनते हुए अपने अस्तित्व का निर्माण करते नारी पात्रों का चित्रण करती हैं लेखिका **प्रभा खेतान**। प्रभा खेतान की रचनाओं की कई महिलाएं आर्थिक मूल्यों में परिवर्तन चाहती हैं। इसी अर्थ को अपने जीवन का केंद्र बिन्दु बना वे स्वयं अर्थोपार्जन कर पुरुषों के साथ कंधे-से-कंधा मिलाकर चलती हैं। लेखिका ने चित्रित नारी पात्रों के माध्यम से नारी के लिए एक खुले, स्वतंत्र संसार की स्थापना करने का प्रयास किया है।

पुरुष वर्चस्ववादी समाज में पुरुषों के संग हर क्षेत्र में खड़े होकर महिलाओं के लिए अपने अस्तित्व को स्थापित करने व आगे बढ़ने का प्रोत्साहन देने वाली **मृणाल पाण्डे** ने अपनी रचनाओं के माध्यम से नारी की स्थिति में आए परिवर्तन तथा मनोवैज्ञानिक सोच को उजागर किया है। वे मनुवादी धारणा का खण्डन कर आडंबर, अंधविश्वास, पाखंड को रेखांकित करते हुए स्त्री अस्मिता तथा अस्तित्व की वकालत करती हैं। नारी के बदलते रूप, उसके आत्मविश्वास तथा विद्रोह, अपनी गरिमा और अस्मिता की पहचान करती नारी के कई नए रूपों को उनके साहित्य में देखा जा सकता है। नारी स्वतंत्रता को लेकर लेखिका **नासिरा शर्मा** लिखती हैं "वे आधुनिकता के नाम पर स्त्री स्वच्छंदता की पक्षधर नहीं है। वे हर हाल में विवाह, परिवार को बनाए रखने में विश्वास रखती है, अगर एक बार ये आधार खंडित हो गए तो नई पीढ़ी फैशन के नाम पर अनेक विकृतियां और असाध्य रोगों की शिकार हो जाएंगी जिसका प्रभाव समाज पर दूरगामी रूप में स्वस्थ नहीं

होगा।"[6] आपके नारी पात्र अपने अधिकारों के प्रति जागरुक हैं और उन्हें पाने के लिए प्रयत्नशील भी।

हिन्दी साहित्य को अपनी लेखनी द्वारा अप्रतिम योगदान देने वाली लेखिका **मन्नू भण्डारी** ने नारी जीवन का सशक्त और यथार्थ चित्रण प्रस्तुत किया है। उन्होंने पुरुष वर्चस्ववादी समाज में नारी मुक्ति तथा उसकी गरिमा व महिमा के संदर्भ में कई प्रश्न उठाए। उन्होंने नारी-जीवन के यथार्थ को बड़ी सहजता, आत्मीयता और बारीकी के साथ उकेरते हुए प्रस्तुत किया है। स्त्री मन से जुड़ी अनुभूतियों का चित्रण, तथा भारतीय नारी के जीवन और उसकी विशेषताओं का प्रभावशाली वर्णन आपकी रचनाओं की विशेषता है।

नारी की गरिमा के प्रति जहाँ महिला साहित्यकारों ने लेखनी चलाई, वहीं पुरुष साहित्यकार भी इस संदर्भ में पीछे नहीं रहे। पुरुष प्रधान समाज में विकृत मानसिकता पर चोट करने वालों में लेखक भगवानदास मोरवाल भी आते हैं। आपने स्त्री को साहस प्रदान कर, उन्हें सक्षम बनाया है ताकि वह स्वयं हित के लिए आगे आए तथा अपने अस्तित्व को गौरवपूर्ण मंच प्रदान करे। लड़कियों के महत्व को उजागर करते हुए वह शकुंतला नामक उपन्यास के माध्यम से कहते हैं कि लड़कियां सेतु का काम करती हैं। वह दो व्यक्तियों को नहीं अपितु दो परिवारों को जोड़ती हैं। अतः कहा जा सकता है कि यदि स्त्री-पुरुष एक-दूसरे के बराबर समझें जाएं तो स्त्री परपीड़न तथा आत्मपीड़न से मुक्त हो सम्मान और गरिमा पूर्ण जीवन व्यतीत कर सकती है।

संदर्भ:

१. लाल जीवन, हिंदी साहित्य में स्त्री विमर्श. *International Journal of Advances in Social Sciences,* vol. 2, year 2014

२. चतुर्वेदी जगदीश, स्त्री अस्मिता: साहित्य और विचारधारा, भूमिका से

३. निर्मला ,पुष्पा के साहित्य में नारी चेतना मैत्रेयी ,*International Journal of Applied Research* 2017

४. पुष्पा मैत्रेयी, गुनाह-बेगुनाह, पृ. 78

५. निर्मला ,मैत्रेयी पुष्पा के साहित्य में नारी चेतना ,*International Journal of Applied Research* 2017

६. मलागी. रश्मि के, समकालीन हिंदी उपन्यासों में नारी से जुड़ा युगबोध, वितस्ता सं. 2021

प्रो. रुबी जुत्शी

हिन्दी-विभाग

कश्मीर विश्वविद्यालय,श्रीनगर कश्मीर

कश्मीरी की लोकप्रिय रामायण: रामावतारचरित

डॉ. शिबन कृष्ण रैणा

कश्मीरी भाषा-साहित्य में रामकथा-काव्य रचने की सुस्पष्ट परंपरा उन्नीसवीं शताब्दी के आस पास से देखने को मिलती है। कुल मिलाकर सात रामायणें लिखी गईं जिनके रचनाकाल के क्रम से नाम हैं-'रामावतारचरित` (१८४७ ई०),'शंकर-रामायण` (१८७०), विष्णुप्रताप रामायण'(१९०४-१४), 'आनंद रामावतारचरित'(१८८८), `रामायण-इ-शर्मा' (१९१९-२६), `ताराचंद रामायण' (१९२६-२७) तथा ``अमर-रामायण" (१९५०)। इनमें सर्वाधिक लोकप्रिय कश्मीरी की प्रथम रामायण `रामावतारचरित' है जो प्रकाशित हो चुकी है। शेष रामायणें अप्रकाशित हैं अथवा उनका उल्लेख- मात्र मिलता है। `विष्णु प्रताप रामायण' (रचयिता पं० विष्णु कौल, रचनाकाल १९०४-१९१४) की हस्तलिखित पाण्डुलिपि (कलमी-नुस्खा) उपलब्ध है और विष्णुप्रताप रामायण का आलोचनात्मक अध्ययन शीर्षक से इस रामायण पर कश्मीर विश्वविद्यालय में १९७६ में शोधकार्य भी हुआ है।

ऊपर कश्मीरी की जिन उपलब्ध अनुपलब्ध रामायणों का उल्लेख किया गया, उनमें **`रामावतारचरित'** को एक विशिष्ट स्थान प्राप्त है। भक्तिरस से ओतप्रोत रामकथा इसमें गायी गई है। `रामावतारचरित' के रचयिता कुरिगाम (कुर्यग्राम) कश्मीर के निवासी पं० प्रकाशराम हैं। १९ वीं शताब्दी के आरंभिक वर्षों में इनका आविर्भाव हुआ बताया जाता है। सन् १८८८ ई० तक वे जीवित थे। सर जार्ज ग्रियर्सन ने इनका कविता-काल कश्मीर के गवर्नर सुखजीवन (१७५४-१७६२ ई०) का समय बताया है जो सही नहीं बैठता। प्रकाशराम ने २८ वर्ष की आयु में संवत् १९०४ तदानुसार १८४७ ई० में अपनी प्रसिद्ध काव्यकृति 'रामावतार चरित` की संरचना की थी। इस कृति की एक हस्तलिखित प्रति पर संवत् १९०४ स्पष्टतया अंकित है। इस आधार पर प्रकाशराम का जन्मकाल सन् १८१९ ई० बैठता है।

प्रकाशराम भगवती त्रिपुरसुन्दरी के अनन्य भक्त थे। उन्हीं की कृपा से उन्हें वाक्-शक्ति का अपूर्व वरदान प्राप्त हुआ था। कहते हैं कि वे नित्य देवी की पूजा करते तथा उनकी आराधना में घंटों बिताते। एक दिन खूब वर्षा हो रही थी। अंधेरा घिर आया था। प्रकाशराम को दूर से एक डोली अपनी ओर आती हुई दिखाई पड़ी। डोली के वाहकों ने प्रकाशराम को आवाज़ दी। प्रकाशराम जब डोली के निकट पहुंचे तो डोली का पर्दा ऊपर उठा। डोली में साक्षात् त्रिपुरसुन्दरी विराज रही थीं। प्रकाशराम के नेत्र प्रफुल्लित हो उठे। कुछ ही क्षणों के बाद भगवती डोली सहित अन्तर्धान हो गई। भगवद्-भक्ति का अनूठा प्रसाद पाकर प्रकाशराम का तन-मन झूम-झूम कर ईश-स्तुति में रम गया। प्रकाशराम की निम्नलिखित पांच रचनाओं का उल्लेख मिलता है-
(१) रामावतारचरित, (२) लवकुश-चरित, (३) कृष्णावतार, (४) अकनन्दुन और (५) शिवलग्न।
उक्त पांच रचनाओं में से केवल 'रामावतारचरित` तथा 'लवकुश-चरित` प्रकाशित हुए हैं। 'लवकुश-चरित` 'रामावतार-चरित` के अन्त में छाप दिया गया है।

प्रकाशराम के 'रामावतार-चरित` का मूलाधार वाल्मीकि कृत रामायण तथा 'अध्यात्म रामायण है। संपूर्ण कथानक सात काण्डों में विभक्त है। 'लवकुश-चरित` अन्त में जोड़ दिया गया है। कवि ने प्रमुखत: दो प्रकार की काव्य शैलियों का प्रयोग किया है: इतिवृत्तात्मक शैली और गीति-शैली। इतिवृत्तात्मक शैली में मुख्य कथा-प्रसंग वर्णित हुए हैं तथा गीति-शैली में वन्दना-स्तुति सम्बन्धी तथा अन्य भक्ति-गीत(लीलाएं) कहे गये हैं। इन गीतों में कवि का भक्त-हृदय इतना विह्उल हो उठा है कि कहीं-कहीं पर मूल कथा-प्रसंग इस उत्कृष्ट भक्तिभावना के वेग तले दब-से गये हैं।
'रामावतार-चरित` भारतीय काव्य-शास्त्रीय परंपरानुसार महाकाव्योचित लक्षणों से युक्त है। काव्यकृति के प्रारम्भ में कवि ने ईशवंदना इस प्रकार की है:

नमो नमो गजेन्द्राय एकदंतधराय च
नमो ईश्वर पुत्राय श्रीगणेशाय नमो नम:,
गोडन्य सपनुन शरण श्री राज गणीशस
करान युस छु रख्या यथ मनुष्य लूकस,
दोयिम कर सतगोरस पननिस नमस्कार
दियि सुय गोर पनुन येमि बवसरि तार।(पृ० २७)

(सर्वप्रथम गणेशजी की शरण में जाएं जो इस मनुष्य-लोक की रक्षा करते हैं। तत्पश्चात् सत्गुरू को नमस्कार करें जो इस भवसागर से पार लगाने वाले हैं।)

तुलसी की तरह ही प्रकाशराम की भक्ति दास्य-भाव की है। इसी से पूरी रामायण में वे कवि कम और भक्त अधिक दिखते है। 'रामावतारचरित` में सम्मिलित स्तुतियों, भक्ति गीतों, प्रार्थनाओं आदि से यह बात स्पष्ट हो जाती है। ध्यान से देखा जाए तो प्रकाशराम ने संपूर्ण रामकथा को एक आध्यात्मिक-रूपक के रूप में परिकल्पित किया है जिसके अनुसार प्राय: सभी मुख्य पात्र और कथासूत्र प्रतीकात्मक आयाम ग्रहण करते हैं। सत् और असत् का शाश्वत द्वन्द्व इस रूपक के केन्द्र में है। **'रामायनुक मतलब** (रामायण का मतलब) प्रसंग में कवि की ये पंक्तियां द्रष्टव्य हैं:

गोरव गंडमच छि वथ, बोज़ कन दार,
छु क्या रोज़ुन, छु बोज़ुन रामावतार।
ति बोज़नअ सत्य बोंदस आनंद आसी,
यि कथ रठ याद, ईशर व्याद कासी।
ति जान्नख पानु दयगत क्या चेह हावी,
कत्युक ओसुख चे,कोत-कोत वातनावी। (पृ० ३३)

(गुरूओं ने एक सत्पथ तैयार किया है, ज़रा कान लगाकर इसे सुन। यहां कुछ भी नहीं रहेगा, बस रहेगी रामवतार की कथा। इसे सुनकर हृदय आनंदित हो

जाएगा, यह बात तू याद रख। इससे सारी व्याधियां दूर हो जाएंगी और तू स्वयं जान जाएगा कि प्रभु-कृपा से तू कहां से कहां पहुंच जाएगा।)
एक अन्य स्थान पर कवि कहता है--

सोयछ सीता सतुक सोथ रामअ लख्यमन
ह्यमथ हलूमत असत रावुन दोरज़न। (पृ० ३१)

(सु-इच्छा सीता है, सत्य का सेतु राम व लक्ष्मण हैं। हिम्मत हनुमान तथा असत्य रूपी दुर्जन रावण है।)

प्रकाशराम के राम लोक-रक्षक, भू-उद्धारक और पाप-निवारक हैं। वे दशरथ-पुत्र होते हुए भी विष्णु के अवतार हैं। पृथ्वी पर पाप का अन्त करने के लिए ही उन्होंने अवतार धारण किया है:-

रावण के हेतु अवतारी बनकर आए
भूमि का भार हरने को आए(पृ० १२०)

'रामावतरचरित` की कथा 'शिव-पार्वती` संवाद से प्रारंभ होती है। पूरी कथा आठ काण्डों: बालकाण्ड, आयोध्याकाण्ड, अरण्य-काण्ड, किष्किन्धा-काण्ड, सुन्दर-काण्ड, युद्ध-काण्ड उत्तर काण्ड तथा लवकुश-काण्ड में विभाजित है। इन काण्डों के अन्तर्गत मुख्य कथा-बिन्दुओं को मसनवी-शैली के अनुरूप विभिन्न उपशीर्षकों में बांटा गया है। इन उपशीर्षकों की कुल संख्या ५६ है। कुछ उपशीर्षकों के नामकरण देखिए: विश्वामित्र के यज्ञ की रक्षा, भरत को खड़ाऊं देना, शूर्पनखा को सज़ा देना, जटायु से युद्ध और सीता का कैद होना, लंका की तरफ फौजकशी, कुंभकर्ण के साथ जंग, मक्केश्वर का किस्सा, सीता को जलावतन करना आदि।

'रामावतारचरित` में वर्णित अधिकांश प्रसंग अतीव मार्मिक एवं हृदय-ग्राही बन पडे हैं जिससे कवि की विलक्षण काव्यप्रतिभा का परिचय मिल जाता है। अयोध्यापति दशरथ की संतान-कामना, कामनापूर्त्ति के लिए

व्रतादि रखना, स्वप्न में भगवान विष्णु द्वारा वरदान देना आदि प्रसंग इस कश्मीरी रामायण में यों भावपूर्ण ढंग से वर्णित हुए हैं-

"वोथन सुलि प्रथ प्रबातन नित्य करान श्रान
रछन जोगेन, गोसान्यन सत्य थवान ओस ज़ान,
स्यठा रातस-दोहस लीला करान ओस
शरण सपनुन नारायण पानय टोठ्योस।(पृ० ३७)

(राजा दशरथ नित्य प्रभात-वेला में जागकर स्नानादि करते तथा साधु-सन्तों और जोगियों के पास आशीर्वाद लेने जाते। पुत्रासुख के अभाव में उनका मन सदैव चंचल रहता। एक रात स्वप्न में नारायण/विष्णु ने उन्हें स्वयं दर्शन दिए तथा कहा कि मैं शीघ्र तुम्हारे घर में जन्म ले रहा हूं।) वचनबद्धता के प्रश्न को लेकर दशरथ और कैकेयी के बीच जो परिसंवाद होता है, उसमें एक पित्तहृदय की शोकाकुल/वात्सल्ययुक्त भावाभिव्यक्तियों को मूर्त्तता प्राप्त हुई है-

युथुय बूज़िथ राज़ु बुथकिन्य पथर प्यव
त्युथुय पुथ साहिब ज़ोनुख सपुन शव,
अमा करुम ख्यमा सोज़न नु राम वनवास
मरअ तस रौस वन्य करतम तम्युक पास,
यि केंछा छुम ति सोरूय दिम ब तस
मै छुम अख रामजुव, छुम त्युतुय बस। (पृ० ७७)

(कैकेई का अंतिम कथन सुनते ही राजा लड़खड़ाते हुए अचेतावस्था में मुंह के बल ज़मीन पर गिर पड़े। दयार्द्र स्वर में उन्होंने कैकेई से विनती की-मुझपर दया कर, राम को बनवास न दिला। मैं उसके बिना ज़िन्दा न रह सकूंगा। वचन देता हूं कि मेरे पास जो कुछ भी है वह भरत को दे दूंगा।. . . मेरा तो बस एक राम ही सब कुछ है, बस एक राम जी!)

ख़ब्रर बूज़िथ गव जटायन ख़ब्ररदार
कफ़स फुटरुन त लारान गव ब यक़बार,
पुनुम चन्द्रस येलि बछुन ह्यथ चलान कीत

दौपुन तस ओय मरुत पापुक गोय हीत,
परकि दक सत्य छुस आकाशि त्रावान
ज़मीनस प्यठ अडजि छुस जोरअ फुटरावान।(पृ० १४५)

(खबर सुन सीता-हरण की/हुआ जटायु खब्ररदार,/पूनम-चन्द्र को केतु द्वारा/ग्रसित जो देखा/तो छेड़ दिया/पापी से युद्ध ज़ोरदार। 'क्यों पाप करके मृत्यु को/बुला रहा है रे मूर्ख? आज होगा अंत तेरा/ मिटेगा तू रे धूर्त!/आकाश में उछाला, भू पर पटका/पंख के धक्को से उसने/कर दिया रावण का बुरा हाल,/हड्डियों का भुरकुस निकाल/कर दिया उसका हाल बेहाल।) **(भावानुवाद इन पंक्तियों का लेखक द्वारा)**

यद्यपि 'रामावतारचरित` की मुख्य कथा का आधार वाल्मीकि कृत रामायण है, तथापि कथासूत्र को कवि ने अपनी प्रतिभा और दृष्टि के अनुरूप ढालने का प्रयास किया है। कई स्थानों पर काव्यकार ने कथा-संयोजन में किन्हीं नूतन (विलक्षण अथवा मौलिक) मान्यताओं की उद्घोषणा की है। सीता-जन्म के सम्बन्ध में कवि की मान्यता यह है कि सीता, दरअसल, रावण-मंदोदरी की पुत्री थी। मन्दोदरी एक अप्सरा थी जिसकी शादी रावण से हुई थी। उनके एक पुत्री हुई जिसे ज्योतिषियों ने रावण-कुल के लिए घातक बताया। फलस्वरूप मंदोदरी उसके जन्म लेते ही, अपने पति रावण को बताए बिना, उसे एक सन्दूक में बंदकर नदी में फिंकवा देती है। बाद में राजा जनक यज्ञ की तैयारी के दौरान नदी-किनारे उसे पाकर कृतकृत्य हो उठते हैं। तभी लंका में अपहृत सीता को देख मंदोदरी वात्सल्याधिक्य से विभोर हो उठती है। पंक्तियां देखिये:

तुजिन तमि कौछि क्यथ ह्यथ ललनोवन
गेमच कौलि यैलि लेबन लौलि क्यथ सोवुन
बुछिव तस माजि मा माज़ुक मुशुक आव
लबन यैलि छस बबन दौद ठींचि तस द्राव। (पृ० १४५)

(तब उस मंदोदरी ने उसे गोद में उठाकर झुलाया तथा पानी में फेंकी उस सीता को पुन: पाकर अपने अंक में सुलाया। अहा, अपने रक्त-मांस की गंध पाकर उस मां के स्तनों से दूध की धारा द्रुत गति से फूट पड़ी. . . .।)

'रामावतार चरित` में आई दूसरी कथा-विलक्षणता राम द्वारा सीता के परित्याग की है। सीता को वनवास दिलाने में रजक-घटना को मुख्य कारण न मानकर कवि ने सीता की छोटी ननद (?)को दोषी ठहराया है जो पति-पत्नी के पावन-प्रेम में यों फूट डालती है। एक दिन वह भाभी (सीता जी) से पूछती है कि रावण का आकार कैसा था, तनिक उसका हुलिया तो बताना। सीता जी सहज भाव से कागज़ पर रावण का एक रेखाचित्रा बना देती है जिसे ननद अपने भाई को दिखाकर पति-पत्नी के पावन-प्रेम में यों फूट डालती है:-

''दोपुन तस कुन यि वुछ बायो यि क्या छुय
दोहय सीता यथ कुन वुछिथ तुलान हुय,
मे नीमस चूरि पतअ आसि पान मारान
वदन वाराह तअ नेतरव खून हाराना (पृ० ३९९)

(रावण का चित्र दिखा कर- देखो भैया, यह क्या है! सीता इसे देख-देख रोज़ विलाप करती है। जब से मैंने यह चित्र चुरा लिया है, तब से उसकी आंखों से अश्रुधारा बहे जा रही है। यदि वह यह जान जाए कि ननद ने उसका यह कागज़ चित्र चुरा लिया है तो मुझे ज़िन्दा न छोड़ेगी . . . .।)

'रामावतारचरित` के युद्धकाण्ड प्रकरण में उपलब्ध एक अत्यन्त अद्भुत और विरल प्रसंग 'मक्केश्वर-लिंग` से सम्बंधित है जो प्राय: अन्य रामायणों में नहीं मिलता है। यह प्रसंग जितना दिलचस्प है, उतना ही गुदगुदाने वाला भी। शिव रावण की याचना करने पर उसे युद्ध में विजयी होने के लिए एक लिंग (मक्केश्वर) दे देते हैं और कहते हैं कि जा, यह तेरी रक्षा करेगा, मगर ले जाते समय इसे मार्ग में कहीं पर भी धरती पर न रखना। लिंग को अपने हाथों में आदरपूर्वक थामकर रावण आकाशमार्ग द्वारा लंका की ओर प्रयाण

करते हैं। रास्ते में उन्हें लघु-शंका की आवश्यकता होती है। वे आकाश से नीचे उतरते हैं तथा इस असमंजस में पड़ते हैं कि लिंग को वे कहां रखें? तभी ब्राह्मण-वेश में नारद मुनि वहां पर प्रगट होते हैं जो रावण की दुविधा भांप जाते हैं। रावण लिंग उनके हाथों में यह कहकर संभला जाते हैं कि वे अभी निवृत्त होकर आ रहे हैं। रावण लघुशंका से निवृत्त हो ही नहीं पाते! धारा रुकने का नाम नहीं लेती। संभवत: यह प्रभु की लीलामाया थी। काफी देर तक प्रतीक्षा करने के उपरान्त नारदजी लिंग को धरती पर रखकर चले जाते हैं। तब रावण के खूब प्रयत्न करने पर भी लिंग उस स्थान से हिलता नहीं है और इस प्रकार शिव द्वारा प्रदत्त लिंग की शक्ति का उपयोग करने से रावण वंचित हो जाते हैं। (पृ० २९५-२९७)

कुल मिलाकर 'रामावतारचरित` कश्मीरी भाषा-साहित्य में उपलब्ध रामकथा-काव्य-परंपरा का एक बहुमूल्य काव्य-ग्रन्थ है जिसमें कवि ने रामकथा को भाव-विभोर होकर गाया है। कवि की वर्णन-शैली एवं कल्पना शक्ति इतनी प्रभावशाली एवं स्थानीय रंगत से सराबोर है कि लगता है कि 'रामावतार चरित` की समस्त घटनाएं अयोध्या, जनकपुरी, लंका आदि में न घटकर कश्मीर-मंडल में ही घट रही हैं। 'रामावतारचरित` की सबसे बड़ी विशेषता यही है और यही उसे 'विशिष्ट` बनाती है।

'कश्मीरियत की अनूठी रंगत में सनी यह काव्यकृति संपूर्ण भारतीय रामकाव्य-परंपरा में अपना विशेष स्थान रखती है।

-डॉ. शिबन कृष्ण रैणा
पूर्व-अध्येता,
भारतीय उच्च अध्ययन संस्थान,
राष्ट्रपति निवास, शिमला

सेठ गोविन्ददास के नाटकों में गाँधीवाद

डॉ. शगुफ्ता नियाज़

हिन्दी नाटककार की हैसियत से सेठ गोविन्ददास बीसवीं शताब्दी के नाटककार हैं उन्होंने पौराणिक, ऐतिहासिक, सामाजिक, समस्यामूलक तथा जीवनीपरक नाटक लिखें उनके बताए आदर्श हमारे वर्तमान समय की भी आवश्यकता है। भारतीय संस्कृति का नवीनीकरण अर्थात् गाँधीवाद का प्रभाव पुष्ट रूप में उभरा है। सेठ गोविन्ददास उस आर्य परम्परा के साहित्यकार हैं, जो जीवन को आध्यात्मिक लक्ष्य पर केन्द्रीभूत करके लोक यात्रा करते हैं। आध्यात्मिकता के कारण ही सामयिक घटनाओं को एक उज्ज्वल आदर्श के 'शेड' से प्रकाशित करना इस परम्परा के साहित्यकारों का प्रयत्न रहा है। अपने देश की वर्तमान सार्वजनिक भाषा में यह परम्परा गाँधीवाद के नाम से जानी जाती है।

सेठ जी ने राष्ट्रसेवा के लिए जो त्याग दिया है उससे सभी लोग अच्छी तरह परिचत हैं उनके जैसे सम्पन्न परिवार के व्यक्ति के लिए गाँधीजी के असहयोग आन्दोलन में कूदने का मतलब था अपनी सम्पत्ति और समृद्धि की पूर्णाहूति देना और अंग्रेज़ों का कोपभाजन बनना जिनके हाथ में उस समय संपूर्ण सत्ता थी। आज़ादी की लड़ाई में उन्होंने बड़ी निष्ठा और लगन से हिस्सा लिया और अपने मार्ग से कभी नहीं हटे। सेठ गोविन्ददास ने साहित्य के सभी रूपों को अपने योगदान से समृद्ध किया। एक सच्चे गाँधीवादी की तरह उनका साहित्य हमें शान्ति और प्रेम का संदेश देता है। जवाहरलाल नेहरू के शब्दों में "सेठ गोविन्ददास हमारे पुराने साथी हैं। तीस वर्ष से अधिक हमारा साथ कांग्रेस के और देश के कामों में रहा है, आज़ादी की लड़ाई में हमेशा यह

आगे रहे। हिन्दी साहित्य और राष्ट्रभाषा हिन्दी को बढ़ाने में इन्होंने बहुत मदद की।[1]

सेठ गोविन्द दास जी गाँधीवादी विचारक थे, साथ ही राजनीति में कांग्रेस के साथ रहते हुए भी वे कला जगत के प्राणी हैं फलतः एक महान परम्परा के अनुयायी होते हुए भी उनमें जीवन और जगत को देखने की वह कलात्मक स्वतन्त्र दृष्टि भी है जो मनुष्य को कोरे नैतिक बन्धनों में ही नहीं बल्कि उसकी मनोवैज्ञानिक विवशताओं में भी देखी जा सकती है। नैतिक बन्धन (आदर्शवाद) मनुष्य की प्रवृत्तियों को कन्सेशन नहीं देता, जैसे-गाँधीवाद; किन्तु कलाकार उच्चतम आदर्श को सामने रखकर भी मनुष्य की विवश प्रवृत्तियों के प्रति उदार रहता है। यहीं पर वह यथार्थवाद को भी छू देता है। साहित्य में तीन विचारधाराएं हैं आदर्शवाद, यथार्थवाद, आदर्शोंमुख यथार्थवाद। आदर्शवाद की परम्परा में गाँधीवाद का साहित्य है आदर्श और यथार्थ के संगम में विश्व साहित्य की जो धारा बह रही है उसी के साहित्यकार हमारे यहाँ नाटकों में सेठ गोविन्ददास जी भी हैं।

उन्होंने ऐतिहासिक, सामाजिक राजनीतिक सांस्कृतिक विषयों पर 100 से अधिक नाटक और एकांकी नाटकों की रचना की है- कर्तव्य, हर्ष, प्रकाश, स्पद्र्धा, सिद्धान्त स्वातंत्र्य सेवापथ, सप्त रश्मि (एकांकी नाटक-संग्रह) अधिकार लिप्सा नहीं, वह मरा क्यों?, मानव मन, मैत्री, धोखेबाज़ कंगाल चार नाटकों का संग्रह- त्याग या ग्रहण, हिंसा या अहिंसा प्रेम या पाप, गरीबी या अमीरी पाँच नाटकों का संग्रह सुख किसमें ?, संतोष कहाँ ? महत्त्व किसे?, बड़ा पापी कौन? दो नाटकों का संग्रह दलित कुसुम, पतित-सुमन पंचभूत, चतुर्थपथ, अष्टदल, मुद्राराक्षस आदि उनके प्रमुख नाटक हैं।

"सेठ जी कांग्रेस के स्तम्भों में से एक हैं, जिन्होंने स्वतन्त्रता संग्राम की सिद्धि के लिए अपने को आत्मसमर्पित कर दिया। आन्दोलनों में सक्रिय भाग लेने के कारण ही वह बहुत बार जेल गए। जेल में उन्होंने अध्ययन-मनन, चिन्तन एवं लेखन पर्याप्त समय में मिला यही कारण है कि जेल उनके लिए सरस्वती मंदिर बन गया।

वेरियर इलियन के शब्दों में- ‘‘सेठ गोविन्ददास ने अपने जीवन के आठ वर्ष जेल में बिताए, महात्मा गांधी के सच्चे अनुयायी होने के कारण वे इस तथ्य को बिना किसी पछतावे के स्वीकार करते हैं क्योंकि वे कारावास में बिलकुल भी अशक्त नहीं हुए और उस समय को चैरासी नाटक की रचना कर उपयोगी बनाया जिसमें पाँच नाटकों के अंग्रेजी अनुवाद भी हो गए हैं। इन नाटकों की रचना हिन्दी में हुई है।

गाँधीजी ने अपने पूरे जीवन में अहिंसा का प्रयोग किया और सम्पूर्ण संसार को भी इस सिद्धान्त को अपनाने पर बल दिया। भारत में जब भी साम्प्रदायिक दंगा भड़का तो गाँधीजी ने अहिंसा से उसे शांत किया। अहिंसा एक ऐसा मार्ग है जिस पर चलकर मानव कल्याण सम्भव है। तलवार के ज़ोर से कोई वस्तु छीनी जा सकती है पर सुख शांति के लिए अहिंसा का मार्ग उत्तम है। ईश्वर ने मनुष्य को जो शक्तियाँ प्रदान की हैं उनमें अहिंसा प्रबलतम है। उनके नाटकों में बहुतायत से ऐसे उद्धरण हमें देखने को मिलते हैं जिसमें गाँधीवादी अहिंसात्मक दृष्टिकोण अपनाकर नाटकों का अन्त सुखान्त किया गया है।

विजय बेलि, हिंसा या अहिंसा नाटक में इसी भावना को केन्द्र में रखकर सेठ गोविन्ददास ने अहिंसा सन्दर्भ में भी आज इसी प्रेम की का महत्त्व दिखाया है। वर्तमान स्थिति में भी हिन्दुस्तान-पाकिस्तान को भी इसकी

आवश्यकता है। हिंसा से तो केवल हिरोशमा नागासाकी का इतिहास ही दोहराया जा सकता है। जैसे 'विजय बेलि' नाटक में सच्ची विजय प्रेम व अहिंसा से ही सम्भव है हिंसा तथा युद्ध से नहीं। एक उद्धरण उल्लेखनीय है मरते समय वह अपनी पत्नी से कहता है- "तुम ठीक कहती हो धर्म युद्ध के सदृश कोई वस्तु नहीं हिंसा से हिंसा की उत्पत्ति हो सकती है शांति की नहीं। युद्ध से संसार का कल्याणकारी साम्राज्य स्थापित नहीं हो सकता। मैं यह मानता हूँ कि संगठन का कल्याण एक सूत्र में बंधने पर ही निर्भर है। संसार का एक सूत्र में बांधना युद्ध से सम्भव नहीं- आज हो या कल- सौ वर्ष में हो या हज़ार वर्ष में हो या दस हज़ार वर्ष में मूल्य व हृदय परिवर्तन द्वारा केवल अहिंसा द्वारा ही संसार का कल्याणकारी राज्य स्थापित हो सकता है। सच्चा विजेता वही बनेगा जो संसार को युद्ध से नहीं वरन प्रेम से जीतेगा।[2]

इसी प्रकार 'हिंसा से अहिंसा' को श्रेष्ठ बताते अगला नाटक भी इस दृष्टि से उल्लेखनीय है- 'हिंसा या अहिंसा' नामक नाटक में मिल मालिकों और मिल मज़दूरों के संघर्ष को लेकर लिखा गया है। वयोवृद्ध माधवदास मिल का संस्थापक है। वह पुराने ढंग का अनुभवी महाजन है। मज़दूरों से भाईचारा जोड़कर परस्पर सद्भाव के बिना किसी अशान्ति के अपना कारोबार करता रहा है। उसका उत्तरधिकारी दुर्गादास नई शिक्षा पाए हुए आधुनिक पूँजीपति व्यापारी है। मज़दूरों को वह कीटपतंग समझता है। मज़दूरों के दो नेता वयोवृद्ध की समझदारी और अलकनंदा की संवेदना से झगड़ा निपटता नहीं। इस द्वन्द्व का अन्त त्रिलोचनपाल को गोली मारकर स्वयं आत्महत्या की परिणति में होता है। (इस नाटक में उन्होंने दिखलाया है कि वर्ग युद्ध से पूँजीवाद और श्रमवाद दोनों का नाश हो जाएगा- उत्तेजना रहित सहयोगपूर्ण स्वभाव से एक ही रोज़गार का रूपया किसी फिरके के पास बहुत ज्यादा हो

जाता है और दूसरे के पास बहुत कम आने लगता है तब उपद्रव हुए बिना नहीं रहती। बाँट-बाँटकर खाया जाता है। आदमी में जितनी आदमियत होगी, वह उतना अधिक सुदृढ़ होगा, उतनी ही कामयाब रोज़गारी ही पूँजीपतियों और श्रमिकों की समस्या सुलझ सकती है।[3] सेठ गोविन्द दास गांधीजी के दर्शन से बहुत प्रभावित थे।

गाँधीजी ने सम्पूर्ण जीवन साम्प्रदायिक एकता के लिए अर्पित किया था उनकी मृत्यु एकता के लिए वरदान है, उनके प्रयत्नों को इन शब्दों में हम समझ सकते हैं कि- "मैं उन आठ मज़दूरों को याद रखूँगा जिन्होंने यमुना के निकट ....मैदान में चिता तैयार करने में सहायता की थी। इन मज़दूरों ने चिता पर चंदन की लकड़ियाँ रखते हुए मुझे बताया था कि वे महात्मा जी से प्रेम करते थे क्योंकि वे मुलसमानों के सच्चे दोस्त थे।

गाँधीजी के सिद्धान्तों के अनुरूप ही कर्तव्य को अमरता के साथ जोड़ते हुए सेठ गोविन्द दास ने 'गांधीजी' नाटक में लिखा। "जिसकी कीर्ति नष्ट हो गई, चाहे वह जीवित दिखे, किन्तु यथार्थ में वह मरा हुआ है। हर परिस्थिति में जीवन वांछित नहीं ... मरण के पश्चात् मनुष्य कीर्ति रूप से ही जीवित रह सकता है। मैं मरण के साथ मर जाना नहीं चाहता।"[4] इन पंक्तियों में ऐसा प्रतीत होता है कि गाँधीजी का देहावसान भारत और पाकिस्तान की जनता को उस साम्प्रदायिक एकता के आदर्श की पूर्ति के लिए अपने को उत्सर्ग करने की प्रेरणा देता रहेगा जिसके लिए वे जीवित रहे और जिसके लिए प्रकट रूप से वह मरे।

गाँधीजी सभी धर्मों का समान रूप से आदर करते थे। सभी धर्मों की अच्छी बातों को अपने जीवन में उतारते थे उनका मानना था कि "दूसरे धर्मों या शास्त्रों की आलोचना करना मेरा काम नहीं है अलबत्ता यह मेरा विशेष

अधिकार होना चाहिए कि उनमें जो सचाइयाँ हों उनकी मैं घोषणा करूँ और उन पर अमल करूँ।

गाँधीजी का धर्म अत्यन्त व्यावहारिक था उनके लिए मानव सेवा सबसे बड़ धर्म था। डॉ. राधाकृष्णनन के अनुसार- ''गाँधीजी दुनिया के दुख के प्रति संवेदनशील थे वह चाहते थे कि हर आँख का आँसू पोंछ सकें।'' सभी धर्म सहनशीलता की शिक्षा देते हैं फिर भी गम्भीर विवाद उठते हैं। वर्तमान समय की आज बहुत बड़ी आवश्यकता है कि हम गाँधी के इन आदर्शों को अपनाएं कि सभी धर्मों का मूल तत्त्व एक और उसकी अनुभूति के तरीके भिन्न हैं।

सेठ गोविन्ददास पर गाँधीजी के इस दर्शन का बहुत प्रभाव था। वह 'ईद और होली' नाटक में साम्प्रदायिक दंगों पर साम्प्रदायिक सौहार्द में परिणित होते दिखाते हैं। ईद और होली एकांकी नाटक साम्प्रदायिक सौहार्द का उत्कृष्ट रूप दिखायी देता है। एक उद्धरण से स्पष्ट है कि- "खुदाबख़्श जिसने एक हिन्दू घर में आग लगाई फिर उसी में जाकर उस लड़के की जान भी बचाई। खुदाबख़्श- उस वक्त..... मैं ऐसा कर ही न सका जैसे किसी ने मुझको ऐसा करने के लिए मजबूर कर दिया। बहन यह खुदा का पैग़ाम था, खुदा का पैग़ाम।''[5] गाँधीजी जिस रूप में धर्म को समभाव दृष्टि से ग्रहण करते हैं, उसी को ग्रहण करने की प्रेरणा सेठ गोविन्ददास के नाटकों में भी मिलती है। जो वर्तमान सन्दर्भों में भी गृहणीय है।

महिला सशक्तिकरण के लिए गाँधीजी सदैव प्रयासरत रहे। इस सन्दर्भ में उनकी आत्मकथा में एक प्रसंग आया है कि 1913 के सत्याग्रह के समय तक स्त्रियों को जेल जाने से रोक रखा था यद्यपि वे अपनी पतियों के साथ सत्याग्रहों में जेल जाना चाहती थी। तभी दक्षिण अफ्रीका की एक अदालत में

एक ऐसा फैसला सामने आया कि दक्षिण अफ्रीका में केवल ईसाई धर्म के अनुसार जो विवाह है वही वैध है और रीति के विवाह में हिन्दू-मुस्लिम-फारसी सभी विवाह रदद करार दे दिए गए कितनी ही भारतीय स्त्रियों का दर्जा धर्मपत्नी का न रहा, वह सरासर रखैल माने जाने लगी। तब नारियों का बहुत बड़ा समुदाय इसके विरुद्ध सत्याग्रह के लिए मैदान में उतरा और नारियाँ जेल भी गयी। जहाँ उन्हें कठोर कार्य करने पड़े और कुछ मृत्यु को भी प्राप्त हुई पर ये बलिदान सफल हुए क्योंकि धरती आज भी सत्य के आग्रह पर ही टिकी हुई है।

'स्पद्र्धा' नाटक का दृश्य केवल एक क्लब रूम है, इसमें स्त्री सदस्याएं भी हैं। एक पुरुष सदस्य के पक्ष में निर्वाचन के खड़े होने के विवाद में सम्बन्ध में अपनी प्रतिद्वंद्विनी महिला सदस्य के विरुद्ध अपवादात्मक पर्चा बँटवा दिया। इसी पर विचार करने के लिए एक मीटिंग रखी गई है। सभी का निष्कर्ष यह होता है कि- "स्त्री जब पुरुष के क्षेत्र में प्रतिद्वंद्विता करने उतर पड़ेगी तो वह पुरुष से किसी रक्षा की आशा नहीं कर सकेगी। दोनों को अपने-अपने बूते पर ही खड़ा होना होगा।[6] सेठ गोविन्ददास ने भी स्पद्र्धा नाटक में स्त्री सशक्तिकरण के इस रूप को नवीन नाटकीय कलेवर में प्रस्तुत किया है।

गाँधीजी देश के उत्थान में नारी कल्याण के प्रबल पक्षधर थे। नारी के प्रत्येक कार्य को वह बहुत महत्त्व देते थे। उनका मानना था कि प्रत्येक कार्य सामाजिक दृष्टिकोण से महत्त्वपूर्ण है। चाहे वह घरेलू कार्य हो या दफ़्तरी। गाँधीजी इस बात को अनुभव करते थे कि स्त्रियों के अधिकार सीमित कर दिए गए हैं लेकिन वे ये भी कहते थे कि स्त्रियों को जो भी क्षमताएं हों उन्हें उसमें निष्णात होना चाहिए। वे स्त्रियों को नम्र सुशील व सच्चरित्र देखना चाहते थे स्त्री को अहिंसा की प्रतिमूर्ति मानते थे और उसके साथ अन्याय नहीं

होने देना चाहते थे। सेठ गोविन्ददास के नाटकों में भी यही भावनाएं स्पष्ट रूप में उभरी हैं।

'त्याग या ग्रहण' नाटक में गाँधीवादी और समाजवादी पात्रों को लेकर इन दोनों वादों का सिद्धान्तों की अपेक्षा आचरण का प्रत्यक्ष दर्शन कराया है- "धर्मराज गाँधीवादी युवक है, नीतिराज समाजवादी है। उसके प्रेम में धोखा पाकर गर्भवती विमला का साथ देने के लिए धर्मध्वज उसकी रक्षा के लिए उद्धृत होता है और विरोधियों द्वारा ईंट पत्थर खाकर भी वह विमला को बचा लेता है। गोविन्ददास जी ने दिखलाया है कि जीवन का सौन्दर्य आत्मत्याग में है, आत्मलोलुपता में नहीं। सच्चे आदर्शवादी अपने को संकट में डालकर भी दूसरे की रक्षा करते हैं। उन्होंने समाज के प्रति विरक्ति नहीं दिखाई है बल्कि धर्मध्वज के रूप में यह सन्देश दिया है कि समाजवाद को गाँधीवाद द्वारा आचरण की मर्यादा सीखनी होगी।[7] गाँधी जी समाज में फैली विधवा प्रथा, पर्दाप्रथा दोनों के प्रबल आलोचक थे। वे स्त्रियों को उनके जीने के सम्पूर्ण अधिकारों को देने के पक्षधर थे। सेठ गोविन्ददास ने गांधी जी से प्रभावित होकर इसी विषय को अन्तर्गत विधवा जीवन की समस्याओं का चित्रण अपने नाटक, 'दलित कुसुम', में किया है।

'दलित कुसुम' नाटक हिन्दू समाज की विधवाओं की वर्तमान स्थिति पर प्रकाश डालता है। बाल विधवा है माँ से उसका वैधव्य देखा नहीं जाता और वह मदन नामक युवक से उसका विवाह तय करती है तभी मदन को किसी दूसरे लड़की पक्ष से पच्चीस हज़ार नकद व दहेज का प्रस्ताव मिलता है। वह प्रलोभन में कुसुम से पीछा छुड़ाने के लिए योजना सोच ही रहा होता है कि मन्दिर में महन्त की कुदृष्टि सुमन पर पड़ती है। मदन को शादी न करने का बहाना मिल जाता है और वह उसको दुश्चरित्रा कह कर चला जाता है। इस

बदनामी के बाद कुसुम को कहीं भी स्थान नहीं मिल पाता वह आत्महत्या के लिए जाती है परन्तु बच जाती है उस पर मुकदमा चलता है। वही बयान देते समय उसका हार्टफेल हो जाता है। हिन्दू विधवा की हमारे समाज में क्या दयनीय स्थिति है समाज, धर्म, कानून उसके लिए कहीं भी स्थान नहीं है।[8]

नारी के संबंध में गाँधीजी कहा करते थे कि वह श्रद्धा की प्रतिमूर्ति है, धैर्य की संवाहिका है, स्त्री अहिंसा की प्रतिमूर्ति अर्थात् असीम प्यार, जिसका अर्थ है कष्ट सहन की असीम क्षमता। वह पुरुषों की माता है, उसके अलावा कोई इतना कष्ट सहन करने की क्षमता नहीं रखता। वह बच्चे को नौ महीने तक पेट में पालती है बच्चे के जन्म की खुशी में वह सारे कष्टों को भूल जाती है। स्त्री अपने इस प्रेम को सारी मानवता पर बिखेर देती है।

परन्तु यदि बेटी जन्मे तो पुरुष का कठोर व्यवहार नारी को बहुत दुर्बल बना देता है इसी समस्या को सेठ गोविन्ददास ने 'शाप और वर' में उठाया है।

होश आने पर जो पहला स्वर मैंने सुना वह तुम्हारी माँ का था 'लड़की हुई है।'... उस स्वर में कैसी वेदना भरी हुई थी.... मानो भूकम्प हो गया है। आग बरसी है। बिजली गिरी है.... लड़की इतनी तिरस्कृत वस्तु है इतनी बुरी कि कोई उसकी ओर आँख उठाकर ही नहीं देखता था।

यह एक पात्री नाटक है जिसमें नायिका का मर्मांतक अन्त दिखाया गया है। प्रसव के उपरान्त मृत्यु से पहले वह थोड़े समय में अपनी सारी वेदना को अपने पति से व्यक्त करती है। शायद मैं जा रही हूँ.. सुनो जाते जाते शाप देती हूँ तुम्हारा वंश निर्वंश हो जाए।[9]

अतः सेठ गोविन्ददास जी ने नारी के दर्द को अपने नाटकों में उठाकर समाज को सचेत किया है। गाँधीजी की आध्यात्मिक जीवन में ज्ञान, भक्ति व

कर्म को आधार माना। सेठजी ने भी अपने नाटकों में इसी प्रभाव को ग्रहण किया है।

'सुख किसमें'? इस नाटक में पूँजीपति विलासी सृष्टिनाथ को व्यापार में घाटा होता है। उसका रंगमहल उजड़ जाता है। वह गंगा में डूबकर आत्महत्या करना चाहता है परन्तु एक परिव्राजक उसे इससे रोक संन्यास की दीक्षा देता है परन्तु उसका विलासी मन उसमें रमता नहीं प्रेमपूर्णा नामक स्त्री से विवाह व एक बच्ची के साथ वह सुखी जीवन जी रहा होता है तभी उस बच्ची का देहान्त हो जाता है और दोनों पति-पत्नी विकल-विह्वल अध्यात्म पथ अपनाते हैं। इसमें सेठ गोविन्ददास ने यह दिखा कि वास्तव में वैभव का विलास इन्द्रधनुष की तरह उड़ जाता है किन्तु जीवन की सात्विकता चाँदनी की तरह हृदय को शीतल करती रहती है। 'सुख किसमें'? इस प्रश्न का उत्तर लेखक ने एषणाओं से मुक्त होने में दिखलाया है। यह नाटक विश्वबोध उत्पन्न करता है।

'संतोष कहाँ'? नाटक में मनसाराम गरीब से अमीर हुआ धनाढ्य है जिसे जीवन की किसी भी स्थिति में सन्तोष नहीं है न गरीबी न अमीरी यहाँ तक कि गाँधीजी के आदर्शों पर स्वनिर्मित आश्रम में भी उसे सन्तोष नहीं मिलता। कारण यह है कि जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में वह महत्वाकांक्षी होकर प्रवेश करता है सेठ गोविन्ददास महत्वाकांक्षा के लिए नहीं बल्कि कर्तव्य के लिए कर्तव्य करने में ही सन्तोष से जीवन को मनोहर व सफल करने के पक्ष में है।[11]

'सुख किसमें'? विश्वबोध की स्थापना करता है तो 'सन्तोष कहाँ'? नाटक विश्वबोध के बाद का कर्तव्य उपस्थित करता है। एक आत्म चिन्तन दूसरा लोक चिंतन प्रस्तुत करते हैं।

'सिद्धान्त स्वातंत्र्य' में लेखक ने एक ऐसे गांधीवादी के सर्मथक पुत्र को दिखाया है जो अपने पिता से झगड़ कर देश के राजनीतिक आन्दोलनों में भाग लेता है यह युवक थोड़े समय बाद सत्याग्रह और असहयोग के प्रति असफलता घोषित कर सरकार का प्रिय पात्र बन जाता है। अन्ततः मिनिस्टर बन जाता है उसके पुत्र को आन्दोलन में गोली लग जाती है और वह मूर्च्छा में चला जाता है। नायक आन्दोलन में उसी कर्मठता से जुड़ा रहता है और कहता है कि मैं मस्तिष्क से शासित होता हूँ, उसके वृद्ध पिता कहते हैं कि यह कैसा सिद्धान्त स्वातंत्र्य है।[12]

'महत्त्व किसे'? नाटक में कर्मचन्द त्यागी ह्दय का धन कुबेर है। देश-सेवा में वैभव-विहीन हो जाता हैं जिससे जो लोग उससे जुड़े आगे पीछे रहते थे वे दूर होने लगते हैं और बदनामी करने लगते हैं कर्मचन्द सच्चाई के पथ पर अडिग है। वह दुरंगी दुनिया को देख हतप्रभ है। पत्नी व्यापारयादि में सहायता कर पति की खोई वैभव कीर्ति को पुनः प्राप्त कर लेती है तो लोग फिर आसपास यशोगान के लिए आ जाते हैं। सेठ गोविन्ददास ने का लक्ष्य इस नाटक में यह दिखाना है कि मनुष्य का ह्दय महत्त्वपूर्ण है न कि कान, भाड़े के टट्टुओं की प्रशंसा निन्दा का कोई मोल नहीं है। प्रश्न यह है कि 'महत्व किसे'? त्याग को या धन को?

'प्रकाश' सामाजिक नाटक है। प्रकाश गाँधीवाद के रंग में रंगा है। सत्याग्रह उसका ब्रह्मास्त्र है। गवर्नर साहब को दी जा रही एक पार्टी में दो प्रकार का प्रबन्ध है एक स्वदेशी मिठाई, नमकीन वाला, दूसरा विलायती केक बिस्कुट आदि वाला। गवर्नर के आने पर प्रकाश इस भेदभाव की कड़ी आलोचना करता हुआ एक प्रभावमयी वक्ता झाड़ता है और स्वदेशी अंश वाले प्रायः सभी सज्जन पार्टी का बहिष्कार करके चले जाते हैं रंग फीका हो

जाता है। नाटक के अन्त में जब प्रकाश अपना एक आदर्श नेता के रूप में सामने आता है और राजा अजयसिंह जेल भेज दिया जाता है। अन्त में उन्हें पता चलता है कि प्रकाश उन्हीं का औरस पुत्र है जिसकी माँ को मिथ्या आशंका पर उन्होंने घर से निकाल दिया था।[13]

गांधीजी ने हिन्दी को राष्ट्रभाषा का दर्जा दिलाने के लिए जो भागीरथ प्रयत्न किए। उसके फलस्वरूप हम आज हिंदी को राष्ट्रभाषा के रूप में पाते हैं। राष्ट्रभाषा के लिए गाँधीजी हिंदी या उर्दू शब्द की अपेक्षा हिंदुस्तानी शब्द का प्रयोग उचित समझते थे। गाँधीजी ने बार-बार हिंदी को परिभाषित करने का प्रयत्न किया। उनके अनुसार हिंदी उस भाषा का नाम है जिसे हिंदू और मुसलमान कुदरती तौर पर बगैर प्रयत्न के बोलते हैं। हिंदुस्तानी और उर्दू में कोई फर्क नहीं है।

गाँधीजी के दो मूलभूत सिद्धान्त थे- कताई और हिंदी सीखना उन्होंने कहा कि "यदि मुझे अकेले छोड़ दिया जाए तो आप मुझे अपनी शक्ति भर सूत कातने और दत्तचित्त होकर हिंदुस्तानी पुस्तकों को पढ़ते हुए ही पाएंगे।[14]

उनके विचार में हिंदी ही राष्ट्रभाषा हो सकती है क्योंकि राष्ट्रभाषा के पद पर आरूढ़ होने के लिए यह आवश्यक है सर्वसाधारण उस भाषा को आसानी से समझ सके यह गुण सिर्फ हिंदी में ही है। सेठ गोविन्ददास महात्मा गाँधी के अनुयायी हैं और हिन्दी भाषा के महान सर्वमान्य विद्वान हैं। हिन्दी को राष्ट्रभाषा का पद दिलाने के लिए उन्होंने समस्त भारत में प्रचार किया। संविधान परिषद् में इसके लिए संघर्ष किया और हिन्दी साहित्य सम्मेलन के अध्यक्ष के रूप में समस्त भारत का भ्रमण किया।

सेठ गोविन्ददास ने अखिल भारतीय स्तर पर समस्त भाषा-भाषी विद्वानों का परि-सम्मेलन आयोजित किया और संविधान में राष्ट्रभाषा के रूप

में हिन्दी व अहिन्दी भाषा विधेयकों को स्वीकार कराने के निमित्त बाध्य किया। यदि गाँधी के बाद राष्ट्र निर्माण के निमित्त जो स्थान नेहरू का है वहाँ हिन्दी साहित्य में उसी प्रकार का स्थान राजर्षि टंडन बाद महाप्राण गोविन्ददास का है।

इस प्रकार गाँधी जी का सम्पूर्ण जीवन दर्शन सेठ गोविंददास के जीवन और साहित्य को प्रकाशित करता है क्योंकि वैभवपूर्ण जीवन मिलने के बाद भी उसे अस्वीकार कर वे गाँधी के अनुयायी बनकर जनता जनार्दन में जा मिलें।

आधार ग्रन्थ

1. सेठ गोविन्द दास नाट्य कला तथा कृतियाँ, रामचरण महेन्द्र, भारती साहित्य मन्दिर - फवारा, दिल्ली, 1956
2. हर्ष गोविन्द दास, भारतीय साहित्य मन्दिर, 1961
3. स्नेह या स्वर्ग, भारतीय विश्व प्रकाशन, दिल्ली
4. गोविन्द दास ग्रंथावली, भारतीय साहित्य मन्दिर, 1957
5. हिन्दी के विकास में महात्मा गांधी का योगदान (लेख) डा. मीना गौड, साभा इंटरनेट

संदर्भ-

1. भूमिका
2. विजय बेलि, पृ0 61
3. हिंसा से अहिंसा, पृ0 165
4. गांधीजी, पृ0 125

5. ईद और होली, पृ0 187
6. स्पृद्धा, पृ0 183
7. त्याग या ग्रहण, पृ0 161
8. दलित कुसुम, पृ0 149
9. शाप और वर, पृ0 198
10. सुख किसमें? पृ0 171
11. सन्तोष कहाँ? पृ0 169
12. सिद्धान्त और स्वातन्त्रय, पृ0 147
13. प्रकाश, पृ0 144
14. गांधीजी, पृ0 61

डॉ. शगुफ्ता नियाज़
एसोसिएट प्रोफेसर
हिन्दी विभाग
वीमेंस कालेज, ए०एम०यू०

कश्मीर के आलंकारिक आचार्य

डॉ. भारतेंदु कुमार पाठक
एवं
डॉ. वनीत कौर

कश्मीर प्राचीन काल से संस्कृति साहित्य व कला का केंद्र रहा है। "कश्मीर को यदि सारस्वत प्रदेश कहा जाए तो अतिश्योक्ति नहीं होगी। समीक्षा का श्री गणेश यहीं क्यों हुआ? कश्मीर में प्रकृति-सौंदर्य सर्वाधिक है अर्थात् जिस स्थान पर प्रकृति-सौंदर्य होगा, वहाँ कविता आएगी व जब कविता आएगी तो समीक्षा होगी ही होगी?"

आचार्य भामह- इस प्रदेश में प्रथमत: काव्यशास्त्र पर आचार्य भामह ने काव्यालंकार नामक पुस्तक की रचना की थी। काव्यालंकार में आचार्य भामह की अलंकारवादी दृष्टि व्यक्त है। यह ग्रंथ 'षष्ठ परिच्छेद' में समाप्त हुआ है। "प्रथम परिच्छेद में काव्य के प्रयोजन, हेतु, लक्षण, भेद इत्यादि सामान्य विषय निरुपित है; द्वितीय में गुण और अलंकार; तृतीय में अलंकार, चतुर्थ में दोष, पंचम में न्याय-विरोधी दोष और षष्ठ में शब्द शुद्धि।"[1]

आचार्य उद्भट्ट- भामह के पश्चात उद्भट्ट नामक आचार्य ने 'काव्यालंकार सार संग्रह' नामक पुस्तक की रचना की। "उद्भट्ट अपने समय के एक मान्य आलंकारिक हैं। इनकी मान्यताओं से प्रभावित एक सम्प्रदाय ही था, जो ओद्भट्ट सम्प्रदाय के नाम से ख्यात हैं।"[2] यह ग्रंथ षष्ठ वर्ग में विभाजित है।

प्रतीहारेन्दुराज- इन्होंने लघुवृत्ति नामक टीका रचकर इस परम्परा को गतिशील रखा। "इन्दुराज प्रणीत यह एक विद्वतापूर्ण एवं महत्वपूर्ण टीका है। कारिकाओं की व्याख्या विलक्षण एवं आकर्षक ढंग से की गई है। भाषा प्रवाहमय एवं प्रांजल है। पद्धति तर्क संगत, तलस्पर्शी एवं लोचदार है। प्रत्येक अलंकार के लक्षण की व्याख्या उसके एक-एक पद की सार्थकता

स्पष्ट करते हुए की गई है।"[3] यहाँ यह कहा जा रहा है कि प्रतीहारेन्दुराज ने उद्भट्ट के महत्त्व को कई गुना बढ़ा दिया है।

आचार्य मुकुल भट्ट- "एक छोटी सी कृति 'अभिधावृति मात्रिका' की चर्चा यहाँ अपेक्षित है। इसमें केवल पन्द्रह कारिकाएँ हैं जिनपर कारिकाकार की वृति भी है। कारिकाकार मुकुलभट्ट कल्लट के पुत्र थे।"[4] यह पुस्तक प्रत्यक्षत: शब्द शक्ति पर आधारित है, किन्तु अप्रत्यक्ष रूप से अलंकार समर्थक भी।

आचार्य वामन- "आचार्य वामन राष्ट्रकूट वंश में उत्पन्न काश्मीर-नरेश जयापीड के सभापंडित और मंत्री थे। इन्होंने काव्यालंकार सूत्र नामक ग्रंथ में अलंकारशास्त्र के समस्त सिद्धांतों का विवेचन पांच अधिकरणों में सूत्र रूप में किया है।"[5]

आचार्य रुय्यक- आचार्य रुय्यक ने 'अलंकार सर्वस्व' की रचना आलंकारिक परम्परा को गतिशील रखा है। राजानक इनकी उपाधि थी जिस पर आचार्य जयरथ ने विमर्शिनी टीका रची है।

आचार्य महिम भट्ट- "व्यक्ति विवेक मूलतः संस्कृत भाषा में लिखा हुआ एक काव्यशास्त्रीय ग्रंथ है। इसके रचयिता महिमाचार्य हैं। उनके पिता का नाम धौर्य था और गुरु का श्यामलिका।"[6]

सारांशत: कह सकते हैं कि कश्मीरी आचार्य ने अलंकार तत्व को व्यापक रूप में ग्रहण किया है, जो कालान्तर में ध्वनि, वक्रोक्ति व रस के प्रभाव में संकुचित होता गया है।

संदर्भ-

1. काव्यालंकार – डॉ० देवेन्द्रनाथ शर्मा, पृ०-01, संस्करण- 2024 बिहार राष्ट्र भाषा परिषद, पटना।

2. काव्यालंकार सार संग्रह- डॉ० राममूर्ति त्रिपाठी, पृ०-05

3. काव्यालंकार सार संग्रह एवं लघुवृत्ति की व्याख्या- डॉ० राममूर्ति त्रिपाठी, पृ०-41, संस्करण-1966, हिंदी साहित्य सम्मलेन, प्रयाग।

4. काव्यालंकार- रुद्रट- रामदेव शुक्ल,पृ-42, संस्करण-2014, चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी।

5. काव्यालंकार सूत्राणि- हरगोविंद शास्त्री, पृ०- 5(भूमिका), संस्करण-2005 ई०, चौखम्बा संस्कृत भवन, वाराणसी।

6. व्यक्ति विवेक –महिम भट्ट- रेवा प्रसाद द्विवेदी, पृ०-7-11(भूमिका), चौखम्बा संस्कृत भवन, वाराणसी।

डॉ. भारतेंदु कुमार पाठक
सहायक आचार्य
स्नातकोत्तर हिंदी विभाग
कश्मीर विश्विद्यालय हज़रतबल, श्रीनगर
दूरभाष- 7889760568
ई-मेल-pathakupandkashmir@gmail.com

डॉ. वनीत कौर
पूर्व शोध छात्रा, हिंदी विभाग
कश्मीर विश्विद्यालय हज़रतबल, श्रीनगर

श्रीरामचरितमानस की भाषा का भाषावैज्ञानिक अध्ययन

डॉ. आलोक कुमार सिंह

सारांश

श्रीरामचरितमानस एक महाकाव्य है जो सन् 1574 ई. में संत तुलसीदास द्वारा लिखा गया था। यह काव्य मुख्य रूप से अवधी भाषा में लिखा गया है, जो कि उत्तर भारत में बोली जाने वाली एक प्रमुख भाषा है। श्रीरामचरितमानस की भाषा का विशेष महत्व है। इसमें सरलता और अभिव्यक्ति की अद्वितीयता है। तुलसीदास ने इस काव्य को आम लोगों तक पहुंचाने के लिए सरल, सुगम और संवेदनशील भाषा का प्रयोग किया है। भाषा में सुधा, गीति, छंद, और भावों का सम्मिलन है, जो इसे एक अत्यन्त प्रभावशाली और साहित्यिक अनुभव बनाता है। इस काव्य में संस्कृत, प्राकृत, अपभ्रंश और अन्य भारतीय भाषाओं के शब्दों का प्रयोग हुआ है। तुलसीदास ने साहित्यिक समृद्धि के लिए भाषा के विविधता का सशक्त उपयोग किया है। श्रीरामचरितमानस में भाषा की सादगी, व्यावसायिकता, और उत्तम व्याकरणिक गुणधर्मों का ध्यान देने से यह एक महत्वपूर्ण साहित्यिक और भाषाई कीर्ति हासिल करता है। श्रीरामचरितमानस की भाषा ने व्यावसायिकता के साथ ही रस, भावना और धार्मिकता को भी सुंदरता से प्रकट किया है। इस ग्रंथ का भाषा वैज्ञानिक अध्ययन करने से न केवल भाषा की विविधता और उसकी सौंदर्यता का पता चलता है, बल्कि उस समय के सांस्कृतिक और सामाजिक परिप्रेक्ष्य को भी समझा जा सकता है। इस महाकाव्य की भाषा, जो अवधी है उस पर भाषावैज्ञानिक दृष्टिकोण से अध्ययन करना अत्यंत रोचक है। अवधी की विशेषताएं, तुलसीदास के भाषा प्रयोग, और उनके द्वारा निर्मित शैली इस ग्रंथ को विशिष्ट बनाते हैं। यह ग्रंथ भाषावैज्ञानिक अध्ययन के लिए भी एक महत्वपूर्ण स्रोत है। इसमें भाषा का उपयोग, शैली, व्याकरण, शब्दावली और वाक्य निर्माण के कई पहलू हैं। यह

ग्रंथ उस समय की सांस्कृतिक, सामाजिक, और धार्मिक परिप्रेक्ष्य को प्रतिबिम्बित करता है और हिन्दी भाषा के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

मुख्य शब्द : श्रीरामचरितमानस, भाषावैज्ञानिक, भाषा प्रयोग, शब्द, अवधी, ग्रंथ।

श्रीरामचरितमानस की भाषा का अध्ययन हमें भाषा के उपयोग, व्याकरण, शैली, शब्द संग्रह और संदर्भों के साथ गहराई से समझने का अवसर प्रदान करता है। श्रीरामचरितमानस की भाषा का अध्ययन करते समय हमें इसमें उपयोग किए गए व्याकरणीय सिद्धांतों, वाक्य-रचना के प्रकार और शब्दावली के प्रमुख शब्दों का अध्ययन करने का मौका मिलता है। तुलसीदास ने अपनी रचना में अनेक भाषाई और साहित्यिक युक्तियों का उपयोग किया है, जिससे इसका भाषावैज्ञानिक अध्ययन विशेष रूप से महत्वपूर्ण होता है। यह ग्रंथ अन्य ग्रंथों की भांति केवल धार्मिक और सामाजिक पहलुओं का ही विश्लेषण नहीं करता, बल्कि भाषा और साहित्य के क्षेत्र में भी अद्वितीय महत्व रखता है।

श्रीरामचरितमानस में भाषा का प्रयोग बहुत ही समृद्ध और उत्तम ढंग से किया गया है। इस ग्रंथ में प्रयुक्त भाषा की विशेषताएँ, व्याकरण के नियम, वाक्य रचना और समास के प्रकारों का अध्ययन किया जा सकता है। तुलसीदास ने अपनी रचना में विविधता, व्याकरण की नियमितता और सुन्दर भाषा का प्रयोग किया है। भाषा के प्रयोग की विविधता को देखते हुए हम उन्हें विभिन्न वर्गों और पात्रों की भाषा के माध्यम से समझ सकते हैं। इस ग्रंथ में राजा, योगी, संत और साधुओं की भाषा और व्यवहार का विवरण है जो इसे एक अद्वितीय भाषाई अध्ययन का विषय बनाता है। इसके अतिरिक्त ग्रंथ में उपयुक्त शब्दों का विशेष अध्ययन करके हम उनके अर्थ और प्रयोग को समझ सकते हैं। तुलसीदास ने अपनी रचना में उच्च काव्य स्तर के शब्द संग्रह

का प्रयोग किया है। श्रीरामचरितमानस की भाषा के भाषावैज्ञानिक अध्ययन से हमें ग्रंथ के साहित्यिक महत्व को समझने में सहायता मिलती है। इस अध्ययन से हम ग्रंथ की भाषा की महत्वपूर्ण विशेषताओं को समझ सकते हैं और हमें भाषा और साहित्य के क्षेत्र में विस्तार से विचार करने की प्रेरणा मिलती है।

श्रीरामचरितमानस की भाषा का भाषावैज्ञानिक अध्ययन करने के लिए हमें विषय को संक्षेप में समझना और मुख्य बिंदुओं को उभारना होगा जिसके लिए हम निम्नलिखित विषयों का समावेश कर सकते हैं- श्रीरामचरितमानस में प्रयुक्त भाषा की विशेषताएँ, व्याकरण के नियम, वाक्य रचना और समास के प्रकारों का अध्ययन। ग्रंथ में भाषा का प्रयोग किस प्रकार से किया गया है, इसका विवेचन, उदाहरण के रूप में, व्यंग्य, अलंकार और अन्य साहित्यिक उपकरणों का उपयोग कैसे किया गया है। ग्रंथ में प्रयुक्त शब्दों का विशेष अध्ययन, उनके अर्थ और प्रयोग का विश्लेषण। भाषा की समृद्धता और विविधता के प्रकारों का अध्ययन। भाषा के उपयोग को धार्मिक और सांस्कृतिक परिप्रेक्ष्य से देखें जैसे धर्म, आध्यात्मिकता और सामाजिक मूल्यों का प्रतिबिम्ब कैसे दिखाया गया है। श्रीरामचरितमानस में व्याकरण के नियमों का पालन कैसे किया गया है। अद्वितीय शब्द संग्रह का अध्ययन करना और उनका अर्थ और प्रयोग विश्लेषण करना। इन सभी पहलुओं का विस्तृत अध्ययन कर, हम श्रीरामचरितमानस की भाषा के भाषावैज्ञानिक पहलुओं को समझ सकते हैं और उसका महत्वपूर्ण योगदान भी देख सकते हैं।

श्रीरामचरितमानस में विविधता और विशेषता के साथ भाषा का प्रयोग किया गया है। वात्सल्य, भक्ति और दृढ़ संवेदनशीलता के साथ भावनाओं का वर्णन किया गया है। इसका अध्ययन कर हम भावनाओं के प्रकार और उनके व्यक्तिगत अनुभवों को समझ सकते हैं। तुलसीदास जी ने व्याकरण के नियमों का ध्यान रखा है, जिससे भाषा का प्रयोग सही और सुगम होता है। वाक्य निर्माण, संज्ञाओं का प्रयोग, संधि और विराम चिन्हों का

प्रयोग उनके लेखन में महत्वपूर्ण है। श्रीरामचरितमानस में विभिन्न वर्गों के लोगों की भाषा और व्यवहार का विवरण किया गया है। इसमें राजा, योगी, संत और साधुओं की भाषा और व्यवहार का अद्वितीय अध्ययन करना महत्वपूर्ण है। तुलसीदास ने अपनी रचना में उच्च काव्य स्तर के शब्द संग्रह का प्रयोग किया है। इसका अध्ययन करके हम उनके शब्द संग्रह की उत्तमता और उनके प्रयोग के प्रकार को समझ सकते हैं। श्रीरामचरितमानस में उपयुक्त भाषा का प्रयोग इस प्रकार किया गया है कि यह साहित्यिक महत्व को बनाए रखते हुए भी साधारण जनता को समझने में आसान हो। इस ग्रंथ के भाषावैज्ञानिक अध्ययन में हमें इन सभी पहलुओं का ध्यान देना चाहिए ताकि हम इस ग्रंथ की भाषा की महत्वपूर्ण विशेषताओं को समझ सकें।

भाषा की संरचना

श्रीरामचरितमानस में प्रयुक्त भाषा अवधी है, जो हिंदी की एक उपभाषा है। अवधी भाषा की अपनी विशेषताएँ हैं, जो इसे हिंदी से अलग बनाती हैं। तुलसीदास ने इस भाषा का प्रयोग कर एक ओर जहाँ ग्रामीण और शहरी जीवन को जोड़ा है, वहीं दूसरी ओर इसे सरल और ग्राह्य बनाया है।

अवधी भाषा की विशेषताएँ

ध्वन्यात्मकता

अवधी भाषा की ध्वन्यात्मक विशेषताएँ इसे सजीव और प्रभावशाली बनाती हैं। इसमें विशेषतः स्वर और व्यंजन ध्वनियाँ मिलकर एक संगीतात्मक धारा उत्पन्न करती हैं।

शब्द निर्माण

अवधी में शब्द निर्माण की प्रक्रिया हिंदी से थोड़ी भिन्न है। इसमें तत्सम और तद्भव शब्दों का समायोजन देखा जाता है।

वाक्य संरचना

अवधी में वाक्य संरचना सरल और प्रवाहमयी है, जिससे पाठक और श्रोता दोनों को समझने में आसानी होती है।

श्रीरामचरितमानस में भाषा का प्रयोग

काव्य की भाषा

तुलसीदास ने श्रीरामचरितमानस में अवधी भाषा का प्रयोग अत्यंत कुशलता से किया है। उनके द्वारा प्रयुक्त शैली सरल, प्रभावी और सजीव है। तुलसीदास ने अवधी की लोकप्रियता और उसकी संप्रेषणीयता का पूरा लाभ उठाया।

अलंकार और छंद

श्रीरामचरितमानस में अलंकारों का प्रयोग व्यापक रूप से हुआ है, जैसे कि अनुप्रास, उपमा, रूपक आदि। छंदों में दोहा, चौपाई, सोरठा, और कुंडलिया प्रमुख हैं। इन छंदों का प्रयोग करके तुलसीदास ने काव्य को संगीतमय और प्रभावशाली बनाया है।

सांस्कृतिक संदर्भ

तुलसीदास ने अवधी के माध्यम से रामायण की कथा को जन-जन तक पहुँचाया। उनके द्वारा प्रयुक्त लोकगीत, कहावतें और सांस्कृतिक संदर्भ इस महाकाव्य को जीवन्त बनाते हैं। इसमें समाज की रूढ़ियों, धार्मिक आस्थाओं और सांस्कृतिक परंपराओं का सुंदर चित्रण है।

तुलसीदास का भाषा कौशल

संवाद की सजीवता

तुलसीदास ने संवादों को अत्यंत सजीव और प्रभावशाली ढंग से प्रस्तुत किया है। पात्रों के संवाद उनकी मनोदशा और स्थिति को प्रकट करते हैं। तुलसीदास के संवादों में सहजता और स्वाभाविकता है, जो पाठक को कथानक में डूबने को मजबूर कर देती है।

भावाभिव्यक्ति

तुलसीदास की भावाभिव्यक्ति अद्वितीय है। उन्होंने भक्ति, प्रेम, करुणा और वीरता जैसे भावों को उत्कृष्टता से अभिव्यक्त किया है। उनके शब्द चयन और वाक्य विन्यास इस काव्य को अद्वितीय बनाते हैं।

धर्म और दर्शन

श्रीरामचरितमानस में धर्म और दर्शन का भी विशिष्ट स्थान है। तुलसीदास ने अवधी भाषा में वेदांत, भक्ति और राम भक्ति का समन्वय किया है। उनके द्वारा प्रस्तुत धार्मिक और दार्शनिक विचार सरल और बोधगम्य है।

अवधी की भाषा वैज्ञानिक विशेषताएं

ऐतिहासिक विकास

अवधी भाषा हिंदी की एक प्रमुख बोली है, जो मुख्यतः उत्तर प्रदेश के अवध क्षेत्र में बोली जाती है। इसका विकास शौरसेनी अपभ्रंश से हुआ है, जो प्राचीन भारतीय भाषाओं का एक रूप है। अवधी की जड़ें संस्कृत में हैं, और इसके विकास में प्राकृत और अपभ्रंश का महत्वपूर्ण योगदान है।

ध्वन्यात्मकता

अवधी की ध्वन्यात्मक विशेषताएं इसे अन्य हिंदी बोलियों से अलग बनाती हैं। इसमें स्वर संधि, व्यंजन संधि और अनुनासिक ध्वनियों का प्रयोग प्रमुख है। जैसे कि "राम" को "रामा" और "हनुमान" को "हनुमाना" कहा जाता है।

शब्द रचना

अवधी में शब्द रचना की प्रक्रिया भी विशेष है। संस्कृत के तत्सम और तद्भव शब्दों का प्रयोग सामान्य है। इसके अतिरिक्त, देशज और विदेशी शब्दों का भी समावेश होता है, जो भाषा को और भी समृद्ध बनाता है।

भाषा वैज्ञानिक दृष्टिकोण

शब्दावली का विश्लेषण

तुलसीदास ने श्रीरामचरितमानस में संस्कृत, प्राकृत, और देशज शब्दों का मिश्रण किया है। यह मिश्रण भाषा को समृद्ध और विविध बनाता है। तुलसीदास ने विभिन्न क्षेत्रों और वर्गों के शब्दों का प्रयोग कर भाषा को व्यापकता प्रदान की है।

ध्वनि संरचना

श्रीरामचरितमानस की ध्वनि संरचना मधुर और संगीतात्मक है। तुलसीदास ने स्वर और व्यंजनों का संतुलित प्रयोग किया है। उनके छंदों की लय और तालबद्धता पाठकों को मंत्रमुग्ध कर देती है।

व्याकरणिक संरचना

तुलसीदास ने अवधी व्याकरण के नियमों का पालन करते हुए भाषा का प्रयोग किया है। उनके वाक्य संरचना, संज्ञा-विशेषण प्रयोग और क्रिया रूप अवधी भाषा की विशेषताओं को प्रकट करते हैं। अवधी की व्याकरणिक संरचना में संज्ञा, सर्वनाम, क्रिया, विशेषण और अव्यय का विशेष महत्त्व है। इसके व्याकरणिक नियम हिंदी से थोड़े भिन्न होते हैं, जैसे कि क्रिया रूपों में बदलाव और वाक्य संरचना की विशेषताएं।

ध्वन्यात्मक अध्ययन

ध्वन्यात्मक दृष्टिकोण से श्रीरामचरितमानस की भाषा बहुत ही समृद्ध है। ध्वन्यात्मकता में स्वरों और व्यंजनों की विभिन्नता देखी जा सकती है।

स्वर ध्वनियाँ

1. अवधी में हिंदी की तरह दीर्घ और ह्रस्व स्वर पाए जाते हैं।

2. स्वर संधि का प्रयोग व्यापक रूप से किया गया है, जो ध्वनि मेल को सुगम और मधुर बनाता है।

व्यंजन ध्वनियाँ

1. अवधी में हिंदी के समान ही व्यंजनों का प्रयोग किया जाता है, परंतु कुछ ध्वनियाँ जैसे 'ळ' का अधिक उपयोग मिलता है।

2. व्यंजन संधि की विधियाँ भी देखी जाती हैं, जो वाक्य को संक्षिप्त और स्पष्ट बनाती हैं।

शब्दार्थ और अर्थविज्ञान

शब्दार्थ और अर्थविज्ञान के दृष्टिकोण से श्रीरामचरितमानस में प्रयुक्त शब्दों का चयन बहुत ही विचारपूर्ण है। शब्दार्थ विज्ञान में निम्नलिखित पहलुओं पर ध्यान दिया गया है:

तत्सम और तद्भव शब्द

1. तत्सम शब्द संस्कृत से सीधे लिए गए हैं, जो ग्रंथ की पवित्रता और गरिमा को बढ़ाते हैं।

2. तद्भव शब्द अवधी और लोकभाषा से लिए गए हैं, जो कथा को सजीव और सहज बनाते हैं।

मुहावरे और लोकोक्तियाँ

1. ग्रंथ में प्रचुर मात्रा में मुहावरों और लोकोक्तियों का प्रयोग किया गया है, जो पाठक को कथानक के साथ जोड़ते हैं।

2. इनका प्रयोग कथा की गहराई और भावनात्मक प्रभाव को बढ़ाता है।

व्याकरणिक अध्ययन

व्याकरणिक दृष्टिकोण से अवधी भाषा का अध्ययन करना महत्वपूर्ण है। तुलसीदास ने अपने ग्रंथ में व्याकरण के नियमों का पालन करते हुए भी कई स्थानों पर रचनात्मक स्वतंत्रता ली है।

संज्ञा और सर्वनाम

1. संज्ञाओं का प्रयोग बहुत ही संतुलित रूप से किया गया है, जिससे पात्रों और स्थानों का स्पष्ट वर्णन हो सके।

2. सर्वनामों का प्रयोग पात्रों की निकटता और भावनात्मक संबंध को दर्शाता है।

क्रिया

1. क्रियाओं का चयन और उनका प्रयोग कथा की गतिशीलता को बनाए रखने में सहायक है।

2. विशेष क्रिया रूपों का प्रयोग कर पात्रों की मनःस्थिति और क्रियाकलापों को प्रभावी ढंग से प्रस्तुत किया गया है।

विशेषण और क्रिया विशेषण

1. विशेषणों का प्रयोग पात्रों और घटनाओं का विशद वर्णन करता है।

2. क्रिया विशेषणों का प्रयोग कथा की गति और दिशा को नियंत्रित करने में सहायक होता है।

शैलीगत अध्ययन

श्रीरामचरितमानस की शैली उसकी सबसे बड़ी विशेषता है। तुलसीदास ने अवधी भाषा में सरल, प्रवाहमयी और मधुर शैली का प्रयोग किया है, जो पाठक को कथा से जोड़ती है।

काव्य शैली

1. दोहा, चौपाई और सोरठा का प्रयोग ग्रंथ की कविता को संगीतात्मक और लयबद्ध बनाते हैं।

2. अनुप्रास, रूपक, उपमा जैसे अलंकारों का प्रयोग काव्य की शोभा बढ़ाता है।

प्रसंग और संवाद

1. प्रसंगों का चयन और उनका क्रम कथा की प्रवाह को बनाए रखता है।

2. संवादों का प्रयोग पात्रों की भावनाओं और विचारों को प्रकट करने में सहायक है।

सांस्कृतिक और सामाजिक संदर्भ

भाषा केवल संप्रेषण का माध्यम नहीं होती, बल्कि यह संस्कृति और समाज का प्रतिबिंब भी होती है। श्रीरामचरितमानस में तुलसीदास ने अवधी भाषा का प्रयोग कर उस समय की सामाजिक और सांस्कृतिक स्थितियों को उजागर किया है।

सामाजिक संदर्भ 1. तत्कालीन समाज की परंपराओं, रीतियों और विश्वासों का वर्णन अवधी भाषा के माध्यम से किया गया है।

2. समाज के विभिन्न वर्गों और उनके आपसी संबंधों को भी भाषा के माध्यम से चित्रित किया गया है।

सांस्कृतिक संदर्भ

1. धार्मिक और आध्यात्मिक दृष्टिकोण से ग्रंथ में अवधी भाषा का प्रयोग पाठक को भक्ति भाव में डूबो देता है।

2. लोकगीतों, लोककथाओं और धार्मिक गाथाओं का समावेश ग्रंथ की सांस्कृतिक धरोहर को प्रकट करता है।

श्रीरामचरितमानस को भाषाई दृष्टिकोण से अध्ययन करते समय, इसके कई महत्वपूर्ण परिप्रेक्ष्यों को ध्यान में रखना महत्वपूर्ण हैः

सामाजिक परिप्रेक्ष्य

श्रीरामचरितमानस को लिखने का मुख्य उद्देश्य सामाजिक परिवर्तन और धार्मिक जागरुकता को बढ़ावा देना था। इसके माध्यम से समाज को धार्मिक उत्थान, शिक्षा और नैतिकता की ओर प्रेरित किया गया।

साहित्यिक परिप्रेक्ष्य

तुलसीदास ने श्रीरामचरितमानस में साहित्यिक गुणधर्मों को सम्मिलन किया है। इसमें रस, छंद, गीति और भाव का विशेष महत्व है, जो इसे एक उत्कृष्ट काव्य बनाता है।

भाषाई परिप्रेक्ष्य

इस काव्य में भाषा का महत्वपूर्ण स्थान है। तुलसीदास ने सरल और सुलभ भाषा का प्रयोग किया है, जो सामान्य लोगों को भी समझने में सहायक होता है।

धार्मिक परिप्रेक्ष्य

श्रीरामचरितमानस धार्मिक भावनाओं, धर्म के महत्व और भगवान राम की लीलाओं को प्रस्तुत करता है। इसका भाषाई दृष्टिकोण भी धार्मिकता को समझने में मदद करता है।

साहित्यिक योगदान

श्रीरामचरितमानस की भाषा और साहित्यिक गुणधर्म ने उत्तर भारतीय साहित्य में महत्वपूर्ण योगदान किया है। इसके माध्यम से धार्मिक और सामाजिक संदेश को लोगों तक पहुंचाने में सफलता हुई है।

इन सभी परिप्रेक्ष्यों के माध्यम से हम श्रीरामचरितमानस की भाषा को उसके सम्पूर्ण साहित्यिक, सामाजिक और धार्मिक संदेश के साथ समझ सकते हैं। श्रीरामचरितमानस की भाषा को भाषाई दृष्टिकोण से अध्ययन करने पर कई महत्वपूर्ण पहलुओं का पता चलता है।

भाषा की उपयोगिता

श्रीरामचरितमानस की भाषा उपयोगिता की दृष्टि से अत्यंत महत्वपूर्ण है। तुलसीदास ने इस काव्य को अवधी भाषा में लिखा, जो कि उत्तर भारत में बोली जाने वाली एक सामान्य भाषा थी। इससे इस काव्य का साधारण जनता तक पहुंचना संभव हुआ।

भाषा की सरलता

श्रीरामचरितमानस की भाषा बहुत ही सरल और सुलभ है। तुलसीदास ने सांस्कृतिक गतिविधियों, धार्मिक विषयों और रामायण कथा को सरलता से प्रस्तुत किया है, जिससे समान्य लोग भी इसे समझ सकें।

भाषा का साहित्यिक गुणधर्म

श्रीरामचरितमानस की भाषा में साहित्यिक गुणधर्म भी प्रमुख है। इसमें रस, छंद, गीति और भाव का सम्मिलन है जो इसे एक अद्वितीय और प्रभावशाली काव्य बनाता है।

भाषा का धार्मिकता से संबंध

श्रीरामचरितमानस में भाषा का धार्मिकता से गहरा संबंध है। तुलसीदास ने भाषा के माध्यम से भगवान राम की भक्ति, धर्म और नैतिकता को प्रस्तुत किया है। इन सभी पहलुओं से प्रकट होता है कि

श्रीरामचरितमानस की भाषा का भाषाई दृष्टिकोण अत्यंत महत्वपूर्ण है और यह उपलब्धि और संदेश को संधारित करने में मदद करता है।

निष्कर्ष

श्रीरामचरितमानस में भाषा का प्रयोग व्यावहारिक और साहित्यिक परिप्रेक्ष्य से किया गया है। हमें यहाँ विभिन्न पात्रों की भाषा, उनके व्यवहार और व्यक्तित्व के संदर्भ में विचार करने का मौका मिलता है। ग्रन्थ में व्याकरण के नियमों का पालन किया गया है। यहाँ उपयुक्त वाक्य रचना, संज्ञाओं का प्रयोग और विराम चिन्हों का सही उपयोग ध्यान में रखा गया है। तुलसीदास की भाषा शैली का अध्ययन करने से हमें उनकी लेखनी की विशेषताएँ और उनका साहित्यिक अभिव्यक्ति के प्रति दृष्टिकोण मिलता है। ग्रन्थ में प्रयुक्त शब्दों का अध्ययन करने से हमें उनके अर्थ, पर्यायवाची और विशेषताएँ समझने में सहायकता मिलती है। भाषाविज्ञान की दृष्टि से हम ग्रन्थ के साहित्यिक महत्व को समझ सकते हैं। यहाँ हम ग्रन्थ के साहित्यिक परिप्रेक्ष्य से भाषा का अध्ययन करते हुए उसकी विशेषताओं को समझ सकते हैं। श्रीरामचरितमानस की भाषा का भाषावैज्ञानिक अध्ययन हमें इस ग्रन्थ की भाषा की विशेषताओं, व्याकरण, शैली, और संदर्भों को समझने में मदद करता है। इसके माध्यम से हम भाषा और साहित्य के क्षेत्र में विस्तार से विचार करने की प्रेरणा प्राप्त करते हैं और भाषा के उपयोग के प्रति जागरुक होते हैं। श्रीरामचरितमानस का भाषा वैज्ञानिक अध्ययन अवधी भाषा की समृद्धि और उसकी व्यावहारिकता को उजागर करता है। तुलसीदास ने इस ग्रंथ के माध्यम से न केवल एक धार्मिक कथा प्रस्तुत किया है, बल्कि अवधी भाषा की सौंदर्यता और उसकी विविधता को भी प्रस्तुत किया है। इस अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि भाषा न केवल संप्रेषण का माध्यम है, बल्कि यह समाज और संस्कृति का एक अभिन्न अंग भी है। श्रीरामचरितमानस की भाषा का यह अध्ययन भाषा वैज्ञानिक दृष्टिकोण से एक महत्वपूर्ण प्रयास है, जो भविष्य के शोधकर्ताओं के लिए मार्गदर्शक

साबित हो सकता है। श्रीरामचरितमानस की भाषा का भाषा वैज्ञानिक अध्ययन तुलसीदास के भाषा कौशल और अवधी की विशेषताओं को उजागर करता है। उन्होंने अवधी भाषा का प्रयोग कर रामायण की कथा को लोकप्रिय बनाया और हिंदी साहित्य में एक नया आयाम जोड़ा। उनका भाषा प्रयोग सजीव, सरल और संप्रेषणीय है, जो आज भी पाठकों को आकर्षित करता है। श्रीरामचरितमानस की भाषा में छिपी साहित्यिक और सांस्कृतिक धरोहर भारतीय साहित्य को समृद्ध करती है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. अवस्थी, सद्गुरूशरण. तुलसी : व्यक्तित्व और विचार, विद्यामन्दिर, लखनऊ, संस्करण 1952
2. कुमार, राज तुलसी का गवेषणात्मक अध्ययन : सरस्वती पुस्तक सदन, आगरा, संस्करण 2012
3. गणेश, लाला. श्रीमद्गोस्वामी तुलसीदास जी का जीवन-चरित : गणेशीलाल लक्ष्मीनारायण, मुरादाबाद, संस्करण 1969
4. जैन, डॉ. विमल कुमार. तुलसीदास और उनका साहित्य : साहित्य सदन, देहरादून, संस्करण 1957

डॉ. आलोक कुमार सिंह

सहायक आचार्य

हिन्दी विभाग

माँ मंशा देवी महाविद्यालय, चंदौली

कश्मीर में स्थित बौद्ध धर्म स्मारक

डॉ. अमृता सिंह

हिमालय की गोद में समाई विश्व की अद्भुत व सुंदरतम कश्मीर घाटी को प्रकृति ने बड़ी सहजता से संवारा है, तो वहीं यह क्षेत्र आध्यात्म सम्पदा से भी भरपूर है। शैव मत, बौद्ध धर्म, इस्लाम की साँझी संस्कृति का यह क्षेत्र मिश्रित संस्कृति के विभिन्न आयामों से रू-ब-रू करवाता है। धर्म, दर्शन, साहित्य और ज्ञान की भूमि रही कश्मीर घाटी को ऋषि भूमि या शारदा पीठ भी कहा जाता था। विद्या की देवी माता शारदा की भूमि कश्मीर के संदर्भ में कहा जाता है कि जब प्राचीन काल में बच्चे की विद्या आरंभ की जाती थी तो बच्चे को कश्मीर की ओर मुँह कराकर बिठाया जाता था। इस संदर्भ में एक प्रसिद्ध श्लोक है "नमस्ते शारदे देवि कश्मीरपुर वासिनी, त्वामहं प्रार्थये नित्यं विद्यादानं च देहि में।"[1] अर्थात कश्मीर में विराजने वाली माँ शारदा, आप हमें विद्या का दान दें। बौद्ध संस्कृति का कश्मीर से गहरा संबंध है। बौद्ध धर्म शास्त्रीय कश्मीरी संस्कृति का एक महत्वपूर्ण भाग था जिसका वर्णन कल्हण द्वारा रचित राजतरंगिनी तथा नीलनाग के उपासकों के ग्रन्थ नीलमाता पुराण में मिलता है। राजतरंगिनी में कल्हण कश्मीर की अजय शक्ति पर गर्व करते हुए लिखते हैं "कश्मीर पर बल द्वारा नहीं केवल पुण्य द्वारा विजय प्राप्त की जा सकती है। वहाँ के निवासी केवल परलोक से भयभीत होते हैं, न कि शस्त्रधारियों से।"[2]

कश्मीर, ऐतिहासिक रूप से बौद्ध धर्म का एक महत्वपूर्ण केंद्र रहा है। कश्मीर में बौद्ध धर्म की उत्पत्ति का श्रेय मज्जांतिका नामक भिक्षु को जाता है, जिन्हें तीसरी बौद्ध परिषद के समापन पश्चात सम्राट अशोक ने बौद्ध धर्म के

प्रसार हेतु कश्मीर तथा गांधार भेजा था। कश्मीर में बौद्ध धर्म व्यापक रूप से मौर्य सम्राट अशोक के समय में फैला, किन्तु इस धर्म के अनुयायी सुरेन्द्र नामक कश्मीर के प्रथम बौद्ध शासक के समय में भी थे। कश्मीर में बौद्ध धर्म का पुनरुत्थान कुषाण काल के राजा कनिष्क के शासनकाल में हुआ। इस समय को कश्मीर में बौद्ध धर्म का स्वर्ण युग माना जाता है। कुषाण शासन काल में कश्मीर बौद्ध शिक्षा का उच्च केंद्र बना, जो बौद्ध मिशनरियों हेतु महत्वपूर्ण मध्यस्थ था। 'द मेकिंग ऑफ अर्ली कश्मीर : इंटरकल्चरल नेटवर्क्स एण्ड आइडेंटिटी फॉर्मैशन' में मुहम्मद अशरफ वानी और अमन अशरफ वानी लिखते हैं "इस अवधि (तीसरी शताब्दी सीई से छठी शताब्दी सीई) में कश्मीर से चीन जाने वाले बौद्ध विद्वानों की संख्या भारत के अन्य हिस्सों से जाने वालों की तुलना में बड़ी है।"[3] कनिष्क के शासनकाल में ही चौथी बौद्ध संगीति का आयोजन कश्मीर के कुंडलवन में हुआ, जिसका मुख्य उद्देश्य सर्वास्तिवाद को व्यापक आधार प्रदान करवाना था। कल्हण ने राजतरंगिनी में सदरहद्वन की पहचान हरवन के रूप में की है जो कश्मीर में बौद्ध धर्म के महत्व को प्रमाणित करता है। इस परिषद की अध्यक्षता वसुमित्र ने की थी जबकि अश्वघोष इसके उपाध्यक्ष थे। इसी परिषद में बौद्ध धर्म दो संप्रदायों- महायान तथा हीनयान में विभाजित किया गया। इस संगीति में त्रिपिटक (प्राचीनतम ग्रन्थ जिसमें भगवान बुद्ध के उपदेश संग्रहीत हैं) का पुनः संकलन व संस्करण हुआ। कश्मीर में आयोजित परिषद के समापन पश्चात भी बौद्ध धर्म के अनुयायी तथा प्रतिष्ठित बौद्ध भिक्षु मध्य एशिया, चीन, तिब्बत तथा भारत के अन्य क्षेत्रों से यहाँ आते रहे। कश्मीर में आयोजित चतुर्थ बौद्ध परिषद के तथ्य को प्रमाणित करते हुए ह्वेन त्सांग, बु स्टोन तथा तरंथा के कथनानुसार "विभिन्न सम्प्रदायों द्वारा विश्वास की विभिन्न व्याख्याओं को

समेटने के लिए जो परिषद बुलाई गई थी, जिसमें 500 अर्हत, 500 बोधिसत्व और 500 पंडितों ने भाग लिया था।"[4] अशोक के उत्तराधिकारी जलौका (जिसे जलुका नाम दे भी जाना जाता है) कश्मीर के सक्रिय और प्रतिष्ठित राजा के शासनकाल के समय बौद्ध धर्म का प्रचार-प्रसार अस्थायी रूप से थम गया किन्तु कुछ समय पश्चात ये धीरे-धीरे पुनः विकसित हुआ। कश्मीर में धर्म के प्रचलन हेतु राजा सुरेन्द्र ने नरेन्द्रभवन नामक विहार (जो कि ज़ोजीला से दूर सौरका शहर में था) तथा एक अन्य विहार (सौसारा, अंचार झील के पास स्थित सौरा) का निर्माण किया। अपने शासन काल में धर्मनिष्ठ बौद्ध राजा अशोक ने शुष्कलेत्र और वितस्तात्र नामक दो स्थानों पर कई स्तूपों का निर्माण करवाया। अशोक का उत्तराधिकारी जलौका जो कि वास्तव में शैव भक्त था ने भी बौद्ध धर्म से प्रभावित हो वराहमूला (बारामुला) के आसपास के क्षेत्र में कृतिश्रमविहार नामक एक बड़े विहार का निर्माण किया। राजा मेघवाहन के समय कश्मीर में कई बड़े बौद्ध-स्तूपों का निर्माण कराया गया। घाटी में बौद्ध धर्म को विकसित और सशक्त करने के लिए कुषाण साम्राज्य के शासकों ने भी कई मठों, चैत्यों तथा अन्य बौद्ध नीवों की स्थापना की। इनके अतिरिक्त कश्मीर में सोपोर ज़िले में जालुर जैनगीर, वितस्त्र और अनंतनाग ज़िले में व्याथावोतुर नामक जलोरा विहार तथा वर्तमान बडगाम में एक स्तूप शामिल है। कश्मीर के इतिहासकार कल्हण अभिलेखबद्ध करते हैं "अशोक ने बड़ी संख्या में स्तूप और शिव के कुछ अहाने के अतिरिक्त श्रीनगरी शहर का निर्माण किया था, जिनमें से दो राजा के नाम पर 'अशोकेश्वर' कहे जाते हैं।"[5]

बारामूला में उशकुरा के खंडहर, ललितादित्य द्वारा बनवाए गए स्तूप का प्रतिनिधित्व करते हैं, तो वहीं परिहसपोरा में तीन बौद्ध इमारतें- एक स्तूप,

मंदिर तथा मठ जिसे ललितादित्य का राज-विहार माना जाता है प्राप्त हुए। बारामुला ज़िले के पट्टन तहसील में स्थित परिहसपोरा का राजविहार बौद्ध चैत्य का एकमात्र जीवित उदाहरण के रूप में सुरक्षित है। परिहसपोरा, जो स्थानीय रूप से 'कानी शहर' नाम से जाना जाता है को कश्मीर की प्राचीन राजधानी माना जाता है। यह शहर राजा ललितादित्य मुक्तापिडा द्वारा झेलम नदी के ऊपर एक पठार पर निर्मित किया गया था। बौद्ध धर्म के अनुयायी राजा ललितादित्य ने परिहसपोरा में बुद्ध की 50 मीटर लंबी मूर्ति के अतिरिक्त विहार भी बनवाए। इतिहासकार व कवि ज़रीफ़ अहमद ज़रीफ़ ने राइज़िंग कश्मीर से की गई बातचीत में बताया कि "उन्होंने धार्मिक स्थलों का निर्माण और जीर्णोद्धार कराया। उन्होंने घाटी में 350 विहार सहित सिंचाई नहरें भी बनवाईं, जहाँ बौद्ध प्रार्थना करते थे।"[6] अतः यह कहना असंगत न होगा कि छोटा सा यह शहर अपने असामान्य पुरातात्विक स्मारकों के लिए जाना जाता है।

श्रीनगर में स्थित विश्व प्रसिद्ध बौद्ध स्थल हारवन बौद्ध स्तूप की खोज सर अर्ल स्टेन ने की थी। इस स्थल की खुदाई के दौरान बौद्ध स्तूप मिले हैं। संरक्षित स्मारक घोषित किए गए इस बौद्ध स्थल की देखरेख अब भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण कर रहा है। आर. सी. काक अपनी पुस्तक 'Ancient Monuments of Kashmir' में लिखते हैं "While digging under its foundations a copper coin of Toramana, the White Hun ruler, who flourished in about the fifth century CE. It was inferred that the diaper rubber stupa could not possibly be earlier than the 5th century CE thought it might be considered later in the date."[7]

अतः कहा जा सकता है कि बौद्ध धर्म समूचे एशिया को आप्लावित कर यूरोप तक जा पहुंचा। बुद्ध से जुड़े अवशेषों, स्मारकों, मठों आदि की खोज विश्व भर में निरंतर जारी है, क्योंकि विश्व भर में सभी देशों में खुदाई से बुद्ध अवशेष प्राप्त हुए हैं, जो इस कहावत को सशक्त करते हैं 'हुआ युद्ध निकले बुद्ध।' विद्या की देवी शारदा व कश्यप ऋषि का निवास स्थान कश्मीर बौद्ध धर्म का केंद्र भी रहा है। कल्हण की राजतरंगिनी कश्मीर में बौद्ध धर्म के महत्व के प्रमाण प्रस्तुत करती है, तो वहीं चीनी यात्री ह्वेन त्सांग ने भी अपने विवरण में घाटी में बौद्ध धर्म के प्रसार का उल्लेख किया है।

संदर्भ सूची-

१. कण, पाथेय. कश्यप ऋषि का कश्मीर सदियों तक रहा हिन्दू तथा बौद्ध धर्म केंद्र, patheykan.com..ऋषि कश्यप/

२. रैना, शिबन कृष्ण .*कल्हण और उनकी राजतरंगिनी* ,punjabkesari.in,https//:m.punjabkesari.in/aapki-kalam-se /news/kalhan-and-his-royal-lady

३. मीर ,शाकिर .*पुस्तक समीक्ष: द मेकिंग ऑफ़ अर्ली कश्मीर* www.outlookindia.com

४. *कश्मीर में बौद्ध धर्म* ,India Netzone, www.indianetzone.com

५. Kalhan –the historian of Kashmir ,records that Ashoka built the town of Srinagari besides a large number of stupas and some shrines to siva ,two of which were called Ashokesvara after the king. Lipika Singh ,*The World of Buddhism (Vol.II)* ,pg. 185

६. *Parishaspora: The forgotten capital of Kashmir* , Rising Kashmir ,https//:risingkashmir.com

७. Shah.Manan ,*A Buddhist Monastery of Kashmir Buried in the Past* ,www.inversejournal.com

८. गैरोल ,वाचस्पति .*संस्कृत साहित्य का इतिहास*

९. गोयल ,प्रीतिप्रभा .*भारतीय संस्कृति*

कश्मीर की आदि संत कवयित्री लल्लद्यद व एकत्व की अवधारणा

-डॉ. मुदस्सिर अहमद भट्ट

प्रस्तावना- वितस्ता घाटी कई दृष्टियों से आकर्षण एवं विश्लेषण का केंद्र रही है। यह भूमि न केवल आध्यात्म, दर्शन तथा चिंतन की साक्षी रही है अपितु यहाँ प्राकृतिक सौन्दर्य की अद्वितीय, अतुलनीय छटा भी दृष्टिगत होती है। यहाँ विश्व की प्राचीनतम भाषा के आदि विद्वान, भाषाविद्, आचार्यों की परंपरा रही हैं। वास्तव में यह धरती भारतीय काव्य-शास्त्र की जन्मभूमि है। अतः यहाँ संत कवियों, ऋषियों, मुनियों और सूफियों ने जन्म लिया है। तदनुसार यहाँ की सामाजिक व्यवस्था एवं सांस्कृतिक धरोहर इन महात्माओं से प्रभावित रही है। निश्चित रूप से इनकी वाणी और उपदेशों ने समता, समानता, एकता, सद्भावना और शिष्टाचार का संचार किया है।

चौदहवीं शताब्दी के आरम्भ में बौद्ध धर्म और हिन्दुओं के त्रिक-दर्शन से कश्मीर की जीवन-पद्धति निर्मित हुई थी। उसका इस्लामी विचारधारा के साथ तीव्र संघर्ष भी हुआ। एक ओर जहाँ प्राचीन विश्वास, आस्थाएँ और परम्पराएँ थीं दूसरी ओर इस्लाम के नवीन दर्शन का प्रदार्पण हो रहा था। सामान्य जन इन दोनों मतों के बीच उलझ रहा था, अस्थिरता तथा अव्यवस्था की ओर समाज जा रहा था। इस संवेदनशील समय में कई पथ-प्रदर्शकों ने अपनी महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह किया है जिनमें संत कवयित्री रूपभवान, ललद्यद और हब्बा खातून का नाम उल्लेखनीय है। इस आलेख में ललेश्वरी के वाखों का विवेचन-विश्लेषण किया जाएगा और एकात्मवाद की अवधारणा के विभिन्न आयामों की व्याख्या की जाएगी।

बीज शब्द- कश्मीरी संस्कृति, एकत्व, शैव-दर्शन, त्रिक-दर्शन, शिष्टाचार, सामाजिकता, वाख, समता, समानता, सम्मानता

मूल आलेख- ललद्यद चौदहवीं सदी की एक सशक्त शैव दर्शन भक्ति परंपरा की एक महत्वपूर्ण कवयित्री रही हैं। ललद्यद के जन्म स्थान के सम्बन्ध में मतभेद अवश्य है परन्तु इसमें कोई संदेह नहीं है कि उनका जन्म एक ब्राहमण तथा संपन्न कश्मीरी परिवार में हुआ है। बाल्यकाल से ही उनका धार्मिक स्वभाव था तथा एकांत में समय व्यतीत करना उनको अच्छा लगता था। अल्पायु में उनका विवाह हुआ, ससुराल में उन्हें भले ही पदमावती नाम से पुकारा जाता था परन्तु वहाँ उन्हें ऐसी कोई विशेष सुख-सुविधा नहीं थी जो एक आदर्श जीवन यापन के लिए अपेक्षित होती है। क्रूरता, निर्दयता और कठोरता उनके जीवन में सर्वव्याप्त थी। 'निलवठ' को एक उदहारण के रूप में देखा जा सकता है जो अत्यधिक चर्चा का विषय रहा है। ललेश्वरी के खाने के बरतन में उसकी सास एक नीला पत्थर रखती थी जिसे कश्मीरी में 'निलवठ' कहते है 'निल' का अर्थ होता है 'नीला' और 'वठ' का अर्थ होता है 'पत्थर'। उसी नीलवठ के ऊपर वह उसे थोडा सा खाना बिखरा कर डाल देती थी ताकि जब घर के अन्य सदस्य देखे तो उन्हें यह आभास हो कि ललद्यद सबसे अधिक खाना खाती है परन्तु वास्तविकता यह थी कि वह कभी भी पेट भर खाना नहीं खाती थी। उसमें इतनी सहनशीलता थी कि वह यह सब अत्याचार किसी से कहे बिना सहती थी यहाँ तक कि वह उस नीलवठ को अंत में धोकर उसी बरतन में रख देती थी। जब कभी वह अपनी व्यथा का बखान करती थी तो केवल काव्य के माध्यम से ही करती थी जैसे जब उसके ससुराल में अनेक तरह का खाना बनाया जाता था तो ललद्यद की सखियाँ उसे पूछती थी कि आज क्या-क्या खाया? वह काव्य रूप में उन्हें उत्तर देती थी जो उसकी सखियों की समझ से परे था जैसे:

"होंड मारिथ, होस मारिथ
ललि नीलवठ चलि न ज़ंह"[1]

अर्थात् कितने भी पकवान क्यों न बने ललद्यद के भाग्य में नीला पत्थर ही होता है।

ललद्यद न केवल पति के द्वारा तिरस्कृत व अपमानित होती थी अपितु उसके ससुराल जन भी कोई कोर-कसर बाकी नहीं रखते थे। जिसका उदहारण इस पंक्ति से भी समझा जा सकता है-

"यि ओस लल्य हियुन्द ताबय
नोट फुट आब रूद इस्तादय"[2]

ऐसा कहा जाता है कि एक बार ललद्यद पनघट से मिट्टी के बर्तन में (नोट) में पानी ला रही थी, उसके पति ने पानी से भरी हुई मटकी पर कंकड मारे जिसके कारण मटकी टूट जाती है। पानी धरती पर गिरने के बजाय उसके कन्धे पर जम जाता है। इस घटना ने न केवल लल का पति चकित किया अपितु उनके रहस्यमयी व्यकितत्व का भेद भी लोगों के समक्ष खुल जाता है। इस घटना के उपरान्त ही ललद्यद ने अपना ससुराल त्याग दिया। अतः वर्षों तक ससुराल के अत्याचार सहने के बाद उन्होंने अपना जीवन जंगलों में व्यतीत करना शुरू किया। ईश्वर में उन्हें पहले ही प्रगाढ़ आस्था थी, ससुराल से तटस्थ होने के बाद वह पूर्ण रूप से ईश्वर, भक्ति में लीन हो गई। यहीं से ललद्यद के जीवन की वास्तविक यात्रा आरंभ हुई।

ललद्यद के जीवन से सम्बंधित कई लोक-कथाएँ प्रचलित है। वह एक ऐसी संत कवयित्री थी जिसके बारे में जितना भी सुना और कहा जाए वह आश्चर्य में डाल देता है जैसे उन के संबंध में यह घटना आज भी बहुत प्रचलित व लोकप्रिय है कि ससुराल से पलायन करने के बाद ललद्यद एक बार कहीं से जा रही थी कि उनकी नज़र दूर से आ रहे हज़रत अमीर कबीर मीर सयिद अली हमदानी (र .अ) पर पड़ी और उन्हें देखकर लल्ला खुद को

छुपाने के लिए जगह तलाश कर रही थी, कहीं जगह नहीं मिली तो उसने अंगारों से भरी भट्ठी में छलांग मार दी। आश्चर्य की बात यह थी कि वह वहाँ जल-बुनकर नहीं अपितु एक सुन्दर वस्त्र पहनकर निकली| भट्ठी में कूदने का कारण पूछने पर उसका कहना था कि ‘मैंने अपने जीवन में पहली बार किसी सिद्ध पुरुष को देखा और उनके सामने मैं ऐसी अवस्था में कैसे जाती।’[3]

ललद्यद एक प्रसिद्ध कश्मीरी भाषा की भक्त कवियत्री थी जो कश्मीर शैव भक्ति परम्परा की पहली तथा महत्वपूर्ण कडी रही है। इनकी काव्य शैली को वाख (vaakh) कहा जाता है। उनके वाखों में उनकी अनेक मान्यताओं की व्याख्या की गई है। वह न मूर्ति-पूजा पर विश्वास करती थी और न अन्धविश्वास पर श्रद्धा रखती थी। वह कुरीतियों तथा परंपरागत रीति-रिवाजों के विरुद्ध थीं। वह साधना की उस अवस्था पर पहुंच चुकी थीं जहाँ हिन्दू और मुसलिम दोनों एक थे। उन्होंने विभिन्न जातियों को एक सूत्र में बांधने का भी प्रयास अपने वाखों के माध्यम से किया है।

ललद्यद ने अपने वाखों के माध्यम से ईश्वर के एक होने तथा उसे अपने भीतर टटोलने पर बल दिया है उनका कहना था कि ईश्वर केवल हमे अपने भीतर अपनी आत्मा में ही प्राप्त हो सकता है, उनका कहना है-

“शिव छुय थलि थलि रोज़ान
मंव जान हियोंद तअ मुसलमान।
तव्य छुख न पनुन पान परज़ान
सुय छय सहिब्स ज़ानी ज़ान” ।।[4]

अर्थात् ईश्वर तो कण-कण में है, तेरे भीतर है, अगर उसे पाना ही है तो अपने भीतर से पा, बाहर अपना समय व्यर्थ मत कर।

ललेश्वरी अपने युग की प्रबल समाज सुधारक व एकत्व दर्शन की प्रतिपादक थी। उन्होंने सामाजिक भेद-भाव, रूढ़ीवाद तथा जातिभेद का सदैव विरोध किया है। उनके समक्ष ब्राह्मण और शूद्र में कोई अंतर नहीं है, ऊँच और नींच का कोई शब्द नहीं है। वह खंडन-मंडन प्रणाली की प्रथम कश्मीरी कवयित्री भी थी। ब्राह्मणों को संबोधित करते हुए ललेश्वरी कहती है कि 'हे ब्राह्मण| तू अपने आपको पहचान। तू तो एक है। वास्तविकता की जान-पहचान तुमको कभी नहीं हुई, पढ़ते-लिखते तुम्हारा हाथ और तुम्हारी उंगलियाँ घिस गई परन्तु भीतर जो द्वैत भाव है, वह कभी भी नष्ट नहीं हुआ।'[5]

ललद्यद ने अपने वाखों के माध्यम से हिन्दू तथा मुस्लमान की एकता आपसी भाईचारे पर भी बल दिया है। उनका कहना था कि जब सूरज सब को रोशनी देता है, सब को मिलता है। इन सब में कोई भेद-भाव नहीं तो तुम धर्म तथा जाति, ऊँच तथा नीच का भेद-भाव क्यों करते हो। ईश्वर सब का एक ही है जब ईश्वर ने किसी को नहीं बाँटा तो तुम मनुष्य कौन होते हो बाँटने वाले।

"थल-थल में बसता है शिव ही,
भेद न कर, क्या हिन्दू-मुसलमान।
ज्ञानी है तो स्वयं को जान,
यही है साहिब से पहचान ।।"[6]

ललद्यद के समीप अल्लाह और ईश्वर एक हैं, इसलिए वह कट्टर मुल्लाओं के भ्रमजाल के ताने-बाने काट कर मनोजगत में जीवन रहस्य का निर्देश देती हैं। पूजा, पाठ, मंदिर-मस्जिद, तीर्थ खानकाह आदि धर्म के दिखावे मात्र है, इन से ज्ञान और बोध के गन्तव्य शायद ही मिल सकें। ललद्यद का स्वयं यह कहना है कि मैंने भी ईश्वर को पाने के लिए व्यर्थ में कई प्रयत्न किए-

"लल बो द्रायेस लोलरे

छानडान लुसुम दिन क्योह राथ।
वुछुम पंडित पननी गरे
सुय मय रोट्मस न्यचतुर त साथ ।।"[7]

ललेश्वरी कहती है कि ईश्वर को अंत में मैंने अपने भीतर ही पाया और मोह माया ऊँच-नीच को त्याग कर मैं उनमें मिल गई।

निष्कर्ष- वस्तुतः एकात्म तथा एकत्व का पाठ पढ़ाने वाली आध्यामिक संत कवयित्री ललद्यद कश्मीर की सामाजिकता व संस्कृति की एक जीवंत और सशक्त कड़ी रही है। उन्होंने उस समय में कश्मीरी जनता का मार्गदर्शन किया जब अव्यवस्था, अस्थिरता तथा आस्था-अनास्था तथा मोहभंग की स्थिति थी। डॉ. ब्रिज प्रेमी 'कश्मीर: कुछ सांस्कृतिक पहलू' नामक पुस्तक में कहते है कि-"ललद्यद अपने पीछे कोई चिह्न छोड़े बिना स्वर्ग वासी हो गई।"[8] वर्तमान समाज में जहाँ लोग समाधियों, मज़ारों, मठों आदि को अपार महत्व देते है वहाँ आश्चर्य की बात यह है कि ललद्यद की अन्तिम विश्रामस्थली पर एक साधारण समाधि निर्मित की गई। लल एक जीवन्त और अमर सत्य है और कश्मीर को इनके मंगलदायक व्यक्तित्व का सदा गर्व रहेगा।

संदर्भ ग्रन्थ-सूची

1 प्रो. जय लाल कोल, ललद्यद , पृ. 331

2 जवाहार लाल बट्ट, ललद्यद, पृ. 179

3 विकिपीडिया.org , लल्लेश्वर ,23 May 2024.

4 जवाहार लाल बट्ट,लल्ल द्यद पृ. 159

5 जवाहार लाल बट्ट,लल्ल द्यद पृ. 116

6 Hindi Wikipedia.org, लल्लेश्वरी, 7 feb 2017.

7 वही पृ 59

8 कश्मीर कुछ सांस्कृतिक पहलू ,डॉ .ब्रिज प्रेमी पृ .63

-डॉ. मुदस्सिर अहमद भट्ट

हिमाचल प्रदेश की मन्दिर वास्तुकला

डॉ. सुरेश शर्मा

भूमिका- हिमाचल प्रदेश उत्तर भारत का एक प्रसिद्ध राज्य है। प्राचीन समय से हिमाचल को देवताओं का स्थान "देवभूमि" के नाम से जाना जाता था। महाभारत,पदमपुराण और कनिंघम जैसे धर्म ग्रन्थों में हिमाचल का विवरण मिलता है। हिमालय पर्वत की शानदार ऊंचाई, अपनी विहंगम सुन्दरता और आध्यात्मिक शांति की आभा के साथ देवताओं का प्राकृतिक घर के सामान प्रतीत होता है। पूरे प्रदेश में दो हज़ार से ज़्यादा मंदिर हैं। उच्च पर्वत मालाओं और पृथक घाटियों का राज्य होने के नाते, मंदिर वास्तुकला की कई अलग-अलग शैलियों का विकास किया और यहाँ पर नक्काशीदार पत्थर शिखर, पैगोड़ाशैली के धार्मिक स्थल, बौद्ध मठों की तरह मंदिर या सिक्ख गुरुद्वारा है। उनमें से तीर्थ यात्रा के महत्वपूर्ण स्थान है और हर साल देश-भर से हज़ारों श्रद्धालुओं को आकर्षित करते हैं।

बीज शब्द- हिमाचल प्रदेश वास्तु शैली, वास्तुकला नागर शैली, शिखर शैली, पहाड़ी वास्तु शैली, काष्ठ नक्काशी पैगोडा शैली, नक्काशी गर्भगृह गुम्बद शैली

हिमाचल प्रदेश में वास्तुकला का इतिहास एवं विशेषताएं- उत्तरी भारत में मन्दिरों का निर्माण गुप्त काल के समय चौथी शताब्दी में आरम्भ हुआ। इससे पहले मन्दिरों का निर्माण समतल भूमि पर होता था, बाद में ऊंचे चबूतरों पर होने लगा। सातवीं शताब्दी में स्थापत्य कला की इस विकास यात्रा में एक नया मोड़ आया। इस यात्रा में अपन-य विशेषताएं अपनी क्षेत्री उभरकर आई। सबसे सरल और प्रमुख पहचान मन्दिरों के शिखर से स्पष्ट होती है। शिल्प शास्त्र में तीन प्रकार के शिखरों नागर, द्राविड़ और वेसर का

उल्लेख है।[1] यह वर्गीकरण क्षेत्रीय आधार की ओर संकेत करता है। नागर शैली आर्यवर्त की प्रतिनिधि शैली है जिसका प्रसार हिमालय से लेकर विंध्य पर्वतमाला तक देखा जा सकता है। वास्तुशास्त्र के अनुसार नागर शैली के मन्दिर की पहचान। आधार से लेकर सर्वोच्च अंश तक इसका चतुष्कोण होना है। हिमाचल प्रदेश में भी शिखर शैली का मन्दिर में परिचय सातवीं व आठवीं शताब्दी में हुआ होगा। बजौरा का विश्वेश्वर मन्दिर नागर शिखर शैली का उदाहरण है। इसका शिखर वक्ररेखीय है।[2] मन्दिर के साथ किसी प्रकार का सभा नहीं है। मण्डप हिमाचल के मन्दिरों में जिस भाग में मुख्य प्रतिमा स्थापित रहती है, उसे गर्भगृह कहा गया है। जिन मन्दिरों में केवल गर्भगृह है, उन्हें साधारणतः देवल या देयोल कहते हैं।[3] हिमाचल के असंख्य शिव मन्दिरों में नन्दी की प्रतिमा कहीं खड़ी और कहीं बैठी अवस्था में है। परम्परागत स्थापत्य शैली में पृथ्वी के गुरुत्वाकर्षण के सिद्धान्त को ध्यान में रखा गया है। नागर और शिखर शैली के मन्दिरों में योजना और ऊंचाई का विशेष ध्यान रखा गया है। शिखर शैली के नन्दिरों के तौरण द्वारों तथा अन्य प्रवेश द्वार की सजा को छोड़कर भीतर से मन्दिर की दीवारें साधारण हैं। द्वारों की चोखटों पर सुरुचिपूर्ण नक्काशी हुई है।

हिमाचल प्रदेश की मन्दिर वास्तुकला के प्रकार- वास्तुशास्त्र की दृष्टि से हिमाचल प्रदेश के मंदिरों की वास्तु कला को छह प्रकारों में विभक्त किआ जा सकता है- शिखर शैली, पैगोडा शैली, बौद्ध वास्तु शैली, पहाड़ी वास्तु शैली, बंगलानुमा वास्तु शैली, मुग़ल मिश्रित वास्तु शैली।[4]

शिखर शैली के काष्ठ मन्दिर[5]- हिमाचल के काष्ठ मन्दिरों में मूल अवधारणा शखर शैली से ही प्रेरित मानी जा सकती है। परम्परागत स्थानीय शैली का प्रयोग हुआ हैं! काष्ठ मदिरों की बनावट पर्वतीय क्षेत्रों के सामान्य अवास गृहो जैसी हैं। दीवारे अनगढ पत्थर और काष्ठ की शुष्क चिनाई से निर्मित हैं।

मंदिरों में तिकोना ढलवां छत है। मौलिक रूप में छत में स्लेटो के रथान पर लकड़ी के तख्तों का प्रयोग है। छत की ढलान इसलिए अधिक रखी गई है जिससे सर्दिओं में उन पर बर्फ न ठहर सके। मन्दिर का निर्माण ऊचे अधिष्ठान पर हैं। गर्भगृह पर उंचा विमान हैं। मन्दिर की दीवारों पर नक्काशी कम की गई है। मंदिर के भीतर प्रयुक्त किआ गए काष्ठ स्तम्भ , धरण, द्वारों, वितानों, छज्जों और आलो में प्रचूर नक्काशी की गई है।

नक्काशी में देवी-देवताओं के चित्रण के अतिरिक्त पशु-पक्षियों फूल पत्तीओं की नककाशी है। शिखर शैली के प्रस्तर मन्दिरों की बाह्य दीवारों पर जैसा अलंकरण है, वह शिखर शैली के इन काष्ठ मन्दिरों की भीतरी सज्जा में पस्फुटित हो उठा है। ऐसे मन्दिरों में चम्बा का सातवीं-आठवीं शती का छतरा शक्ति देवी मन्दिर, भरमौर का लक्षणा देवी मन्दिर, लाहौल-स्पीति का मकला देवी मन्दिर, उदयपुर तथा मण्डी जिले का प्रसिद्ध मगरू महादेव (18वीं-19वीं शताब्दी) नन्दिरों का उल्लेख किया जा सकता है।

पैगोडा शैली[6]- पश्चीमी हिमालय अर्थात हिमाचल प्रदेश के हिन्दू, पहाडी और बौध मन्दिरों की शैली में स्थापत्य-शिल्प दृष्टिगोचर होता है। प्रदेश में पैगोडा शैली के अन्दर संख्या में कम हैं परन्तु इनकी विशिष्ट रचना के कारण इनकी अपनी पहचान है। इस शैली के मन्दिरों की धरातल मंजिल आयताकार अथवा वर्गाकार है। दीवारे पत्थर और लकड़ी की शुष्क चिनाई बनाई जाती हैं। जिन-जिन क्षेत्रों में देवदार की लकड़ी सुलभता से मिलती रही वहां गृह, प्रासाद, देवस्थान आदि के निमण में इस पद्धति का प्रयोग हुआ है।

पैगोडा शैली से शत्पर्य ऐसी निर्माण पद्धति से है जिसमें वर्गाकार अथवा आयताकार भवन के चारों ओर तीन, चार अथवा पांच छत्राकार छतें एक के पर दूसरी ऊपर की ओर (लंबमान) उठती हुई नजर आती है। चारों

ओर बरामदा होता है। हिमाचल में जहां पैगोडा शैली के मन्दिर का शीर्ष शकुनुमा कार का रहता है, | पैगोडा शैली के मन्दिरों में पराशर देव मन्दिर (मण्डी), त्रिपुर सुन्दरी, नग्गर, हिडिम्चा देवी (मनाली), त्रियुगी नारायण (कुल्लू), आदिब्रह्म खोखण (कुल्लू), मनु ऋषि शैशर (कुल्लू) और गौरी शंकर मन्दिर (करसोग) आदि शामिल हैं। वास्तुशास्त्र की दृष्टि से हिडिम्बा मंदिर अपनी एक विशेष पहचान बनाये हुए है

हिडिम्बा मन्दिर, मनाली, हिमाचल प्रदेश-[7] हिडिम्बा महाभारत के महाबली भीम की पत्नी थी। कुल्लु राजवंश हिडिम्बा को कुलदेवी के रूप में मानता है। इस देवी का ऐतिहासिक मन्दिर हिमाचल प्रदेश में प्रमुख हिल स्टेशन मनाली से मात्र एक किलोमीटर दूर डूंगरी नामक स्थान पर स्थित है। जिसे देखने के लिए हर साल हजारों दर्शनार्थी आते हैं। इस मन्दिर का निर्माण 1553 ईस्वी में महाराज बहादुर सिंह ने कराया था। पगोड़ा शैली इस मन्दिर की खासियत है। लकड़ी से निर्मित इस मन्दिर की चार छतें है। नीचे की तीन छतों का निर्माण देवदार की लकड़ी के तख्तों से हुआ है जबकि ऊपर की चौथी छत तांबे एवं पीतल से बनी है। नीचे की छत सबसे बड़ी, दूसरी उससे छोटी, तीसरी उससे भी छोटी और चौथी सबसे छोटी है। सबसे छोटी छत एक कलश जैसी नजर आती है। करीब 40 मीटर उंचे शंकु के आकार में बने इस मन्दिर की दीवारें पत्थर की है। प्रवेश द्वार और दीवार पर सुन्दर नक्काशी हो रही है। अन्दर एक शिला है जिसे, देवी का विग्रह रूप मानकर पूजा जाता है। हर साल जेष्ठ माह में यहां मेला लगता है। यहां पर भीम के पुत्र घटोत्कच का भी मन्दिर है।

बौद्ध वास्तु शैली-[8] लाहौल स्पीती तथा किन्नौर के सीमान्त क्षेत्रों में बौध मंदिर बने हैं। ये मन्दिर मटकंदा दीवारों और सपाट छतों वाले हैं। आवासीय मकान भी इन क्षेत्रों में इसी पद्धति पर बने हैं। मटकंढा दीवारों में लकड़ी की एक चौखट के सहारे मिट्टी कूट-कूट कर भरी जाती है ताकि उस पर हिमपात का अधिक प्रभाव न हो। अनेक बौद्ध मन्दिर मात्र देवालय ही नहीं अपितु विहार भी हैं जिनमें भिक्षुओं और लामाओं के आवास की व्यवस्था रहती है जो पुराने बौद्ध बिहार हैं, उनमें दीवारों में खिड़कियां नहीं बनी हैं। मूर्ति कक्ष में बहुमूल्य धातुओं और पत्थरों से जटित पूजा-स्तूप भी रहता है। पूजा कक्ष में स्थानिय पूजा उपकरण तथा वाद्य यंत्र अवश्य रहते हैं। बौद्ध मन्दिरों की बाहरी छत छोटी-छोटी पताकाओं से सज्जित रहता इन पताकाओं पर भी "ओउम् मणि पदमे हूँ" का मंत्र लिखा होता है। |

पहाड़ी वास्तु शैली[9] **-** यह शैली शिखर एवं पैगोडा स्थापत्य शैलियों के अतिरिक्त विशुद्ध स्थानीय शैली के रूप में अपना परिचय देती है। अनगढ़ पत्थरों और लकड़ी के बंधकों की सूखी चिनाई, लकड़ी के तख्तों या स्लेटों की ढलवां छत दीवारों के बाहर चारो ओर बने प्रक्षेपित बरामदे पहाड़ी वास्तु शैली की प्रमुखता है। हिमाचल प्रदेश के कुछ घाटी और मैदानी क्षेत्रों को छोड़कर शेष पर्वतीय क्षेत्रों में यह पद्धति प्रचलित है।

पहाड़ी शैली के दो मंजिला या तीन मंजिला बालकनी युक्त मन्दिर के लिए प्रवेश मार्ग निचली मंजिल की एक दीवार के द्वार से ही होता है। भीतर प्रवेश पा जाने पर ऊपर की मंजिल में जाने के लिए एक अलग सीढ़ी होती है। देवस्थान में देवता की मूर्ति, मोहरे, आभूषण, वस्त्र, वाद्य-यंत्र और राजचिह्न सुरक्षित रखे जाते हैं। इस प्रकार स्थानीय शैली और पैगोडा शैली के मन्दिरों की बालकनियों में कोई अन्तर नहीं होता। पहाड़ी वास्तु शैली के मन्दिरों में मगर, महादेव, छतरी (मण्डी), बिजली महादेव, वसिष्ठ मन्दिर (कुल्लू), कामरू मन्दिर, संगला (किन्नौर) प्रमुख हैं।

बंगलानुमा वास्तु शैली-[10] इस शैली में धरातल और प्रदक्षिणा पथ से घिरे गर्भगृह के मध्य की ऊंचाई सामान्य आवासीय शैली के मन्दिरों की अपेक्षा कम होती है। दंगलानुमा आवासीय शैली में गर्भगृह दूसरी मंजिल में होता है। निचली मंजिल चारों ओर से काष्ठ-स्तम्भों से घिरी रहती है और इन्हीं काष्ठ स्तम्भों पर दूसरी मंजिल पर स्थित गर्भगृह को प्रदक्षिणा पथ रहता है। कुल्लू की उपत्य में बशलेओ दरें जोत के नीचे श्रृंग ऋषि का मन्दिर और मणिकर्ण में एक मन्दिर इसी आधार पर बना है।

नाग देवी देवताओं के देहरे व डयोढियां-[11] प्रदेश के अधिकांश पर्वतीय क्षेत्रों में नाग और देवी मन्दिर स्थित हैं। ऐसे मन्दिर पहाड़ी नदी, नालों या

वावडी चश्मों के किनारे पाए जाते हैं। इनकी निर्माण पद्धति एक जैसी है। पत्थरों का एक वर्गाकार चबुतरा ऐसे मन्दिर की आधार भूमि है। चबूतरा अनगढ़ पत्थरों से निर्गत रहता है। इस चबूतरे के मध्य में पहाड़ी शैली में भवन निर्माण किया जाता है। ऐसे देवगृह के मध्य में गर्भगृह होता है जिसमें देवता का प्रमुख मोहरा पूजा-अर्चना हेरा रखा जाता है। कहीं कहीं मोहरे के स्थान पर प्रस्तर, काष्ठ या धातु प्रतिमा रखी होती है। देव गृहों के प्रवेश द्वार की ऊंचाई सामान्यतः छोटी ही होती है। गर्भगृह के चारों ओर बना बरामदा खुला होता है। बरामदे में नक्काशी के कलात्मक रूप दिखाई देते हैं। इस नक्काशी में कुछ विरूप चि भी रहते हैं जिनका उद्देश्य देवता की उस शक्ति का दिग्दर्शन है जिसे देख अनिष्टकारी आसुरी शक्तियां, भूत-प्रेत भाग जाते हैं।

मन्दिरों की दीवारों पर विशेषतया प्रवेश द्वार पर मेटे-बकरों के अथवा सींग टंगे रहते हैं जिन्हें श्रद्धालु अपनी मनौती पूरी होने अथवा कि मेले-त्यौहार के अवसर पर चढ़ाते हैं। अनेक स्थानों में ये देवगृह अति साधा रूप में पाए गए हैं। इन देवालयों में नियमित रूप में पूजा नहीं होती लेकिन ग्रामवासी इन्हें श्रद्धा और भय की मिश्रित भावना से देखते हैं।

मुगल एवं सिक्ख प्रभावित वास्तु शैली-[12] 15वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में हिन्दू और मुस्लिम वास्तुकला में समन्वय की प्रक्रिया का आरम्भ होता है। राजपूत राजाओं की स्मृति में समाधि के रूप में छत्रियों का निर्माण होने लगा। इन छत्रियों में मेहराबों, छज्जों और धारीदार गुम्बद का प्रयोग हुआ। अनेक मन्दिरों में शिखरों के साथ गोलाकार गुम्बद बने। हिमाचल प्रदेश के निचले क्षेत्रों में गुम्बद और सपाट छत वाले मन्दिर बने । ऐसे मन्दिर उन क्षेत्रों में अधिक हैं जहां पहाड़ी क्षेत्रों की अपेक्षा वर्षा कम होती है। गुम्बद शैली का प्रचलन 18वीं और 19वीं शती में हुआ। अविभाजित पंजाब में मुगलों के

हाथों से सत्ता निकलकर सिक्खों के हाथों में आई। रिवालसर और पांवटा साहिब के गुरूद्वारे तथा नाहन में कालिस्थान का मन्दिर इसी शैली से प्रभावित है।

इसके अलावा प्रदेश में गुम्बद शैली के मन्दिरों में कांगड़ा का ज्वालामुखी मन्दिर, चिन्तपूर्णी मन्दिर (ऊना), सिरमौर में रेणुका मन्दिर तथा मण्डी का कामेश्वर मन्दिर प्रमुख है।

मुगल एवं राजपूत शैलियों से प्रभावित मन्दिर- [१३] कांगड़ा घाटी में कटोच राजाओं द्वारा निर्मित मन्दिरों पर राजपूत एवं मुगल शैलियों का मिश्रित प्रभाव है। इस शैली में चूने-मिट्टी का प्रयोग विशेषतः किया गया है। यह प्रभाव महलो, पुजा-स्थलों में बारादरियों, समतल छतों, धारीदार गुंबदों, दांतेदार मेहराबो, छज्जों और शीर्षों में देखने से मिलता है। इस मिश्रित श्रेणी के मन्दिरों में गौरी शंकर मन्दिर, नर्वदेवर मन्दिर सुजानपुर-टीहरा), रामगोपाल मन्दिर (डमटाल), ब्रजराज स्वामी मन्दिर (नूरपुर) और राधा-कृष्ण मन्दिर (डाडा-सिबा) शामिल है।

पहाड़ी शैली का समन्चित रूप- भीमाकाली मन्दिर सराहन (बुशहर) पहाड़ी शैली का उदाहरण है। काफी समय तक यह मन्दिर राजवंश का एक निज देवालय रहा। मन्दिर की दीवारें लकड़ी और पत्थर की शुष्क चिनाई से निर्मित हैं। छतें स्लेटों से आच्छादित हैं और ढलानदार हैं। इस समूचे परिसर को देखने से यह आभास होता है कि इस शिखर शैली के मन्दिर में पहाड़ी वास्तुकला की पिरामिडी, आवासीय, पैगोडा आदि विभिन्न शैलियों का समन्वय हुआ है। [१४]

सारांश- इस प्रकार हिमाचल प्रदेश में मंदिर वास्तुकला का सुसमृद्ध रूप देखने को मिलता है। भारतीय वास्तुशास्त्र की विविध शैलिओं के साथ-साथ

स्थानीय पहाड़ी वास्तु शैली का अपना विशेष स्थान है। यह वास्तुकला अत्यन्त प्राचीन एवं पारम्परिक है। शिखर शैली पैगोडा शैली, बौद्ध वास्तु शैली पहाड़ी वास्तु शैलीए बंगलानुमा वास्तु शैली तथा मुग़ल मिश्रित वास्तु शैली यहां की प्रमुख वास्तु शैलियां है जिनमें नागरशैली तथा पौगड पौगड शैली तथा शिखर शैली स्थानीय वास्तु शैलियां है। यहां के अधिकांश मंदिर इन्हीं शैलियों में निर्मित है। यह मंदिर वातावरण एवं भौगोलिक स्थितियों के अनुसार बनाएं गए है। मंदिरों की प्रमुख विशेषता इनकी दिवारों पर की गई नक्काशी है। नक्काशी में देवी-देवताओं के चित्रण के अतिरिक्त पशु-पक्षियों फूल पत्तियों की नक्काशी है जो इनकी सुन्दरता में चार चांद लगाती है।

सन्दर्भ-

१- हिमाचल प्रदेश एक बहु-आयामी परिचय, अध्याय ११, पृष्ठ ३35

२- मेरा हिमाचल , पृष्ट -४२

३- The Wander land himachal Pradesh. An Encyclopedia of Western Himalyasa, Hill Architecture, पृष्ठ -७७५

४- हिमाचल दर्पण , पृष्ट -१८६

५- हिमाचल प्रदेश एक बहु-आयामी परिचय, अध्याय ११, पृष्ठ ३४१.

६- हिमाचल प्रदेश एक बहु-आयामी परिचय, अध्याय ११, पृष्ठ ३४२ .

७- The Wander land himachal Pradesh. An Encyclopedia of Western Himalyasa, Hill Architecture, पृष्ठ -७७१

८- हिमाचल प्रदेश एक बहु-आयामी परिचय, अध्याय ११, पृष्ठ ३४२ .

९- हिमाचल प्रदेश एक बहु-आयामी परिचय, अध्याय ११, पृष्ठ ३४३ .

१० हिमाचल प्रदेश एक बहु-आयामी परिचय, अध्याय ११, पृष्ठ ३४२ .
११ The Wander land himachal Pradesh. An Encyclopedia of Western Himalyasa, Hill Architecture, पृष्ठ -७७७
१२ हिमाचल प्रदेश एक बहु-आयामी परिचय, अध्याय ११, पृष्ठ ३४२ .
१३ And Architecture Of Himachal Pradesh, पृष्ठ -२१७
१४ The Wander land himachal Pradesh. An Encyclopedia of Western Himalyasa, Hill Architecture, पृष्ठ -७७६

डॉ. सुरेश शर्मा
सहायक आचार्य, ज्योतिष विद्याशाखा
केन्द्रीय संस्कृत विश्वविद्यालय
श्री रघुनाथकीर्ति परिसर देवप्रयाग

मानव तस्करी की समस्या को बयां करती हिंदी आदिवासी कहानियाँ

नेहा यादव

भूमिका- स्वाभाविक मानवीय जीवन को त्यागने और सभ्य बनने का ढोंग करते-करते मनुष्य वस्तुओं से आगे बढ़कर इंसानों की खरीद-फरोख्त में पूरी तरह से रम चुका है। उसके लिए इंसान और वस्तु में कोई फर्क नहीं रह गया है। आए दिन अखबारों के पन्ने मानव तस्करी की खबरों से भरे होते हैं। फिर भी ध्यान की बजाय उपेक्षा की श्रेणी में इनकी संख्या ज्यादा बढ़ रही है। आज यह समस्या पूरे विश्व को अपने चंगुल में जकड़ चुकी है। इस खरीद बेच का उद्देश्य शारीरिक शोषण, अंग निष्कासन, जबरन विवाह, बंधुआ मजदूरी आदि अपराध होते हैं। वर्ष 2017 में राजस्थान राज्य में ईंट भट्ठा कामगारों के अध्ययन में शोधकर्ताओं ने पाया कि उत्तर प्रदेश, छत्तीसगढ़, बिहार और राजस्थान राज्यों के 40% से भी अधिक मौसमी कामगारों की भट्ठा मालिकों के प्रति देनदारी थी जो पूरे मौसम में कामगारों द्वारा अर्जित राशि से भी अधिक था। कुछ राज्यों में शोषणकारी ठेकेदारों जो बंधुआ मजदूरी में श्रमिकों को फंसा लेते थे। वे स्थानीय सरकारी अधिकारी अथवा राजनीतिक रूप से प्रभावशाली व्यक्ति हैं। कुछ मानव तस्करों ने बंधुआ मजदूरों के साथ गंभीर दुर्व्यवहार किया जिनमें वे लोग भी शामिल थे जिन्होंने अपनी वैध मजदूरी मांगी और कुछ बंधुआ मजदूरों की मानव तस्करों के कब्जे में मौत हो गई। मानव तस्कर 8 वर्ष की कम आयु के बच्चों का कृषि (नारियल, नील, अदरक और गन्ना) निर्माण घरों में काम करवाकर, परिधान, इस्पात और कपड़ा उद्योग (चर्मशोधन, चूड़ी और साड़ी बनाने वाली फैक्ट्रियां), भीख मांगना, अपराध करवाने, खाद्य प्रसंस्करण फैक्ट्रियों जैसे,(बिस्कुट, रोटी बनाने, मांस की पैकिंग करने और अचार बनाने, फूलों की खेती, कपास, जहाज का विखंडन करने और विनिर्माण (तार और कांच) में जबरन मजदूरी

करवाकर शोषण करते हैं।अनेक संगठनों ने पाया कि मानव तस्करी पीड़ितों के विरुद्ध शारीरिक हिंसा- बंधुआ मजदूरी और यौन मानव तस्करी दोनों रूपों में की गई जोकि भारत सहित विशेष रूप से दक्षिण एशिया में व्याप्त थी। भारतीय स्तर पर ज्यादातर इससे प्राभावित क्षेत्रों में बिहार, झारखंड,राजस्थान, उत्तर प्रदेश, छत्तीसगढ़ तथा आदिवासी बहुल राज्य रहें हैं। भारतीय संविधान के अनुच्छेद 23 व 24 इसके रोकथाम की बात करते हैं तो वहीं भारतीय दण्ड संहिता की धारा 370 व 370A मानव तस्करी के खतरे का मुकाबला करने हेतु व्यापक उपाय प्रदान करती है। धारा 372 व 373 वेश्यावृति के उद्देश्य से लड़कियों को बचाने व खरीदने से संबंधित है। IPTA(1956), POCSO आदि अधिनियमों की सक्रियता होने के बावजूद भी भारत अभी सुधार की स्थिति में कुछ बेहतर नहीं कर पाया है। यूनाइटेड स्टेट की एक रिपोर्ट के मुताबिक भारत को दूसरी श्रेणी में रखते हुए कहा गया है कि भारत तस्करी को खत्म करने के लिए न्यूनतम मांगों को पूरा नहीं कर पाया है जबकि इसे खत्म करने के लिए सरकार लगातार आवश्यक प्रयास करती रही। साथ ही जब बंधुआ मजदूरी की बात आती है तो यह प्रयास अपर्याप्त प्रतीत होते हैं। साहित्य की दुनिया ने भी इन समस्याओं पर अपनी दृष्टि फेरी हैं। यहां हम बात करेंगे आदिवासी क्षेत्रों में हो रही मानव तस्करी की घटनाओं के विषय में जिसके आधार में हैं वाल्टर भेंगरा तरुण की कहानी संगी, लसा, मक्कड़जाल, मंगल सिंह मुंडा की कहानी धोखा, रूपलाल बेदिया की कहानी अमावस्या की रात में भागजोगनी।

बीज शब्द- मानवता, तस्करी, सामाजिक समस्या, आदिवासी, अधिनियम, हिंदी कहानी साहित्य।

शोधालेख-

हाल ही में प्रसिद्ध साहित्यकार हरिराम मीणा जी 28 दिसंबर 2022 को दैनिक भास्कर पत्र में अपने लेख(आदिवासी बच्चों की तस्करी पर आखिर कब लगा पाएंगे विराम?) के माध्यम से समाज में चल रही मानव तस्करी की समस्याओं पर बात करते हुए हमें सचेत कर रहे हैं कि "विस्थापन और बेरोजगारी ने आदिवासी समाज के सामने जीवन यापन की एक बड़ी समस्या खड़ी कर दी है। इसका सबसे बुरा असर आदिवासी समाज के नाबालिगों पर पड़ रहा है। गरीबी और बेरोजगारी की वजह से मां-बाप बेटियों को बेच रहे हैं या बच्चों को बंधक मजदूरों के रूप में गिरवी रख रहे हैं। इस अपराध में दलाल एवं गिरोह बेधड़क सक्रिय हैं। बेटी बचाओ बेटी पढ़ाओ का सरकारी नारा दम तोड़ता दिखाई दे रहा है। शादी का लालच देकर इन बालिकाओं को नारकीय जीवन में धकेला जा रहा है अपराधिक गिरोह द्वारा कई किशोरियों को फर्जी दुल्हन बनाकर ससुराल से नगदी व गहने लेकर फरार हो जाने का काम सौंपा जाता है, उनसे वेश्यावृत्ति करवाई जाती है, ऐसे गिरोह के चंगुल से भाग निकलना इन बच्चियों के लिए असंभव हो जाता है…वे आगे लिखते हैं कि दक्षिणी राजस्थान से निकटवर्ती गुजरात,मध्य प्रदेश एवं महाराष्ट्र में आदिवासी समाज खासकर किशोर किशोरियों का पलायन खतरे का संकेत है। गरीबी के कारण इन्हें बेचा जा रहा है, ठेके पर दिया जा रहा है। यह बच्चे अंततः हमारे देश का भविष्य है और भविष्य को दोनों हाथों से थामना बहुत जरूरी है।"[1]

मानव तस्करी कि यदि हम बात करें तो इसमें श्रम और यौन शोषण आदि के उद्देश्य से बल या धोखे से व्यक्तियों का अवैध परिवहन शामिल है तथा ऐसी गतिविधियों को अंजाम देने वालों को आर्थिक लाभ होता है। इसके अंतर्गत शारीरिक शोषण, अंग निष्कासन, जबरन विवाह, बंधुआ

मजदूरी आदि अपराध निहित है। आंतरिक बलात मजदूरी भारत की सबसे बड़ी तस्करी की समस्या है। मानव तस्कर ऋण आधारित दबाव (बंधुआ मजदूरी) का उपयोग पुरुषों, महिलाओं और बच्चों को कृषि, ईंट, भट्ठों, चावल मिलों, कढ़ाई और परिधान तैयार करने वाली फैक्ट्रियों और पत्थर की खदानों में काम करने हेतु मजबूर करने के लिए किया करते हैं। मानव तस्कर बड़े अग्रिम भुगतान का वायदा कर चालाकी से उन्हें कम भुगतान करने वाली नौकरियों को स्वीकार करने के लिए तैयार कर लेते हैं। जहां उसके बाद तस्कर अत्यधिक ब्याज दरें जोड़ते हैं। आवास, स्वास्थ्य देखभाल जैसी मदों के लिए नई कटौती करते हैं अथवा ऋण की राशि में जालसाजी करते हैं जिसे वे कम अथवा बिना वेतन के लिए काम जारी रखने में श्रमिकों को मजबूर करने के लिए उपयोग करते हैं। गैर सरकारी संगठनों ने भारत में कम से कम 8 मिलियन मानव तस्करी पीड़ितों का आकलन किया है जिनमें से अधिकांश बंधुआ मजदूर हैं। अंतरपीढ़ीगत बंधुआ मजदूरी जारी रही, जबकि मानव तस्कर मृतक की बकाया देनदारियों को उनके माता-पिता, भाई-बहन अथवा बच्चों को अंतरित कर देते थे। अक्सर मानव तस्कर सबसे वंचित समाज के लोगों को निशाने पर रखते हैं। मानव तस्कर 6 साल से भी कम आयु के छोटे बच्चों सहित पूरे परिवारों को ईंट भट्ठों में काम के लिए मजबूर करते हैं। वर्ष 2017 में राजस्थान राज्य में ईंट भट्ठा कामगारों के अध्ययन में शोधकर्ताओं ने पाया कि उत्तर प्रदेश, छत्तीसगढ़, बिहार और राजस्थान राज्यों के 40% से भी अधिक मौसमी कामगारों की भट्ठा मालिकों के प्रति देनदारी थी जो पूरे मौसम में कामगारों द्वारा अर्जित राशि से भी अधिक था। कुछ राज्यों में शोषणकारी ठेकेदारों जो बंधुआ मज़दूरी में श्रमिकों को फंसा लेते थे। वे स्थानीय सरकारी अधिकारी अथवा राजनीतिक रूप से प्रभावशाली व्यक्ति हैं। कुछ मानव तस्करों ने बंधुआ मजदूरों के साथ गंभीर दुर्व्यवहार किया जिनमें वे लोग भी

शामिल थे जिन्होंने अपनी वैध मजदूरी मांगी और कुछ बंधुआ मजदूरों की मानव तस्करों के कब्जे में मौत हो गई। मानव तस्कर झारखंड और उत्तर प्रदेश राज्यों में कालीन उत्पादन और अभ्रक खनन और वस्त्रों में बंधुआ मजदूरी में पूरे परिवारों सहित वयस्कों और बच्चों का शोषण करते हैं। कई बार वयस्कों को किसी भी कारण से परिसर छोड़ने पर बच्चों को जमानत के रूप में पीछे छोड़ा जाना अपेक्षित होता था। असम में सरकारी स्वामित्व वाले चाय बागान, कामगारों को राज्य द्वारा अधिदेशित अनिवार्य न्यूनतम मजदूरी से बहुत कम भुगतान करते हैं और कामगारों को उनके ऋण और व्यय के दस्तावेजीकरण के लिए वेतन पर्ची प्रदान नहीं करते हैं। भारतीय कानून, चाय स्टेट को कामगारों को नकदी अथवा अन्य लाभ के दोनों स्वरूप में भुगतान करने की अनुमति देता है, लेकिन शोधकर्ताओं ने यह नोट किया कि कामगारों के वेतन के भाग बनने वाले खाद्य राशन की गुणवत्ता और मात्रा अपर्याप्त थी और काटी गई राशि से अधिक थी। असम में 50 चाय बागानों में 37% श्रमिकों के दैनिक व्यय उनकी दैनिक आय से अधिक थे, जिससे कामगार ऋण आधारित दबाव के प्रति अत्यंत संवेदनशील हो गए। मानव तस्कर 8 वर्ष की कम आयु के बच्चों का कृषि (नारियल, नील, अदरक और गन्ना) निर्माण घरों में काम करवाकर, परिधान, इस्पात और कपड़ा उद्योग (चर्मशोधन, चूड़ी और साड़ी बनाने वाली फैक्ट्रियां), भीख मांगना, अपराध करवाने, खाद्य प्रसंस्करण फैक्ट्रियों जैसे (बिस्कुट, रोटी बनाने, मांस की पैकिंग करने और अचार बनाने, फूलों की खेती, कपास, जहाज का विखंडन करने और विनिर्माण (तार और कांच) में जबरन मजदूरी करवाकर शोषण करते हैं। अनेक संगठनों ने पाया कि मानव तस्करी पीड़ितों के विरुद्ध शारीरिक हिंसा- बंधुआ मजदूरी और यौन मानव तस्करी दोनों रूपों में की गई जोकि भारत सहित विशेष रूप से दक्षिण एशिया में व्याप्त थी। कुछ मानव

तस्कर, महिलाओं और बालिकाओं को गर्भधारण करने और बिक्री के लिए बच्चों को पैदा करने हेतु मजबूर करते हैं। मानव तस्कर भारतीय और नेपाली महिलाओं और बालिकाओं का अपहरण करते हैं और भारत में "आर्केस्ट्रा नृत्यांगना" के रूप में काम करने के लिए मजबूर करते हैं। विशेष रूप से बिहार राज्य में जहां लड़कियां नृत्य समूहों के साथ तब तक प्रदर्शन करती हैं जब तक कि वे जालसाजी पूर्ण तरीके से बनाया गया ऋण नहीं चुका देती हैं। मानव तस्कर धार्मिक तीर्थ स्थलों और पर्यटन स्थलों में यौन मानव तस्करी में महिलाओं और बच्चों का शोषण करते हैं, कुछ मानव तस्कर रेलवे स्टेशनों सहित सार्वजनिक स्थानों से बच्चों का अपहरण करते हैं, मादक पदार्थों के जरिए बालिकाओं को फंसाते हैं और बालिकाओं को यौन मानव तस्करी में जाने के लिए मजबूर करते हैं और 5 वर्ष जैसी कम आयु में हार्मोन इंजेक्शन देते हैं ताकि वे अपनी आयु से बड़ी प्रतीत हों। कुछ कानून का प्रवर्तन करने वाले अधिकारी संदिग्ध मानव तस्करों और वेश्यालय के स्वामियों को कानून के प्रवर्तन से बचाते हैं और पीड़ितों से यौन मानव तस्करी करने वाले प्रतिष्ठानों और यौन सेवाओं की एवज में रिश्वत लेते हैं।

अब तक हमने उन समस्याओं पर बात की जो मानव तस्करी के रूप में हमें दिखाई देती हैं किन्तु सरकार इस अपराध को रोकने के लिए कौन-कौन से कदम उठाती है यह भी जानना हमारे लिए जरूरी है। भारतीय संविधान के अनुसार यदि बात करें तो अनुच्छेद 23 और अनुच्छेद 24 में इससे संबंधित कुछ प्रावधान दिए गए हैं। अनुच्छेद 23- यह मानव तस्करी और बेगार (बिना भुगतान के जबरन श्रम) को प्रतिबंधित करता है। अनुच्छेद 24- जो 14 वर्ष से कम उम्र के बच्चों के कारखानों और खदानों जैसे खतरनाक स्थानों में रोजगार पर रोक लगाता है। भारतीय दंड संहिता आईपीसी की धारा 370 और 370 ए मानव तस्करी के खतरे का मुकाबला

करने हेतु व्यापक उपाय प्रदान करती हैं जिसमें शारीरिक शोषण या किसी भी रूप में यौन शोषण, गुलामी दास्तां या अंगों को जबरन हटाने सहित किसी भी रूप में शोषण के लिए बच्चों की तस्करी शामिल है। धारा 372 एवं 373 वेश्यावृत्ति के उद्देश्य से लड़कियों को बचाने और खरीदने से संबंधित है। अन्य विधानों की यदि बात करें तो अनैतिक व्यापार रोकथाम अधिनियम 1956(IPTA) व्यवसायिक यौन शोषण के लिए तस्करी की रोकथाम हेतु प्रमुख कानून है। महिलाओं और बच्चों की तस्करी से संबंधित अन्य विशिष्ट कानून बनाए गए हैं जैसे बाल विवाह निषेध अधिनियम 2006, बाल श्रम प्रणाली (उन्मूलन) अधिनियम 1976, बाल श्रम निषेध और विनियमन अधिनियम 1986, मानव अंग प्रत्यारोपण अधिनियम 1994। यौन अपराधों से बच्चों का संरक्षण (pocso) अधिनियम 2012। यह बच्चों को यौन शोषण से बचाने के लिए विशेष कानून है। इस मामले में भारत द्वारा उठाए गए अन्य कदम पर यदि बात करें तो मानव तस्करी के अपराध से निपटने के लिए राज्य सरकारों द्वारा विभिन्न निर्णयों को संप्रेषित करने और कार्यवाई पर अनुवर्ती कार्यवाई करने हेतु गृह मंत्रालय ने वर्ष 2006 में एंटी ट्रैफिकिंग नोडल सेल की स्थापना की थी। मानव तस्करी रोधी इकाई (AHTU), यह गृह मंत्रालय ने एक व्यापक योजना स्ट्रेथनिंग लॉ एनफोर्समेंट रिस्पांस इन इंडिया अगेंस्ट ट्रैफिकिंग इन पर्सन्स 2010 के तहत देश के कई जिलों में AHTU की स्थापना के लिए फंड जारी किया है। AHTU की प्राथमिकता पीड़ितों की देखभाल और पुनर्वास के लिए कानून प्रवर्तन और अन्य संबंधित एजेंसियों के साथ संपर्क करना है। संयुक्त राष्ट्र सम्मेलन में भारत ने वर्ष 2011 में अंतरराष्ट्रीय संगठित अपराध पर संयुक्त राष्ट्र सम्मेलन (UNCTOC) की पुष्टि की है जिसमें अन्य लोगों के बीच विशेष रूप से महिलाओं और बच्चों की तस्करी को रोकने और दंडित करने के लिए प्रोटोकॉल है। भारत ने

वेश्यावृत्ति के लिए महिलाओं और बच्चों की तस्करी को रोकने के लिए और इसका मुकाबला करने हेतु सार्क कन्वेंशन की पुष्टि की है महिलाओं और बच्चों में मानव तस्करी की रोकथाम प्राप्ति प्रत्यावर्तन और तस्करी के पीड़ितों के एकीकरण के लिए भारत व बांग्लादेश के बीच एक समझौता ज्ञापन पर जून 2015 में हस्ताक्षर किया गया ।न्यायिक संगोष्ठी यह उच्च न्यायालय स्तर पर आयोजित की जाती है इसका उद्देश्य मानव तस्करी से संबंधित विभिन्न मुद्दों के बारे में न्यायिक अधिकारियों को संवेदनशील बनाना और त्वरित अदालती प्रक्रिया सुनिश्चित करना है। क्षमता निर्माण में सरकार द्वारा पूरे देश में क्षेत्रीय स्तर, राज्य स्तर पर पुलिस अधिकारियों तथा अभियोजकों के लिए मानव तस्करी का मुकाबला करने हेतु विभिन्न प्रशिक्षण कार्यशालाएं आयोजित की गई हैं।

इन सारे प्रावधानों के होते हुए भी तस्करी की समस्या को जड़ से खत्म करने का सपना अभी भी काफी दूर दिखाई दरहा है। यूनाइटेड स्टेट ने 2021 में एक रिपोर्ट जारी किया है जिसमें विश्व के सभी देशों को तीन श्रेणियों में बांटकर मानव तस्करी की समस्या निवारण स्थितियों पर अपना विचार प्रकट किया है। यह वर्गीकरण किसी देश के अवैध व्यापार समस्या की भयावहता पर आधारित नहीं है बल्कि मानव तस्करी के उन्मूलन के लिए न्यूनतम मांगों को पूरा करने के प्रयासों पर आधारित है। **टायर फर्स्ट, टायर सेकंड एंड टायर थर्ड। टायर फर्स्ट** में वे देश जिनकी सरकारें पूरी तरह से तस्करी पीड़ित संरक्षण अधिनियम(मानव तस्करी पर अमेरिका का कानून) के न्यूनतम मानकों का पालन करती हैं। जैसे संयुक्त राज्य अमेरिका, ब्रिटेन, ऑस्ट्रेलिया, बहरीन और दक्षिण कोरिया। **सेकंड टायर** में वे देश जिनकी सरकारें तस्करी पीड़ित संरक्षण अधिनियम के न्यूनतम मानकों का पूरी तरह से पालन नहीं करती लेकिन उन मानकों के अनुपालन के तहत खुद को लाने के

लिए महत्वपूर्ण प्रयास कर रही हैं। ये वे देश है जहां तस्करी के पीड़ितों की संख्या महत्वपूर्ण स्तर पर है या अत्यधिक बढ़ रही है जैसे भारत। **टायर थर्ड में** वे देश आते हैं जिनकी सरकारें न्यूनतम मानकों का पूरी तरह पालन नहीं करती हैं और ऐसा करने के लिए महत्वपूर्ण प्रयास नहीं कर रही हैं जैसे अफगानिस्तान, म्यांमार, चीन, क्यूबा, एट्रिया, उत्तर कोरिया, ईरान, रूस, दक्षिण सूडान, सीरिया और तुर्कमेनिस्तान।

भारत को दूसरी श्रेणी में रखा गया है और उस पर टिप्पणी करते हुए कहा गया है कि भारत तस्करी को खत्म करने के लिए न्यूनतम मांगों को पूरा नहीं कर पाया है जबकि इसे खत्म करने के लिए सरकार लगातार आवश्यक प्रयास करती रही साथ ही जब बंधुआ मजदूरी की बात आती है तो यह प्रयास अपर्याप्त प्रतीत होते हैं।

कहते हैं कि साहित्य समाज का दर्पण होता है. यदि इसी आधार पर हम बात करें तो आदिवासी कथाकारों ने भी इन विषयों पर अपनी लेखनी चलाई है जो समाज में चल रहे इस घृणित अपराध को बयां करने में सक्षम है। आदिवासी कथाकार **वाल्टर भेंगरा तरुण की कहानी संगी** और **मंगल सिंह मुंडा की कहानी धोखा** बंधुआ मजदूरी की भयावहता को बयां करती है तो वही **वाल्टर भेंगरा तरुण की कहानी लसा** और **मक्कड़जाल** तथा **रूपलाल बेदिया** की कहानी **अमावस की रात में भगजोगनी** यौन शोषण हेतु स्त्रियों की खरीद-फरोख्त का पर्दाफाश करती है। यह कहानियां उन मनुष्यों का दर्द बयां करती है जो आर्थिक तंगी के कारण इस घृणित जाल में फंसाये जाते हैं। वाल्टर भेंगरा तरुण की कहानी **संगी** उस युवा पीढ़ी का आह्वान करती है जो आदिवासी क्षेत्रों से अपने लोगों को बंधुआ मजदूरी के चक्रव्यूह में फंसने से रोकने का प्रयास करते हैं। कहानी की मुख्य पात्र **दुलारी हेंब्रम** ट्रेन यात्रा में बिना टिकट के जा रहे आदिवासी मजदूरों के प्रति संवेदना

प्रकट करते हुए अपनी जागरूकता का प्रमाण देती है और कहती है कि "देखिए इन भोले-भाले गांव के मजदूरों को शहर के ठेकेदार बहला-फुसलाकर दिल्ली पंजाब ले जा रहे हैं पूछने पर बता रहे हैं कि ठेकेदार ने इन्हें 20 रुपए प्रतिदिन की मज़दूरी के साथ मुफ्त राशन पानी और इलाज आदि की सुविधा देने की बात कही है यह कितना बड़ा झूठ और फरेब है। आज इतनी बड़ी रकम कोई भी ठेकेदार अपने मजदूरों को नहीं देता और देखिए इनमें जवान बहने और मासूम बच्चे भी शामिल हैं। इन्हें चोरी-छिपे ले जाया जा रहा है। रास्ता खर्चा भाड़ा आदि के नाम पर इनसे 200 रुपए भी ऐंठ लिए गए हैं। इनके पास टिकट भी नहीं है कानूनन राज्य से बाहर मजदूरों को रजिस्ट्रेशन कराने के बाद ही ले जाया जा सकता है।"[2] यह सारी व्यथा वह अपने मित्र फागू से कहती है और तत्परता दिखाते हुए टीटी से आग्रह करती है की वह इन्हें शहर जाने से रोके। जहां लेखक दुलारी के माध्यम से यह पहले ही सचेत कर देना चाहता है कि जिस दुनिया की कल्पना कर आप घरों को छोड़कर शहरों की तरफ चले आ रहे हैं वह महज एक मृग मरीचिका है। जिसकी तलाश में आपका जीवन नर्क बनकर रह जाएगा। लेखक लिखते हैं कि दुलारी का स्वर गुस्से में और भी अधिक कांपने लगा था "यह अनपढ़ आदिवासी मजदूर हमारे भाई बहन हैं इनका शोषण और नहीं किया जा सकता। इन्हें लालच देकर बहला-फुसलाकर चोरी से ले जाया जा रहा है गैरकानूनी ढंग से बंधुआ मजदूरों की तरह इन से काम लेते हैं ठेकेदार।"[3] महानगरों में काम करने वाले फैक्ट्रियों में कारखानों में काम करने वाले मजदूरों की दयनीय स्थिति को देखकर स्वत: अनुमान लगाया जा सकता है कि उनके काम के आधार पर उनका मेहनताना बराबर नहीं मिलता है। ठेकेदार इधर-उधर करके मजदूरी में से कटौती करता है और श्रम की जब बात आती है तो अपने फायदे के लिए अधिक से अधिक काम करवाता है।

मंगल सिंह मुंडा की कहानी धोखा ईंट भट्ठों में काम करने वाले उन मजदूरों के बारे में अभिव्यक्ति दर्ज करती है कि ईंट भट्ठा में काम करने वाली स्त्रियों के साथ भट्ठा मालिक, ठेकेदार किस तरह से दोहरा छल कपट करते हैं। एक तो उनके श्रम का मूल्य नगण्य के बराबर रखते हैं और भावनाओं का शोषण अमानवीयता के स्तर पर जाकर करते हैं। इस कहानी की पात्र **मुंगली** अकेली नहीं है बल्कि न जाने ऐसी कितनी मुंगली ईट भट्ठों पर मिल जाएंगी जिनके साथ ठेकेदारों ने प्रेम प्रस्ताव का प्रपंच रच उनके श्रम का मूल्य अपने हिस्से गटक गए होंगे। यह मजदूर अपनी आर्थिक विवशता का दर्द लिए मारे-मारे फिरते हैं जिसका फायदा ये ठेकेदार मनमाने ढंग से उठाते हैं। लेखक लिखते हैं कि"कलकत्ता से दीघा और फिर हल्दिया से बिहार के मोकामा तक, इतने विशाल प्रदेश में ईंट कौन बनाता है, मालूम है? ये ही झारखंड के गरीब आदिवासी। ईश्वर ने इन्हें बड़ी सूझबूझ से बनाया है जो कहो, हां ही में उत्तर देंगे। न कहना तो यह जानते ही नहीं। ईमानदारी की तो यह सजीव मूर्ति हैं। यही सब कारण है इनकी डिमांड का। जिस ठेकेदार के हाथ लगे कि वह चांदी काटने लगता है, क्योंकि 20 का हिसाब लगाओ और 15 का भुगतान कर दो। 5 अपनी जेब में भर लो। क्या बताऊं साहब कभी-कभी इनकी हालत देखकर मुझे भी रोना आता है। .... इनकी गरीबी की आग इतनी भयंकर है कि फूल जैसे मासूम चेहरे भी जलकर खाक हो जाते हैं। यह तो देख रहे हैं ना कितनी सुंदर और चरित्रवान लड़की है। मुंगली नाम है इसका। ठेकेदार रघुनाथ के जाल में फंस गई बेचारी।"[4]

वाल्टर भेंगरा तरुण की कहानी **लसा** उस दृश्य से परिचय कराती है जिसमें आदिवासी क्षेत्रों से लड़कियों को काम के नाम पर शहर ले जाकर देह व्यापार में धकेल दिया जाता है। कहानी में देवेंद्र नामक पात्र वह शिकारी है जो शहरों में लड़कियों को देह व्यापार में बेच देता है और गांव में एक सज्जन

होने का ढोंग कर अपना जाल बिछाता है। इस कार्य में वह अकेला नहीं होता है। वह चुनता है सरला जैसी स्त्री को जिसे आर्थिक मदद हेतु सिलाई सेंटर का झांसा देकर उससे अपने अनुसार काम करवाता है। यहां सरला भी बिचौलिए की भूमिका में दिखाई देती है और गांव की तीन लड़कियों मरियम, तुलसी और फूलबनी की जरा सी आर्थिक मदद कर शहर में काम का प्रलोभन देकर उसे देवेंद्र के हाथों बेच देती है। यह कहानी उन दृश्यों का खुलासा करती जिसमें लड़कियां आदिवासी क्षेत्रों से चुनकर शहर के घरों में आया के काम का प्रलोभन देकर या अन्य कामकाजी कार्यों के लिए तो लाई जाती हैं किंतु यथार्थ के धरातल पर वे मौत के मुहाने में ढकेल दी जाती हैं। देवेंद्र के अमानवीय विचार को लेखक कुछ इस प्रकार लिखते हैं कि"एक दिन देवेंद्र जी का बुलावा आया, सरला खुश थी कि उसे आभार जताने का मौका मिला। वह तैयार होकर बस से संस्था के मुख्यालय पहुंची। सामान्य औपचारिकता के बाद देवेंद्र जी ने सरला से कहा देखो सरला हम बहुत मुश्किल में फंस गए हैं। जो लोग संस्था को आर्थिक मदद देते हैं और जिन लोगों से हम तुम्हारे जैसे लोगों की मदद करते हैं उनकी भी कुछ मांगे कभी-कभी रहती हैं। हम उन्हें ना नहीं कह सकते। दिल्ली में ऐसे ही कुछ साहब लोग हैं जिन्हें उनके घरों में काम करने के लिए घरेलू किस्म की नौकरानियों की जरूरत है तुम इस मामले में हमारी मदद कर सकती हो। तुम्हें आस-पास के गांव की लड़कियों को इस काम के लिए राजी करना होगा लेकिन इस काम में गोपनीयता रखनी होगी किसी तीसरे आदमी तक इसकी भनक नहीं लगनी चाहिए तुम समझ रही हो ना मैं क्या कहना चाहता हूं?"5 इन अल्फाजों से ही साफ-साफ जाहिर होता है कि देवेंद्र की मनसा कैसी है? यहां यह देखने की बात तो यह है कि सरला एक स्त्री होकर भी एक दूसरे स्त्री को उसी कार्य में घसीट लाने को किस तरह विवश कर दी जाती है और समाज के

लिए एक उदाहरण बन जाती है कि स्त्रियां ही स्त्रियों की दुश्मन है जबकि इसके पीछे छिपा है वह शिकारी जो सभ्य होने का ढोंग करता है। लेखक लिखते हैं कि" तुम अभी मेरे साथ चलो फिर तुलसी को लेकर सरला शहर को जाने वाली आखरी बस में चढ़ गई। शाम के धुंधलके में दोनों को किसी ने नहीं देखा। शिकारी को अपना शिकार मिल गया था।"6 वो कहते हैं ना कि जब भूख लगती है तो ध्यान रोटी पर होता है रोटी देने वाले पर नहीं शायद इसीलिए यह मनुष्य के खरीद बेच की दुनिया सबसे पहले उनकी कमजोर पक्ष को अपने कब्जे में लेती है तत्पश्चात अपना फायदा वसूलती है। वाल्टर भेंगरा तरुण की ही कहानी **मक्कड़जाल** जिसमें एक ऐसी स्त्री की कथा है जो दिल्ली के एक घर में आया के रूप में काम के लिए जाती है जहां उसके साथ दुर्व्यवहार होता हैं। उसकी स्मृति से प्रारंभ होती है यह कहानी "नई दिल्ली के पास कॉलोनी से झारखंड की बेटी बचाई गई समाचार पत्र की एक हेडलाइंस सिटी पेज पर छपी हुई थी। समाचार के आगे की पंक्तियों में विवरण दिया गया था कि आशा वेलफेयर सोसाइटी और दिल्ली पुलिस की मदद से झारखंड की एक नाबालिग आदिवासी युवती को रेस्क्यू कर बचाया गया। जल्द ही झारखंड सरकार के महिला कल्याण विभाग को यह युवती सौंप दी जाएगी। सुमंती ने भी वह समाचार पढ़ा वह भी इसी तरह एक दिन दिल्ली के एक बंगले से छुड़ाई गई थी। जिस बंगले में वह आया का काम करती थी उसका मालिक उसके साथ हर तरह से उसकी कमजोरी का फायदा उठाया करता था। मालकिन बात-बात पर नुक्स निकाल कर उसे पीटती, थप्पड़ मारती और कभी-कभी दिन-रात काम कराने के बाद भी दो रोटी तक खाने के लिए नहीं देती थी।... एक दिन तो बच्चे के लिए दूध गर्म करते समय दूध उबलकर चूल्हे के ऊपर फैल गया उस दिन, रात को बतौर सजा खाना नहीं मिला। सुमंती भूखी रही रात भर रोती सिसकती रही। अगले दिन काम में सुस्ती स्पष्ट

झलक रही थी। मेम साहब ने कपड़ा इस्त्री करने को कहा तो गलती से लड़के का यूनिफार्म एक जगह थोड़ा सा जल गया, गुस्से से लाल होकर मेम साहब ने उसी इस्त्री से उसके हाथ को जला दिया। दर्द से कराह उठी थी सुमंती।"[7] शहरों में ठेकेदार आदिवासी क्षेत्रों से लड़कियों को काम का झांसा देकर एक नई जिंदगी का स्वप्न दिखाकर उनके साथ मन माने ढंग से दुर्व्यवहार करते हैं और जहां काम मिलता है वहां भी उन्हें यातनाएं झेलनी पड़ती हैं। यानी मक्कड़जाल कहानी अपने शीर्षक में ही यह बयां करती है कि लड़कियां बिचौलिए रूपी मकड़ी के जाल में किस तरह से फंसकर अपने अस्तित्व की छटपटाहट लिए दम तोड़ देती हैं। समाचार पत्रों में प्रतिदिन इन खबरों का सुर्खियों में बने रहना यह साबित करता है कि यह समस्याएं एक गहरी पैठ बनाए हुए हैं। विवाह का सहारा लेकर आदिवासी क्षेत्रों से स्त्रियों के खरीद बेच की जो समस्याएं सामने आती हैं वो रूपलाल बेदिया जी अपनी कहानी **अमावस की रात में भगजोगनी** में बताते हैं कि भगजोगनी जो अपने घर में भाग जगाने वाली मानी जाती है जिसकी पैदाइश से सब खुश होते हैं वह कहानी में उन स्त्रियों के प्रतिछाया के रूप में दिखाई देती है जो धोखे से विवाह के माध्यम से बेंच दी जाती हैं। इस कहानी में भगजोगनी की शादी एक बिचौलिए के माध्यम से दूर गांव से आए एक व्यक्ति से करा दी जाती है किंतु वह व्यक्ति उसे ले जाकर एक मेले में बेच देता है। जहां उसकी खरीद राजस्थान के एक पुरुष द्वारा की जाती है और वह जब अपने घर लाता है तो वहां का दृश्य देख भगजोगनी दहल जाती है तब उसे यथार्थ का पता चलता है कि वह ठगी गई है। उसे एक सामान की तरह खरीदा और बेचा गया है। राजस्थान पहुंचने पर उससे पता चलता है कि वह किसी एक की ब्याहता नहीं है बल्कि पांच भाइयों की इकलौती पत्नी है। वह एक ऐसे समाज में बेंच दी गई है जहां स्त्री को सहवास के लिए प्रयोग किया जाता है किंतु किसी लड़की

का पैदा होना उनके लिए अपने घर को तोड़ने की बात जैसा है। लेखक लिखते हैं कि "मेले में गजब की भीड़ थी। ऐसी भीड़ हमारे गांव से कुछ दूर अगहन पूर्णिमा के दिन लगने वाले जतरा में ही होती थी। लेकिन हमारे गांव के मेले जैसा इस मेले में नाच गाना कहीं नजर नहीं आ रहा था। छोटे-मोटे मानवचलित झूले जरूर दिखाई दे रहे थे। गुब्बारे खिलौने तमाशे तरह-तरह के सामानों की दुकानें भी सजी हुई थी। एक तरफ पंक्तिबद्ध कई कतारों में बेंचें लगी हुई थी। मुझे एक बेंच पर बैठने को कहा गया। तमाम बेंचों पर वैसे ही कतारों में लड़कियां बैठी हुई थी। संभवत उनमें से कुछ औरतें भी थी। सब के सब अच्छे वस्त्रों में सजी-धजी। वे सभी मेरी ही जैसी नवविवाहिता होंगी, मैंने सोचा था। वे सब मेरी ही जैसी डरी सहमी लग रही थी। हमें देखने वालों का जैसे रेला था। उनमें किशोर युवा बूढ़े सभी थे। दुल्हनों को देखने के लिए लोग का इकट्ठा होने मुझे ज्यादा संभावित नहीं लगा परंतु मैंने गौर किया कि उन देखनेवालों में एक भी स्त्री या लड़की नहीं थी। इस कारण मैं आश्चर्यचकित हो रही थी कि यह कैसा रिवाज है कि नवविवाहितों के लिए मेला लगा हुआ और केवल पुरुष देखने आए हो! "[8]..... आर्थिक तंगी से परेशान परिवारों को देखकर बिचौलिए अपना स्वार्थ सिद्धि करते हुए आदिवासी लड़कियों का विवाह तो करा देते हैं पर शहर की तरफ लाकर मेले में ले जाकर उनको दूसरे व्यक्तियों के हाथों बेच देते हैं। मानव तस्करी की यह एक गंभीर समस्या यहां दिखाई देती है कि मनुष्य ही मनुष्य का सौदा कर रहा है और इस बात का उसे पछतावा भी नहीं है। भगजोगनी उस मेले में एक ऐसे परिवार को बेच दी जाती है जहां बेटी जैसा कोई शब्द नहीं है पर पत्नी की आवश्यकता होती है। लेखक आगे कहते हैं कि "इस बीच बहुत कुछ बदल गया था कितनी ऋतुए आईं और चली गई, नहीं बदला तो दूसरे राज्यों से लड़कियों का धोखे से

दलालों के द्वारा खरीद कर लाना। उन लड़कियों को किसी से बात करने नहीं दिया जाता है।"[9]

इन सभी कहानियों में मानव तस्करी बंधुआ मजदूरी के रूप में,यौन शोषण हेतु खरीद-फरोख्त इन सारे उद्देश्यों को पूर्ण करने के लिए किस तरह से जाल बिछा कर स्वार्थ सिद्धि की जाती है ।यह कहानियां समस्याओं से रूबरू तो कराती है साथ ही साथ समाधान की ओर भी संकेत करती हैं कि मनुष्य को मनुष्य की तरह समझा जाए। दो वक्त की रोटी कमाने की खातिर उनके जीवन को नर्क न बनाया जाए। कानूनी प्रावधान जितनी प्रगति से योजनाओं में बताए जाते हैं उतनी ही तत्परता के साथ जमीनी हकीकत पर भी उन्हें सक्रिय होना पड़ेगा। यह समस्या किसी पुरुष की नहीं किसी स्त्री की नहीं बल्कि यह मनुष्य होने के अस्तित्व को समझने की है।

सारांश:

उपर्युक्त तथ्यों के अध्ययन से यह पता चलता है कि समाज का हुबहू चित्रण करने में साहित्यकारों की जैसी भूमिका बनी हुई है वैसी ही भूमिका सरकार व स्थानीय प्रशासन की भी होनी चाहिए। ये किसी एक स्थान की समस्या नहीं है ये जहर सम्पूर्ण भारत देश के कोने कोने में व्याप्त हो चुका है। ऐसे में योजनाओं का केवल कागजों पर उतर जाना ही पूरा प्रयास नहीं माना जाएगा। जमीनी स्तर पर उसके क्या क्रिया कलाप हैं क्या प्रभाव पड़ रहे हैं और उसमें अभी कितने सुधार की आवश्यकता है इस पर भी हमारा ध्यान होना चाहिए। साहित्यिक समाज की यदि बात करें तो और भी रचनाएं हैं इससे जुड़ी हुई किंतु आदिवासी समाज को लेकर इसे चित्रित करने का प्रयास अभी भी अधूरा है। किस्से कहानियां सुनने की आदत हमें बचपन से ही होती है ऐसे में

कहानी के माध्यम से इसपर बात करना एक महत्त्वपूर्ण कदम दिखाई दे रहा है। इसकी निरंतरता ही इन प्रश्नों को जिंदा रखने में सफल होगी।

संदर्भ ग्रंथः-

1-दैनिक भास्कर पत्र, 28 dec 2022,

2-लोकप्रिय आदिवासी कहानियां, संपादक वंदना टेटे, पृष्ठ संख्या 27, प्रभात प्रकाशन, दिल्ली

3-लोकप्रिय आदिवासी कहानियां, संपादक वंदना टेटे, पृष्ठ संख्या 29, प्रभात प्रकाशन, दिल्ली

4-लोकप्रिय आदिवासी कहानियां, संपादक वंदना टेटे, पृष्ठ संख्या 35, प्रभात प्रकाशन, दिल्ली

5-विकल्प, वाल्टर भेंगरा तरुण, पृष्ठ संख्या 42, अनुज्ञा बुक्स, दिल्ली

6-विकल्प, वाल्टर भेंगरा तरुण, पृष्ठ संख्या 45, अनुज्ञा बुक्स, दिल्ली

7-विकल्प, वाल्टर भेंगरा तरुण, पृष्ठ संख्या 138, अनुज्ञा बुक्स, दिल्ली

8-लोकप्रिय आदिवासी कहानियां, संपादक वंदना टेटे, पृष्ठ संख्या 162, प्रभात प्रकाशन, दिल्ली

9-लोकप्रिय आदिवासी कहानियां, संपादक वंदना टेटे, पृष्ठ संख्या 170, प्रभात प्रकाशन, दिल्ली।

अन्य - https://in.usembassy.gov

नेहा यादव

शोधार्थी (पी.एच.डी.)

हिंदी विभाग

हैदराबाद विश्वविद्यालय

तेलंगाना

nehayadav170797@gmail.com

सूर्यबाला की कहानी में अभिव्यक्त वृद्ध जीवन का द्वंद्व : समस्याएं और समाधान

(विशेष संदर्भ: 'बाऊजी और बंदर' तथा 'दादी और रिमोट')

कोमल कुमारी

शोध सार :

"हम खुद को बरगद बनाकर
जमाने भर को बाँटते रहे
मेरे अपने ही हर दिन
मुझको थोड़ा-थोड़ा काटते रहे।"[1]

ये है आज के समय का वृद्ध जीवन। हिंदी साहित्य में जहां एक ओर दलित जीवन, स्त्री जीवन, आदिवासी जीवन, किन्नर जीवन के बाद अब वृद्ध जीवन की भी धमक सुनाई देने लगी है। भारतीय परंपरा में बुजुर्गों को परिवार के छायादार वृक्ष के रूप में देखने की परंपरा रही है। वृद्ध व्यक्तियों की सामाजिक सुरक्षा की जिम्मेदारी परिवार के सदस्यों की होती है परंतु आज स्थितियां बदल रही है, मूल्य बदल रहे हैं। पारिवारिक ढांचा में बदलाव के कारण बुजुर्गों की समस्याएं दिन-प्रतिदिन बढ़ती चली जा रही है। नई पीढ़ी और पुरानी पीढ़ी के विचारों में असमानता से तनाव की स्थिति उत्पन्न हो रही है। अचानक आए परिवर्तन को पुरानी पीढ़ी स्वीकार नहीं कर पा रहे हैं,इसलिए वह आक्रोशित व कुंठित होते रहते हैं। समाज तथा नई पीढ़ी ने वृद्ध व्यक्तियों को अनुपयोगी ,नकारा एवं निरर्थक सिद्ध कर दिया है। इन्हीं सारी समस्याओं का मूल्यांकन करना तथा उनके लिए उचित समाधान निकालना ही इस शोध पत्र का उद्देश्य है।

बीज शब्द: वृद्धावस्था, कमज़ोरी, वृद्ध, परायापन, बुजुर्ग, अकेलापन।

मूल आलेख: सच ही कहा गया है साहित्य समाज का दर्पण है। साहित्य में जो भी कुछ घटित होता है , उसकी परछाई हमें साहित्य के पन्नों में साफ नज़र आती है। प्राचीन काल से ही साहित्य में वृद्ध व्यक्तियों को स्थान दिया गया है। समाज के विभिन्न पक्षों को कथाकार सूर्यबाला जी उभारती चलती है। सूर्यबाला जी का जन्म 25 अक्टूबर सन् 1944 को वाराणसी में हुआ। इन्होंने अपने जन्मस्थल का सुंदर वर्णन अपनी बहुत सी कहानियां में किया है। साठोत्तरी महिला कथाकार में सूर्यबाला जी का महत्वपूर्ण स्थान रहा है। मालती जोशी, मन्नू भंडारी, मृदुला गर्ग, कृष्णा सोबती आदि महिला कथाकारों की बात की जाए तो इनमें से सूर्यबाला जी ऐसी साहित्यकार हैं जिन्होंने नारी समस्याओं को अपनी रचनाओं में चित्रित किया है। सूर्यबाला जी कई विधाओं में साहित्य की रचना की है। उनके कहानी संग्रह हैं ; इक्कीस कहानियाँ, पाँच लम्बी कहानियाँ, मुडेरे पर (1980),साँझवती (1985), यामिनी कथा (1991), गृह प्रवेश (1992), मानुष गंध (2003)।

भारतीय परंपरा में माता-पिता को ईश्वर के समान मानने की प्रथा है। 'मातृदेवोभव', 'पितृदेवोभव', 'अतिथिदेवोभव' की अवधारणा प्राचीन काल से ही प्रचलित है। भारत में वृद्धों के लिए एक शब्द है - वृद्ध। वृद्ध शब्द का प्रयोग व्यक्ति की सर्वोच्च उपलब्धियां को दर्शाने के लिए किया जाता है। "वृद्धावस्था जीवन प्रत्याशा के करीब और उससे अधिक व्यक्तियों के लिए आयु की सीमा है। वृद्ध लोगों को इन नामों से भी जाना जाता है: बूढ़े लोग, बुजुर्ग, बुजुर्ग, वरिष्ठ नागरिक, वरिष्ठ नागरिक या अधिक उम्र के वयस्क।" पौराणिक ग्रंथों में भगवान गणेश,भगवान राम और श्रवण कुमार जैसे आदर्शों को देखें तो हमें उनके कर्तव्यों को देख उनसे प्रेरणा ग्रहण करनी की आवश्यकता है। हिंदी साहित्य की बहुचर्चित कथाकार सूर्यबाला जी है। इनकी ज्यादातर रचनाएं मानवीय संवेदना से ओत-प्रोत है। सूर्यबाला जी अपनी कहानियों के द्वारा वृद्ध जीवन की समस्याएं तथा उनकी त्रासदी और

छटपटाहट को पाठकों के समक्ष प्रस्तुत करती है। इसी क्रम में वृद्ध जीवन से संबंधित कहानियां के अंतर्गत निर्वासित, दादी और रिमोट, जश्न, चिड़िया जैसी मां, सांझवती, बाऊजी और बंदर द्रष्टव्य है। प्रस्तुत शोध पत्र में 'बाऊजी और बंदर' और 'दादी और रिमोट' कहानी को विशेष संदर्भ के रूप में लिया गया है। वृद्ध जीवन की आहट हमें उपन्यास सम्राट प्रेमचंद की बूढ़ी काकी, भीष्म साहनी (चीफ की दावत), ज्ञानरंजन (पिता), काशीनाथ सिंह (अपना रास्ता लो बाबा), उदय प्रकाश (छप्पन तोले का करधन), चित्रा मुद्गल (गेंद) में भी देखने को मिलती है।

'बाऊजी और बंदर' यह वृद्ध जीवन से संबंधित कहानी है। इस कहानी के केंद्र में बाऊजी हैं जिनके इर्द-गिर्द कहानी घूमती है। ललित की मां की मृत्यु के उपरांत बाऊजी अकेले रह जाते हैं। अकेलेपन से छुटकारा पाकर वह (बाऊजी) अपने बेटे ललित के पास शहर आते हैं परंतु बेटे-बहु को बाऊजी का घर आना अच्छा नहीं लगता। बहु की स्वार्थी मानसिकता के कारण बाऊजी का उपयोग किया जाता है। उन्हें बंदर भगाने के लिए काम पर रखा जाता है। यह कहानी वृद्ध जीवन का जीता जागता दस्तावेज है। कहानी का प्रारंभ ही इस पंक्ति से होता है -"बाऊजी फिर आ रहे हैं। उन्हें फिर से बच्चों की बहुत याद आ रही है।"[2] यहां यह द्रस्टव्य है कि बाऊजी के आगमन को एक बोझ के रूप में देखा गया है। कहानी की तीसरी पंक्ति से स्पष्ट है-"सुनते ही मैंने सिर कूट लिया।"[3] यह कितनी भारी विडंबनापूर्ण स्थिति है की माता-पिता अपने पुत्र का हाल समाचार जानने के लिए भी उन्हें अपनी उपयोगिता सिद्ध करनी पड़ती है। इस कहानी में पिता-पुत्र संबंध, पिता-पुत्रवधू संबंध, दादा-पोते का संबंध दिखाया गया है। बाऊजी अपने पोते-पोती से मिलने आते हैं तब ललित और उनकी पत्नी कोई न कोई बहाना बनाकर उन्हें वापस गांव भेजने की तैयारी में जुट जाते हैं। बाऊजी कहते हैं- "अब तो पका-पकाया फल हूँ, अब गिरा कि तब। पता नहीं इस जिन्दगी में बच्चों के चेहरे देख भी पाऊँगा या नहीं। अकेले आना-जाना भी तो अब

अपने बस का नहीं...हाथ-पैर बेकार होते जा रहे हैं। वह तो बहू सयानी है कि घर-गाँव, खेत-खलिहान की सुध लेने की सलाह दी।"[4] मानव का एक गुण है-स्वार्थ। इस कहानी में बहु स्वार्थी है ,बहु अपने ससुर (बाऊजी) से परेशान है क्योंकि बहुत जद्दोजहद कर उन्होंने बाऊजी को गांव भेजा था परंतु वे फिर आ गए। घर पर ससुर की कितनी इज्जत है इसका अंदाजा इन पंक्तियों से स्पष्ट है-"पता नहीं ये बूढ़े लोग मोह-माया का इतना ओवर-स्टॉक क्यों भरे रहते हैं अपने दिल में? जब देखो तब उलीचने को तैयार। इनके दिल न हुए मोह-माया के दलदल हो गए, जीना हराम!"[5] नौकर के काम में बाऊजी की उपयोगिता ढूंढी जाती है। चन्द्रमौलेश्वर प्रसाद लिखते हैं- "बुढ़ापे को एक नई दृष्टि से देखने की आवश्यकता है, एक ऐसी दृष्टि से जिसमें संवेदना हो और बूढ़ों के लिए आदर व सम्मान का जीवन देने की आकांक्षा हो।"[6] बाऊजी के आगमन से ललित और उनकी पत्नी परेशान तो हैं परंतु उनका घर के काम में किस तरह से उपयोग किया जा सके इसकी योजना बनाई जा रही है। ललित कहता है-"अब जब आ ही रहे हैं तो मन के संतोष के लिए ही सही, बाऊजी का कुछ तो उपयोग हो। उनके यहाँ रखने, रहने के एवज में कोई तो सहूलियत...लेकिन यहाँ तो माली भी आता है।"[7] ज्यादातर वृद्ध परिवार से अपनापन पाने के लिए कुछ भी कर गुजरने को तैयार हैं। बाऊजी जब शहर आए ,उनके पोते-पोती शानू और शौनक ने आते ही उन्हें छड़ी दिखाई- “जानते हैं यह क्या है? यह छड़ी है, मम्मी ने रखी है आपके लिए...।” “हाँ...।” बाऊजी सिर हिलाते प्रसन्नचित्त छड़ी का मुआयना करने लगे, “इसे लेकर टहलने जाया करूँगा...कभी-खभी कुत्ते लग जाते हैं...पीछे...।” “दुत्त। कुत्तों को मारने के लिए थोड़ी न। बन्दरों को भगाने के लिए...इससे आप बन्दरों को भगाया करेंगे।”[8] इनकी बातों से बाऊजी के हृदय को आघात पहुंचता है। बाऊजी बंदरों से डरते थे परंतु फिर भी बंदर भगाने के लिए तैयार हो जाते हैं। जब बाऊजी इस कार्य में असमर्थ हो जाते तो उन्हे गांव वापस जाने की धमकी दी जाती-“इतना डरते हैं तो जाएँ वापस गाँव...और उड़ाएँ

जाकर खेत में चील-कौव्वे...हमारे किस काम के। वही कहावत कि..."[9] उन्हें ठेस तो पहुंचती थी परंतु बच्चों के प्यार के लालच में सहन कर लेते थे। बाऊजी के प्रति जो बहु का रवैया वह कुछ हद तक ठीक नहीं था। बहु का बाऊजी को लेकर अमानवीय व्यवहार को दिखाने का प्रयास किया गया है- "नाश्ता-खाना उन्हें दिया नहीं जाता, उनके सामने डाल दिया जाता।"[10] परिवार में वृद्ध व्यक्तियों की यही स्थिति आज भी बनी हुई है। अपने अकेलेपन को दूर करने के लिए बाऊजी ने बंदरों से दोस्ती कर लेते है।

'दादी और रिमोट' कहानी के केंद्र में वृद्ध दादी है। वृद्ध दादी को गाँव से शहर लाने की योजना बनाई जाती है। कहानी में वृद्ध दादी , बेटा-बहु और उनके दो बच्चे पात्र के रूप में उपस्थित हैं। जंगबहादूर नामक एक रसोइया भी है। सम्पूर्ण कहानी वृद्ध दादी का बेटे के घर में लिए गए अनुभव को व्यक्त करती है। दादी पूरे दिन घर में अकेले रहती है, उसका बेटा ऑफिस के काम के लिए निकल जाता, बहु स्कूल में पढाने चली जाती, पोते-पोती स्कूल पढ़ने चले जाते हैं। दादी अपना दिन कमरे में टेलिविज़न (पेटी) देखकर बिताती हैं। जब दादी पहली बार टीवी पर हिंसक छवियाँ देखती हैं तो वे सहम जाती और बेहोश हो जाती हैं। इस घटना के बाद बेटा फैसला लेता है अगर उन्हे टीवी से डर लगता है, तो कमरे से टीवी को निकाल देना चाहिए। दादी का एकमात्र साथी टीवी ही हैं, जिससे उनका मन लगा रहता है। पड़ोसी बहु को सुझाव देती हैं की उन्हे (दादी) को सुबह का कार्यक्रम दिखाया जाए, जिसमे एक गुरु उपदेश देता है। कुछ दिनों बाद दादी टीवी देखना बंद कर देती है परंतु अकेलापन उन्हे कांटने को दौराता था। टीवी पर दिखाए जाने वाले सभी हिंसाओं पर दादी ने प्रतिक्रिया देना बंद कर दिया। दादी स्वयं को अपने कमरे तक ही सीमित कर लेती हैं। कहानी का प्रारंभ हीं इस पंक्ति से होता है- "चूँकि इसके सिवा अब कोई चारा नहीं था... इसलिए गाँव से दादी ले आई गई। हिलती-डुलती, ठेंगती-ठेंगाती। लाकर, ऊँची इमारतों वाले शहर के, सातवें माले पर, पिंजरे की बूढ़ी मैना-सी लटका दी गई।"[11] इन पंक्तियों से यह स्पष्ट

है कि दादी का गाँव से शहर आना उनकी मर्जी से नहीं हुआ है ,बल्कि उन्हे जबरन लाया गया है। पिंजरे की बूढ़ी मैना की भांति सातवें माले पर लटका दिया जाता है। दरअसल ,बेटे को गाँव से जो पत्र मिला है ,उसमे बुजुर्ग माता-पिता को लेकर कर्तव्यों का जिक्र किया गया है- "आगे समाचार यह है कि आपकी माँ को सहेर जाने के लिए हम लोगों ने राजी कर लिया है। अब आप फौरन से पेस्तर आओ और 'डाइरीक्ट' लिवा ले जाओ। अपनी जमीवारी सँभालो। काहे से कि आप जान लो, उमिर और बुढ़ाया शरीर अब पूरी तरह पक के चू पड़ने को है लेकिन मानतीं फिर भी नहीं। टोले-पड़ोस का हेत-हवाल लेने, गिरती-भहराती हर कहीं पहुँच जाती हैं। दो-तीन मर्तबा तो ऊँचे-खाले लुढ़क भी चुकी हैं। अब महलम-पट्टी और डॉक्टर-वैद का उतना सरंजाम हमारे बस का कहाँ?"[12] इस पत्र के माध्यम से गाँव वाले बेटे को सुझाव दे रहे है। सीमा दीक्षित लिखती है- "कई बार यह देखा गया है कि बहुत कम उम्र के लोग भी अपने को बुजुर्ग कहलाना पसंद करते हैं, जबकि बहुत से लोग जो बुजुर्ग होकर भी उम्र की चुनौतियों को हर क्षण खारिज करने में लगे रहते हैं। समस्या उनकी नहीं हैं, जिन्होंने उम्र से भिड़ना सीखा है, बल्कि समस्या उनकी है, जो एक संख्या को उम्र और एक उम्र को बुजुर्गियत मानकर चलते हैं।"[13] दादी के रहने का प्रबंध बेटे ने पहले से कर रखा था। उनके लिए एक कोठरी का प्रबंध किया गया था, जिसका वर्णन इस प्रकार किया गया है- "इन्तजाम पहले से था। साफ-सुथरा, चाटा-पोंछा घर। एक कोने में उनकी कोठरी। पर्दे ढकी खिड़की, तिपाई, जग। जग में पानी और तिपाई पर बिस्कुट का पाकिट भी और तो और, नकी खाट के ऐन सामने एक छोटा टी.वी. भी।"[14] दादी ने जब पहली बार टीवी पर कार्यक्रम देखा वे आश्चर्यचकित हो गयी ,ऐसा मानो जैसे उनके हाथों अलादीन का चिराग लग गया हो- "बेटे के बेटे ने पुट्ट से रिमोट की बटन दबा दी। दादी हकबकाईं, भौचक...जैसे यक्ष-किन्नर, नाग-गन्धर्व, तीनों लोक, चौदहों भुवन से लेकर सम्पूर्ण ब्रह्मांड डाँवाडोल हो इस चौखूँटी 'पेटी' (बक्से) में। हरिणाकुश से

लेकर गौरा-पार्वती तक। जय जगदंबे! दादी निहाल हो लीं। बच्चों की तरह रिमोट हाथ में लेकर किलक उठीं। जैसे अलादीन का चिराग हाथ लग गया हो। फिर लजाईं।”[15] इतनी बड़ी बिल्डिंग परंतु उनसे बात करने वाला कोई नहीं। वे अकेले चुपचाप अपनी कोठरी में बैठी रहती या टीवी देखती। परिवार के सदस्य इनको पर्याप्त समय नहीं दे पाते- “घर के लोग अपने-अपने समय पर आते-जाते। आपस में थोड़ी-बहुत बातचीत करते, अपने काम में मशगूल हो जाते। दादी उनके आसपास कहीं न कहीं बैठने-उठने, चलने-फिरने की कोशिश करती रहतीं। फिर थककर अपनी कोठरी में आकर रिमोट की बटन दबा देतीं।”[16] दादी रिमोट से हिंसा का बटन हटाना चाहती है, मासूमियत से पूछती हैं- “गोली-बारूद वाली बटन निकाल दो। जान थोड़ेई देनी है। मैंने तो राधेकृष्ण के लिए बटन दबाई थी...भगवान लोग अब क्यों नहीं आते?”[17] बेटा अपनी माँ पर क्रोध प्रकट करते बेटा कहता है अगर आप हिंसक कार्यक्रम को देख डरती हैं तो टीवी देखने के बजाय प्रार्थना करने, माला जपने का सुझाव देता है- “निकाल बाहर करो टी.वी. उनकी कोठरी से वरना हमारी गैरहाजिरी में कुछ हो-हवा गया तो कौन जिम्मेवार होगा? ऐं? नहाना-धोना, खाना-पीना, पूजा-पाठ, इतना काफी नहीं क्या? बाकी समय चुपचाप माला जपें, बस।”[18] दादी के लिए एक मात्र सहारा या साथी है उनकी ये ‘पेटी’। खाली समय में टीवी का कार्यक्रम देख उनका बीता वक्त गुजरता है- “पूरे समय दिल धड़कता रहा। बस, अब कोई आया ‘पेटी’ उठाके ले जाने। कहीं कुंडा खड़कता, जान मुँह को आ जाती। अच्छा हो या बुरा, समय काटने का साथी तो है न! चला जाएगा तो क्या करेंगी दिन-भर? ले-दे के वही एक खिड़की...जिसके बगल वाली बिल्डिंग पर कफ्फन-सी सपाट दीवाल के सिवा कुछ दिखता ही नहीं। लगता है, जैसे ऊँची उठती दीवाल के बीच चिन दी गई हों।”[19] टीवी देख दादी पहले खुश होती हैं ,परंतु मार-पीट,दंगा, गोली यह देख इसको सच्चाई माँ बैठती है और रोने लगती है। इस घटना पर बहु प्रतिक्रिया व्यक्त करती है- “जब समझतीं नहीं तो देखना काहे का। सब कुछ

सच मान लेती हैं।"[20] दादी को संवेदनशील से संवेदनशून्य बनाने में कहीं न कहीं पूरा परिवार कामयाब हो ही जाता है- "अब वे जबरदस्ती के 'सिली' सवालों से किसी को परेशान भी न करतीं। उलटे कभी-कभार बात चलने पर, किस प्रोग्राम को कितने हजार चिट्ठियाँ मिलीं या क्या-क्या कीमती चीजें इनाम में थीं, या साबुन-तेल वाली छोकरियाँ कैसी घाघरी, कैसा जंपर पहने थीं, यह भी बतातीं। बड़ों और बच्चों दोनों के लिए दादी से मिली ये ज्ञानवर्द्धक सूचनाएँ अतिरिक्त मनोरंजन का माध्यम हो गईं और उन्होंने अब दादी को 'टेलीविजन इन्फॉर्मेशन ब्यूरो' के नाम से पुकारना शुरू कर दिया।"[21] कहानी में निर्णायक मोड़ तब आता है जब उस अपार्टमेंट के पास एक 28 साल के युवक की हत्या हो जाती है फिर भी दादी इस भयंकर खबर को सुन बहुत उदासीन प्रतिक्रिया देती हैं।

समस्या एवं समाधान : वृद्धावस्था जीवन प्रक्रिया का अंतिम चरण माना जाता है। इस अवस्था में बुजुर्गों को अनेक समस्याएं घेर लेती हैं। नई पीढ़ी के विचार पुरानी पीढ़ी से मेल नहीं खाते जिसके कारण वैचारिक टकराहट की स्थिति उत्पन्न होती है। वृद्धों की समस्याओं की बात की जाए तो उनकी सबसे विकट समस्या है; अकेलेपन की समस्या, मानसिक समस्या, शारीरिक समस्या, स्वास्थ्य संबंधी समस्या, आर्थिक समस्या, घर व समाज में अनादर की समस्या, पारिवारिक व सामाजिक समस्या। भूख न लगना, नींद कम आना, शारीरिक दर्द से परेशानी, आंखों से कम दिखाई देना वृद्धावस्था में अनेक समस्याएं होती हैं। इन समस्याओं के कारण है संयुक्त परिवार का टूटना, अर्थ की कमी, स्वार्थ प्रवृत्ति, नई व पुरानी पीढ़ी के विचारों में टकराव।

समाधान:

(i) वृद्धों का सम्मान करें, स्वार्थी व मतलबी होना छोड़ दें, जिससे संयुक्त परिवार न टूटे।

(ii) वृद्धों को उचित समय दें ताकि हम उनके अकेलेपन को दूर कर सकें।

(iii) संयुक्त परिवार से ही संस्कारों का जन्म होता है, जहां बच्चों का लालन-पालन अच्छे से होता है बच्चों के साथ-साथ वृद्ध व्यक्तियों का अंतिम समय प्रेम, शांति व खुशी से गुज़रता है।
(iv) वृद्धों को आर्थिक रूप से सक्षम और शारीरिक रूप से मजबूत रहने की योजना बनानी होगी।

निष्कर्ष: भारतीय समाज एक ऐसा समाज है जहां एक ओर पश्चिमीकरण का विकास हुआ वहीं दूसरी ओर वृद्धों की समस्याएं बढ़ी है। आज का समाज वृद्धावस्था को सम्मान पूर्वक दृष्टि से नहीं देखना चाहता। क्षरित होते मानवीय मूल्य, मानवीय मूल्यों का पतन होना, मूल्यों में बदलाव के कारण भी युवा पीढ़ी पुरानी पीढ़ी के भाव एवं विचारों को समझ नहीं पा रहे हैं। वृद्धावस्था में वृद्ध व्यक्तियों के भीतर अकेलापन, संत्रास, भय, असुरक्षा आदि घेर लेते हैं। वास्तव में उन्हें सुरक्षा व स्नेह की आवश्यकता है ताकि उनके अकेलेपन को दूर किया जा सके। सूर्यबाला जी अपनी कहानियों के माध्यम से समकालीन समय की सबसे विकट समस्या वृद्धों की समस्याओं से पाठकों को अवगत कराती चलती है। कहानियों के पात्रों द्वारा वृद्ध जीवन की समस्याओं को समझने का प्रयास किया गया है। बुजुर्गों के माध्यम से जो अनुभव और ज्ञान की प्राप्ति होती है उसे हमें आत्मसात करने की जरूरत है ताकि समाज की भलाई के लिए उपयोग में लाया जा सके। जिससे आगे आने वाली युवा पीढ़ी वृद्धावस्था एवं वृद्ध जीवन की समस्याओं को बेहतर ढंग से समझ पाए।

संदर्भ :

1. प्रसाद, राजेंद्र, अनमोल सूक्तियाँ, प्रभात प्रकाशन, 2024
2. सूर्यबाला, प्रतिनिधि कहानियां, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2022, पृष्ठ सं-131
3. वही, पृष्ठ सं-131
4. वही, पृष्ठ सं-131
5. वही, पृष्ठ सं-132
6. प्रसाद, चन्द्रमौलेश्वर, वृद्धावस्था विमर्श, परिलेख प्रकाशन, नजीबाबाद, प्रथम संस्करण 2016
7. सूर्यबाला, प्रतिनिधि कहानियां, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2022, पृष्ठ सं-133
8. वही, पृष्ठ सं-134
9. वही, पृष्ठ सं-138
10. वही, पृष्ठ सं-139
11. वही, पृष्ठ सं-118
12. वही, पृष्ठ सं-118
13. दीक्षित, सीमा, वृद्धावस्था की दस्तक, सामयिक बुक्स प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण 2016, पृष्ठ सं-13
14. सूर्यबाला, प्रतिनिधि कहानियां, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2022, पृष्ठ सं-118,119
15. वही, पृष्ठ सं-119
16. वही, पृष्ठ सं-119

17. वही, पृष्ठ सं-120
18. वही, पृष्ठ सं-120
19. वही, पृष्ठ सं-120
20. वही, पृष्ठ सं-122
21. वही, पृष्ठ सं-123

कोमल कुमारी (शोधार्थी)
हिंदी विभाग, मानविकी संकाय
इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय, नई दिल्ली
email: komal7152@gmail.com

हिंदी भाषा के विशेषण शब्दों में परिवर्तनीयता

सीताराम गुप्ता

सारांश: हिंदी देश के एक विस्तृत भूभाग पर बोली जाने वाली भाषा है। हिंदी की जितनी बोलियाँ, उपबोलियाँ व शैलियाँ हैं दुनिया की किसी भाषा में नहीं मिलतीं। यही कारण है कि हिंदी व्याकरण में अपवाद भी बहुत मिलते हैं। बोलियों अथवा उपबोलियों में भाषा की व्याकरणिक संरचना में अंतर होना स्वाभाविक है लेकिन मानक हिंदी में भी इस प्रकार के अंतर और अपवादों की कमी नहीं। किसी वाक्य में किसी शब्द का रूपांतरण हो जाता है तो उसी प्रकार की व्याकरणिक इकाई वाले दूसरे शब्दों का रूपांतरण नहीं होता अथवा भिन्न प्रकार से होता है। कई बार हम इसे अपवाद मान लेते हैं। कई बार अपवाद होते भी हैं लेकिन इसके मूल में प्रायः नियमों की सही जानकारी का अभाव ही होता है। इसके लिए शब्दों की सही व्युत्पत्ति व प्रकृति को जानना-समझना अनिवार्य है। हिंदी में संस्कृत के तत्सम शब्दों के अतिरिक्त तद्भव व देशज शब्दों के साथ-साथ विदेशी शब्द भी हैं। विदेशी शब्दों में उर्दू के माध्यम से हिंदी में आए अरबी और फ़ारसी के शब्दों की तो भरमार ही है जिनकी प्रकृति तत्सम व तद्भव शब्दों से भिन्न है। इस आलेख में विशेषण शब्दों की परिवर्तनीयता व अरबी-फ़ारसी के अपरिवर्तनीय विशेषण शब्दों पर विशेष रूप से विचार किया गया है। इससे न केवल विशेषण शब्दों का सही रूपांतरण करना आसान होगा अपितु पढ़ते समय अरबी-फ़ारसी के विशेषण शब्दों को पहचाना भी सरल हो जाएगा।

बीज शब्द: अच्छा-ख़ासा, अनुनासिकांत, अपरिवर्तनीय, अरबी-फ़ारसी, आकारांत, आवारा, एकारांत, ख़स्ता, चुनिंदा, ताज़ा, दोचश्मी हे, नाक़र्दा,

परिवर्तनीय, बोसीदा, मस्ताना, लापता, विकार, विशेषण, विशेष्य, संजीदा, सविभक्तिक, हिंदी व्याकरण.

मुख्य आलेख: मन्नू भंडारी की आत्मकथा ''एक कहानी यह भी'' में एक वाक्य है, ''जन्मी तो मध्य प्रदेश के भानपुरा में थी, लेकिन मेरी यादों का सिलसिला शुरू होता है अजमेर के ब्रह्मपुरी मोहल्ले के उस दो मंज़िला मकान से, जिसकी ऊपरी मंज़िल में पिता का साम्राज्य था। इस वाक्य में एक वाक्यांश है ''दो मंज़िला मकान से''। यहाँ दो मंज़िला विशेषण है और मकान विशेष्य है। प्रायः विशेष्य (संज्ञा) के बाद परसर्ग अथवा विभक्ति चिह्न लग जाने पर विशेषण परिवर्तित हो जाता है यदि वह आकारांत हो। एक उदाहरण देखिए: हमारा घर बहुत बड़ा है। अब इसका सविभक्तिक रूप देखिए: हम बहुत बड़े घर में रहते हैं। इस वाक्य में विशेषण शब्द 'बड़ा' परिवर्तित होकर 'बड़े' में बदलकर एकारांत हो जाता है लेकिन ''दो मंज़िला मकान से'' वाक्यांश में ''दो मंज़िला'' विशेषण शब्द ''दो मंज़िले'' में परिवर्तित नहीं होता। क्या ''दो मंज़िले'' लिखना अशुद्ध होगा? हाँ, ''दो मंज़िले'' लिखना अशुद्ध होगा। यदि ''दो मंज़िले'' लिखना अशुद्ध है तो फिर ''हम बहुत बड़े घर में रहते हैं'' लिखना कैसे शुद्ध हुआ? आइए इस प्रश्न का सही उत्तर जानने के साथ-साथ अन्य अपरिवर्तनीय विशेषण शब्दों के विषय में भी विस्तारपूर्वक जानने का प्रयास करते हैं।

कई बार हम लिखा देखते हैं कि ताज़े फल और सब्ज़ियाँ सेहत के लिए अच्छी होती हैं। यहाँ ''ताज़े फल और सब्ज़ियाँ'' में विशेषण के रूप में ताज़े अथवा ताज़ी लिखना अशुद्ध है क्योंकि ताज़ा एक अपरिवर्तनीय विशेषण शब्द है। लिंग-वचन ही नहीं सविभक्तिक विशेष्य के साथ भी ताज़ा ताज़ा ही रहेगा, बदलेगा नहीं जैसे ताज़ा भोजन, ताज़ा रोटी, ताज़ा रसगुल्ले, ताज़ा मिठाइयाँ अथवा ताज़ा सब्ज़ियों के भाव बढ़े। ऊपर से देखने पर तो ऐसे

लगता है कि मीठा, मीठी और मीठे रूपों की तरह ही ताज़ा, ताज़ी और ताज़े रूप भी ठीक हैं लेकिन ऐसा नहीं है। जब मीठा का मीठी और खट्टा का खट्टी हो सकता है तो ताज़ा का ताज़ी क्यों नहीं हो सकता? वास्तव में विकार की दृष्टि से अपरिवर्तनीय और परिवर्तनीय विशेषण शब्दों में अंतर विषयक स्पष्ट जानकारी के अभाव में ही हम कई बार विशेषण शब्दों के सही रूप लिखने में ग़लती कर बैठते हैं। अब प्रश्न उठता है कि कौन-से विशेषण शब्द अपरिवर्तनीय हैं और कौन-से विशेषण शब्द परिवर्तनीय हैं?

विकार की दृष्टि से विशेषण शब्दों का वर्गीकरण अत्यंत सरल है। हिंदी में व्यवहृत कुल विशेषण शब्दों को दो भागों में विभाजित किया जा सकता है - एक आकारांत शब्द और दूसरे जो आकारांत नहीं हैं जैसे अकारांत, इकारांत, ईकारांत, उकारांत व ऊकारांत, ओकारांत आदि। हिंदी में केवल आकारांत विशेषण शब्दों में विशेष्य के लिंग व वचन के अनुसार परिवर्तन अथवा विकार होता है और उसमें भी सभी आकारांत शब्दों में नहीं। आकारांत शब्दों में केवल तत्सम, तद्भव व देशज शब्दों में विकार होता है लेकिन उनमें भी कुछ अपवाद मिलते हैं। इसके अतिरिक्त जिन आकारांत शब्दों में बिलकुल विकार नहीं होता वे हैं अरबी व फ़ारसी भाषाओं के हिंदी में व्यवहृत शब्द। हिंदी के अकारांत, इकारांत, ईकारांत, उकारांत व ऊकारांत आदि विशेषण शब्दों की तरह ही अरबी व फ़ारसी के आकारांत विशेषण शब्दों में भी विशेष्य के लिंग-वचन के अनुसार कोई विकार नहीं होता। विशेषण के रूप में वे हर स्थिति में अपरिवर्तित रहते हैं।

यहाँ ध्यान देने योग्य बात ये है कि परिवर्तनीय आकारांत विशेषण शब्द पुल्लिंग एकवचन होता है और उसका बहुवचन रूप एकारांत हो जाता है जैसे मीठा से मीठे और लंबा से लंबे। आकारांत पुल्लिंग एकवचन शब्द का स्त्रीलिंग रूप ईकारांत हो जाता है और स्त्रीलिंग बहुवचन रूप भी समान रहता

है जैसे लंबी लड़की व लंबी लड़कियाँ। सविभक्तिक रूप में विशेष्य तो पुनः परिवर्तित हो जाता है लेकिन विशेषण नहीं बदलता। परिवर्तनीय विशेषण शब्दों में परिवर्तन के मात्र यही नियम हैं और यही तीन स्थितियाँ हैं जिसे जानना अत्यंत सरल है। मुख्य बात ये है कि कुछ अपवादों को छोड़ दें तो केवल आकारांत विशेषण शब्द ही परिवर्तित होते हैं लेकिन आकारांत विशेषण शब्दों में भी कुछ ऐसे शब्द हैं जो परिवर्तित नहीं होते। प्रमुख समस्या है उन आकारांत शब्दों की पहचान करने की जिनमें परिवर्तन नहीं होता और जो ग़लतियाँ होती हैं केवल इन्हीं शब्दों की ठीक से पहचान न होने के कारण होती हैं। आइए ऐसे शब्दों पर विचार करते हैं।

आकारांत अपरिवर्तनीय विशेषण शब्द:

यदि मोटे तौर पर देखा जाए तो फ़ारसी के सभी प्रकार के विशेषण अपरिवर्तनीय होते हैं और मध्यकाल में इनके प्रभाव से हिंदी में आकारांत शब्दों को छोड़कर अन्य सभी प्रकार के विशेषण शब्द अपरिवर्तित रूप में प्रयोग किए जाने लगे। संस्कृत में ऐसा नहीं था। संस्कृत में विशेषण विशेष्य के लिंग व वचन के अनुसार ही परिवर्तित होते हैं। इस समय हिंदी में आकारांत शब्दों को छोड़कर अन्य सभी प्रकार के शब्द अपरिवर्तनीय अथवा अविकारी हैं और आकारांत अपरिवर्तनीय विशेषण शब्दों में अधिकांश वे अरबी-फ़रसी के शब्द हैं जो उर्दू के माध्यम से हिंदी में आए हैं। अरबी-फ़ारसी के इन शब्दों के अंत में आ के बजाय अः होता है जो उर्दू में दोचश्मी हे से लिखा जाता है जैसे ताज़ः, सादः, ख़स्तः वग़ैरा। उर्दू में लिखा जाने वाला दोचश्मी हे अर्थात् अः हिंदी में आकर आ हो गया है इसलिए हिंदी में ताज़ः, सादः अथवा ख़स्तः के बजाय ताज़ा, सादा व ख़स्ता ही लिखा जाता है। इसी से उर्दू भाषा अथवा लिपि न जानने वालों के लिए उसकी पहचान करना कठिन ही नहीं असंभव-सा ही होता है।

ऐसे ही एक शब्द का उल्लेख पहले किया जा चुका है और वो शब्द है ताज़ा। जो चीज़ बासी न हो वो ताज़ा होती है। पानी भी ताज़ा होता है और रोटी भी ताज़ा होती है। फल भी ताज़ा होते हैं और सब्ज़ियाँ भी ताज़ा होती हैं। सेब भी ताज़ा होता है तो मौसमी भी ताज़ा होती है। अंगूर भी ताज़ा होते हैं तो फालसे भी ताज़ा होते हैं। दूध, दही, शरबत, चाय, कॉफी, लस्सी, मक्खन, घी, खोया, पनीर, अचार, चटनी, आटा, चीनी, चावल, दालें, मिर्च-मसाले, फूल-पत्तियाँ, मांस, मछली, अंडे ही नहीं ब्रेड, बिस्कुट, केक, कुकीज, चॉकलेट, चिप्स, पेस्ट्री, पिज़्ज़ा, बर्गर, आइसक्रीम सब ताज़ा होते हैं। कहने का तात्पर्य यही है कि हर चीज़ चाहे वो पुल्लिंग हो अथवा स्त्रीलिंग या एकवचन हो अथवा बहुवचन ताज़ा होती है व किसी भी सूरत में ताज़ी अथवा ताज़े नहीं बोली जाती। हाल की लिखी हुई कहानी भी ताज़ा होती है तो पहले से न सुनी हुई ख़बरें भी ताज़ा होती हैं। जानकारी भी ताज़ा हो सकती है तो वारदात, झगड़े और हादसे भी ताज़ा हो सकते हैं।

दिनांक 29 अप्रैल 2023 को एक समाचार में पढ़ा कि यूक्रेन के विदेश मंत्री दिमित्री कुलेबा ने कहा कि रूस की ताज़ा बमबारी से साफ़ है कि रूस की शांति समझौते में कोई दिलचस्पी नहीं है। तो बमबारी भी ताज़ा हो सकती है और बमबारी ताज़ा हो सकती है तो हमला भी ताज़ा हो सकता है। ताज़ा की तरह ही हालिया भी एक अपरिवर्तनीय विशेषण है अर्थात् हालिया शब्द भी अपने विशेष्य के लिंग व वचन से निरपेक्ष रहता है। हालिया बयान भी हो सकता है और हालिया नतीजे भी हो सकते हैं। हालिया जैसा ही एक अन्य विशेषण शब्द है मौजूदा। मौजूदा विशेषण भी लिंग-वचन के अनुसार पूर्णतः अपरिवर्तित रहता है। ताज़ा, हालिया और मौजूदा जैसा ही एक शब्द है ख़स्ता। खाजा भी ख़स्ता होता है तो अनरसे भी ख़स्ता होते हैं। एक कचौड़ी भी ख़स्ता होती है तो बहुत सारी कचौड़ियाँ भी ख़स्ता होती हैं। बालूशाही भी

ख़स्ता होती हैं और मट्ठियाँ भी ख़स्ता होती हैं। नमकीन भी ख़स्ता होती है तो नमकपारे और शक्करपारे भी ख़स्ता होते हैं। पूरी, पराँठे, पापड़ी, समोसे, गुजिया, चिरोटे, खजूर, सतपुरे सभी ख़स्ता होते हैं।

ताज़ा और ख़स्ता की तरह एक अन्य शब्द है पुख़्ता। ये भी लिंग व वचन के अनुसार अपरिवर्तनीय है। पुख़्ता इंतज़ाम, पुख़्ता इलाज, पुख़्ता रंग, पुख़्ता सबूत, पुख़्ता बंदोबस्त, पुख़्ता जानकारी, पुख़्ता नींव, पुख़्ता स्याही, पुख़्ता सड़क, पुख़्ता सड़कें, पुख़्ता इंतिज़ामात, पुख़्ता काग़ज़ात वग़ैरा इन सभी विशेषण-विशेष्य शब्द-युग्मों के साथ विशेषण के रूप में पुख़्ता का एक ही रूप बना रहता है। एक समाचार पढ़ने को मिला - पुख़्ता सुरक्षा इंतज़ामात के दावे के साथ 15 अगस्त की तैयारियों में जुटी दिल्ली पुलिस को उसके ही एक असिस्टेंट सब इंस्पेक्टर ने हलकान कर दिया। यहाँ इंतज़ामात के साथ विशेषण के रूप में पुख़्ता का सही प्रयोग किया गया है। ऐसा ही एक अन्य समाचार है जिससे पता चलता है कि पुख़्ता अपरिवर्तनीय विशेषण है। लिखा है कि ऐसी ड्रग (ऐंटीबायोटिक एजिथ्रोमाइसिन) का इस्तेमाल उसी सूरत में किया जाना चाहिए जब किसी मरीज़ की जान संकट में हो और उसके अंदर अज्ञात बैक्टीरिया का पुख़्ता संदेह हो।

दिनांक 04:09:2022 के नवभारत टाइम्स में सेंट्रल विस्टा एवेन्यू विषयक एक समाचार में लिखा है - यहाँ पर पैदल चलने वालों के लिए ख़ासे इंतज़ाम किए गए हैं। उससे आगे लिखा है - बताया जा रहा है कि सेंट्रल विस्टा एवेन्यू की शुरुआत होने के कम से कम एक महीने बाद तक यहाँ पुलिस का ख़ासा इंतज़ाम रहेगा। दो वाक्यों में एक विशेषण शब्द ख़ासा के दो रूप दिए गए हैं - ख़ासा इंतज़ाम और ख़ासे इंतज़ाम। वास्तव में विशेषण के रूप में ख़ासा शब्द वचन व लिंग के अनुसार अपरिवर्तनीय होता है अतः ख़ासा ही रहता है। इसके बावजूद 10:09:2022 को लिखा है कि कर्तव्य पथ

के दोनों ओर तैयार किए गए हरे-भरे लॉन्स में पहले ही दिन लोगों की ख़ासी रौनक़ दिखी। आगे लिखा है कि कर्तव्य पथ देखने के लिए आने वालों की भारी भीड़ की संभावना को देखते हुए सुरक्षा के ख़ासे इंतज़ाम किए गए हैं। वास्तव ख़ासा का ख़ासी व ख़ासे रूपांतरण नहीं हो सकता। ख़ासा हमेशा ख़ासा ही रहेगा।

लेकिन यही ख़ासा जब अच्छे के साथ मिलकर अच्छा-ख़ासा हो जाता है तो अच्छे के प्रभाव से परिवर्तनीय बन जाता है जैसे अच्छा-ख़ासा, अच्छी-ख़ासी और अच्छे-ख़ासे। सादृश्यता के आधार पर बने ऐसे शब्दों को अपवाद की श्रेणी में रखा जा सकता है। दिनांक 15:11:2022 के नवभारत टाइम्स में एक वाक्यांश है - उन्होंने सवालिये लहजे में कहा। 'सवालिया' विशेषण शब्द भी पूर्णतः अपरिवर्तनीय है अर्थात् यह किसी भी स्थिति में परिवर्तित नहीं होता है जैसे, उन्होंने सवालिया लहजे में कहा, उसने सवालिया निगाहों से देखा या उस पर कई सवालिया निशान लगे हुए थे। आवारा भी एक ऐसा ही बहुप्रयुक्त शब्द है जो अपरिवर्तनीय है जैसे आवारा लड़का, आवारा लड़की, आवारा लड़के, आवारा लड़कियाँ, आवारा पौधे, आवारा फ़सलें, आवारा परिंदे, आवारा जानवर। यदि आवारे लड़के बोलेंगे तो बोलने में भी अच्छा नहीं लगेगा। चुनिंदा किताब, चुनिंदा नज़्में, चुनिंदा कहानियाँ, चुनिंदा अफ़साने, चुनिंदा फ़िल्में, चुनिंदा दुकानदार, चुनिंदा दुकानें अथवा चुनिंदा लोग जैसे विशेषण-विशेष्य शब्द-युग्मों में विशेषण के रूप में प्रयुक्त चुनिंदा भी एक ऐसा ही अपरिवर्तनीय विशेषण शब्द है।

दिनांक 05:05:2023 के दैनिक हिंदुस्तान में एक समाचार में एक वाक्य पढ़ा - पार्टी का कहना है कि स्पेशल स्टाफ के अधिकारी 24 घंटे मुख्यमंत्री के घर के बाहर सादी वर्दी में घूम रहे हैं। यहाँ सादी शब्द का प्रयोग अनुचित है क्योंकि सादा भी एक अपरिवर्तनीय विशेषण शब्द है। काग़ज़ और

कपड़े ही सादा नहीं होते लोग भी सादादिल और सादाज़हन होते हैं। पुरुष भी और स्त्री भी दोनों ही। हर चीज़ सादा होती है अर्थात् कोई भी चीज़ सादी नहीं होती। खाना अथवा भोजन भी सादा होता है। नान भी सादा होता है तो रोटी भी सादा होती है। दलिया भी सादा होता है तो खिचड़ी भी सादा होती है। आपने पराँठे तो खाए ही होंगे। कभी सादा तो कभी भरवाँ पराँठे। लेकिन सादे पराँठे अथवा सादी पूरियाँ कभी नहीं खाई होंगी। हम कितने ही पराँठे खाएँ अथवा पूरियाँ ये सब सादा ही रहते हैं। सादा पान खाया होगा लेकिन सादे पान नहीं खाए होंगे। एकवचन में ही नहीं बहुवचन में भी सादा सादा ही रहता है। इसी संदर्भ में उर्दू शायर 'दाग़' का एक शेर याद आ रहा है:

हर अदा मस्ताना सर से पाँव तक छाई हुई,
उफ़ तेरी काफ़िर जवानी जोश पर आई हुई।

यहाँ अदा को मस्ताना बतलाया गया है। अदा एक स्त्रीलिंग शब्द है। यदि मस्ताना विशेषण परिवर्तनीय होता तो हर अदा मस्ताना के स्थान पर हर अदा मस्तानी हो जाता जिससे स्पष्ट होता है कि मस्ताना एक अपरिवर्तनीय विशेषण शब्द है जो फ़ारसी का है। फ़िल्म आरज़ू में हसरत जयपुरी का लिखा एक नग़्मा है - ऐ नर्गिसे-मस्ताना बस इतनी शिकायत है। नर्गिस एक फूल का नाम है और नर्गिस आँख को भी कहते हैं। यहाँ नर्गिस महबूब (महबूबा) के लिए इस्तेमाल हुआ है जिसकी आँखें मस्ताना अर्थात् मस्ती में डूबी हुई हैं अथवा जो नर्गिस के फूलों जैसी हैं। उर्दू शायरी में महबूबा को महबूब भी कहा जाता है और महबूब और साक़ी दोनों को पुल्लिंग माना जाता है। दुष्यंत कुमार का एक शेर है:

वे कर रहे हैं इश्क़ पे संजीदा गुफ़्तगू,
मैं क्या बताऊँ मेरा कहीं और ध्यान है।

यहाँ गुफ़्तगू संजीदा है। बातचीत भी संजीदा होती है तो वार्तालाप भी संजीदा होता है। पुरुष और स्त्री दोनों संजीदा होते हैं तो माहौल अथवा हालात भी संजीदा ही रहते हैं। संजीदा भी उपर्युक्त श्रेणी के अंतर्गत ही आता है अतः अपरिवर्तनीय है। इस प्रकार के कुछ अन्य शब्द हैं - उम्दा, ख़ुफ़िया, ज़िंदा, ज़्यादा, दीवाना, मसख़रा, नाकारा, पसंदीदा, पाकीज़ा, पेचीदा, पोशीदा, बोसीदा, अफ़सुर्दा, ख़मीदा, ज़ोलीदा, बुरीदा, शाइस्ता, शिकस्ता, देरीना, बेहूदा, मुर्दा, मौजूदा, लापता, कमरबस्ता, इकतरफा, दुतरफ़ा, दुमंज़िला आदि। खो जाने पर लड़का भी लापता होता है और लड़की भी लापता होती है। अगर बहुत सारी लड़कियाँ हों तो वे भी लापता ही होंगी और बहुत सारे लड़के हों तो वे भी लापता ही रहेंगे। ऐसे ही ज़िंदा शब्द भी अपरिवर्तित रहता है। आदमी भी ज़िंदा होता है तो औरत भी ज़िंदा होती है और लोग भी ज़िंदा होते हैं। लोग भी ज़िंदा होते हैं तो औरतें भी ज़िंदा होती हैं। जानवर भी ज़िंदा होते हैं तो पेड़-पौधे भी ज़िंदा होते हैं।

ऐसा ही एक शब्द है बोसीदा जिसका अर्थ होता है कटा-फटा, पुराना, सड़ा-गला अथवा सड़ा हुआ। बोसीदा शब्द भी लिंग-वचन के अनुसार नहीं बदलता। एक किताब हो तो भी बोसीदा होगी और बहुत सारी किताबें हों तो भी बोसीदा ही रहेंगी। फ़ारिग़ बुख़ारी के इस शेर से स्थिति स्पष्ट हो जाएगी:

याद आएँगे ज़माने को मिसालों के लिए,
जैसे बोसीदा किताबें हों हवालों के लिए।

कर्दा और नाकर्दा भी ऐसे ही शब्द हैं। कर्दा का अर्थ है किया हुआ और नाकर्दा का अर्थ है न किया हुआ। कार्य एक हो या बहुत सारे हों, पुल्लिंग हों अथवा स्त्रीलिंग हों, अच्छे हों या बुरे हों कर्दा व नाकर्दा दोनों ही

विशेषण रूप नहीं बदलते। मिर्ज़ा 'ग़ालिब' के निम्नलिखित शेर से भी इसकी पुष्टि होती है:

नाकर्दा गुनाहों की भी हसरत की मिले दाद,
यारब! अगर इन कर्दा गुनाहों की सज़ा है।

आना (आनः) प्रत्यय वाले अरबी-फ़ारसी के शब्द:

सालाना, माहाना, रोज़ाना, क़ातिलाना, अहमक़ाना, सूफ़ियाना आदि। जनाना, मर्दाना (यद्यपि जनानी व मर्दानी शब्द भी इस्तेमाल किए जाते हैं लेकिन ये शब्द विशेषण के रूप में उनके स्त्रीलिंग नहीं अपितु संज्ञा के रूप में इस्तेमाल किए जाते हैं। यदि हम जनाना का जनानी व जनाने विशेषण रूप बनाते हैं तो वे अशुद्ध होंगे लेकिन जनानी सूरत, जनाने कपड़े अथवा मर्दाने कपड़े जैसे प्रयोग चलते हैं।), शायराना, वालिहाना, तिफ़्लाना, दरवेशाना, फ़क़ीराना, सूफ़ियाना, आशिकाना, माशूक़ाना, कलंदराना, आज़ादाना, गुस्ताख़ाना, ज़ालिमाना, वहशियाना, वालिहाना, शातिराना, शाहिदाना, मालिकाना (मालिकों की तरह या जैसा, मिल्कियत का), दोस्ताना (दोस्तों की तरह या जैसा), काफ़िराना (काफ़िरों की तरह या जैसा), शाहाना, शहाना (शाहों/बादशाहों की तरह या जैसा), गदायाना (भिखारियों की तरह या जैसा), क़ातिलाना (क़ातिल की तरह क़त्ल करने के उद्देश्य से, घातक), ग़रीबाना, अमीराना आदि शब्दों का विशेषण के रूप में कोई परिवर्तन नहीं होता। हमला भी क़तिलाना होता है तो निगाहें भी क़ातिलाना ही रहती हैं।

इया प्रत्यय वाले अरबी-फ़ारसी के शब्द शौकिया, शर्तिया, मज़ाक़िया, हालिया, इक़बालिया आदि भी अपरिवर्तित रहते हैं। इनके अतिरिक्त ईं अंत वाले शब्द जैसे हसीं, रंगीं, संदलीं व आँ अंत वाले शब्द जैसे जवाँ, मेहरबाँ आदि भी नहीं बदलते।

अरबी-फ़ारसी के आकारांत शब्दों के अतिरिक्त हिंदी के भी कुछ आकारांत विशेषण शब्द हैं जो अपरिवर्तित रहते हैं। इनमें से प्रमुख हैं या अथवा 'इया' अंत वाले शब्द जैसे घटिया, छलिया, बढ़िया, दुखिया, सुखिया, रसिया, लबाड़िया, दूधिया, लंगोटिया, लिफ़ाफ़िया, मजीठिया, केसरिया, तूतिया, मूँगिया, मेहँदिया, हलदिया, हलफ़िया, भूतिया, दूधिया, भोजपुरिया, कन्नौजिया, कलकत्तिया आदि। अनुनासिकांत अथवा याँ अंत वाले काइयाँ जैसे शब्द भी नहीं बदलते। इसके अतिरिक्त वा अथवा आ अंत वाले शब्द जैसे सवाया, भगवा, गेरुआ, गेहुँआ भी अपरिवर्तित रहते हैं। विशेषण के रूप में भगवा, गेरुआ अथवा गेहुँआ जैसे शब्द वैसे तो अपरिवर्तनीय हैं और प्रायः रंगवाचक विशेष्य शब्द के साथ ही देखे जाते हैं लेकिन विशेषण पदबंध में ये परिवर्तित हो जाते हैं जैसे भगवे रंग का, भगवे वस्त्रों वाला, गेरुए रंग में, गेहुँए रंग का। सवाया भी आकार जैसे शब्द के साथ जुड़कर सवाए आकार का जैसे पदबंधों में प्रयुक्त होता है। इसके अतिरिक्त हाँ अंत वाले शब्द जैसे ललचौहाँ, ललछौहाँ, निचौहाँ तथा वाँ अंत वाले शब्द जैसे जुड़वाँ, ढलवाँ, भरवाँ, सुतवाँ आदि विशेषण शब्द भी नहीं बदलते।

निष्कर्ष: जैसा कि सभी जानते हैं कि कोई भी भाषा व्याकरण के नियमों से विकसित नहीं होती अपितु किसी भाषा के अस्तित्व में आने के बाद ही उसका व्याकरण बनाया जाता है जो उस भाषा के नियमों को स्पष्ट करने के साथ-साथ अपवादों के विषय में भी जानकारी देता है ताकि नियमों के प्रयोग से मानक भाषा में एकरूपता बनी रहे अतः मानक भाषा के स्वरूप को अक्षुण्ण बनाए रखने के लिए सही नियमों की जानकारी व उनका प्रयोग अनिवार्य है। हम अपनी बोलियो व उपबोलियों के विकास के लिए उनको व्यवहार में लाएँ और उनके विकास के लिए प्रयास करें लेकिन हिंदी भाषा के मानक स्वरूप को हर हाल में अक्षुण्ण बनाए रखने का प्रयास करें। वैसे ये भी

कटु सत्य है कि हम व्याकरण की अच्छी जानकारी के बावजूद शुद्ध अथवा अच्छी भाषा लिख या बोल नहीं सकते अतः इसके लिए अनिवार्य है कि हम केवल उन रचनाकारों का साहित्य पढ़ें जिनकी भाषा उत्कृष्ट और व्याकरणसम्मत हो।

संदर्भ ग्रंथ सूची:

1. भंडारी, मन्नू, एक कहानी यह भी.
2. डॉ. तिवारी, भोलानाथ, मानक हिंदी का स्वरूप.
3. डॉ. तिवारी, भोलानाथ, हिंदी भाषा.
4. वाजपेयी, किशोरीदास, हिंदी शब्दानुशासन.
5. गुरु, कामताप्रसाद, हिंदी व्याकरण.
6. नवभारत टाइम्स (दैनिक) नई दिल्ली, नवभारत टाइम्स दैनिक समाचार पत्र की भाषा का नियमित रूप से अवलोकन व व्याकरणिक विश्लेषण.
7. हिन्दुस्तान (दैनिक) नई दिल्ली, हिन्दुस्तान दैनिक समाचार पत्र की भाषा का नियमित रूप से अवलोकन व व्याकरणिक विश्लेषण.

सीताराम गुप्ता,

ए.डी. 106 सी., पीतमपुरा,

दिल्ली - 110034

मोबा0 नं0 9555622323

email : srgupta54@yahoo.co.in

नारी के प्रति नारी की संवेदनहीनता को दर्शाती ममता कालिया की कहानियां: माँ, उमस एवं शाल

श्वेता रानी

सारांश: संवेदना शब्द मूलतः संस्कृत के 'संवेद' शब्द से निर्मित हुआ है। संवेदना का शाब्दिक अर्थ है- सुख-दुःख का बोध, ज्ञान एवं अनुभव होना। इस लौकिक जगत में मनुष्य को सुखात्मक एवं दुखात्मक दोनों प्रकार की अनुभूतियों का अनुभव होता है। उसके यह अनुभव संवेदना कहलाते हैं। इसके विपरीत संवेदनहीनता का तात्पर्य है, संवेदनहीन होने का भाव या अवस्था, कठोरता या निर्ममता, क्रूरता आदि अथार्त किसी के दुःख-सुख का अनुभव न कर पाना। इस प्रकार किसी के प्रति दयाहीनता का भाव रखना ही संवेदनहीनता कहलाती है। नारी ईश्वर की सर्वश्रेष्ठ रचना है, जिसे उसने बाहर से कोमल तथा भीतर से सहनशील बनाया है। हमारे समाज में चिरकाल से ही पुरुषों द्वारा नारी का शारीरिक, मानसिक, आर्थिक आदि विभिन्न प्रकार से शोषण देखने को मिलता है, जिसे साहित्यकारों ने अपनी लेखनी द्वारा साहित्य की विभिन्न विधाओं में व्यक्त किया है। साहित्य में स्त्री-विमर्श के आरम्भ होने के साथ ही स्त्री-लेखिकाएँ अपने समाज में नारी के साथ हो रहे भेद-भाव तथा स्वयं एक नारी की दूसरी नारी के प्रति संवेदनहीनता के प्रति सजग हुई, जिसे उन्होंने अपने साहित्य में जीवंतता के साथ उजागर किया। इन लेखिकाओं में ममता कालिया का स्थान सर्वोपरी है, इनकी माँ, उमस एवं शाल कहानियाँ इस सन्दर्भ में सार्थक सिद्ध होती हैं।

बीज शब्द: संवेदनहीनता, दयाहीनता, अमानवीयता, नारी-शोषण आदि

ममता कालिया हिंदी-साहित्य की मूर्धन्य कथाकारों में अपना विशेष स्थान रखती हैं। इनका जन्म 2 नवम्बर 1940 ई० को मथुरा, वृन्दावन में

हुआ। प्रथमत: इन्होंने ममता अग्रवाल के नाम से साहित्य-लेखन का आरम्भ किया था किन्तु विवाहोपरांत अपने पति रवीन्द्र कालिया के नाम के अनुरूप ही इन्होंने अपने नाम के साथ कालिया उपनाम जोड़ लिया और ममता कालिया नाम से साहित्य-सृजन करने लगी। ममता जी ने अपने लेखन की शुरुआत में सन 1960 से 1965 तक केवल कविताएँ लिखी, जिनमें इनके खाँटी घरेलू औरत तथा कितने प्रश्न करूं काव्य-संग्रह बहुत लोकप्रिय हुए परन्तु धीरे-धीरे वह कहानी एवं उपन्यास लेखन की ओर भी प्रवृत हुई। ममता कालिया ने लगभग 144 कहानियों की रचना की, जो इनके बारह कहानी-संग्रहों के अंतर्गत संकलित हैं, इन कहानी-संग्रहों के शीर्षक हैं- छुटकारा, एक अदद औरत, सीट नंबर छह, प्रतिदिन, उसका यौवन, जाँच अभी जारी है, बोलने वाली औरत, मुखौटा, निर्मोही, थिएटर रोड के कौवे, पच्चीस साल की लड़की, काके दी हट्टी। उपन्यास के क्षेत्र में ममता कालिया ने बेघर, नरक दर नरक, प्रेम कहानी, लड़कियां, एक पत्नी के नोट्स, दौड़, अँधेरे का ताला तथा दुक्खम-सुक्खम नामक सर्वश्रेष्ठ उपन्यासों की रचना की।

ममता कालिया की लगभग सभी कहानियाँ सामाजिक विषमताओं का विश्लेषण करती है, जिसके अंतर्गत इन्होनें नारी के शोषक एवं शोषित दोनों रूपों को पाठकों के समक्ष प्रस्तुत किया है। 'माँ' कहानी में लेखिका ने अपनी माँ और दादी की कहानी के माध्यम से एक सास द्वारा अपनी बहु के शोषण करने की कथा को अभिव्यक्त किया है। इसमें ममता कालिया जी ने आत्मपरक तथा कथात्मक शैली का प्रयोग किया है। लेखिका की दादी के अनुसार उनकी बहु अथार्त लेखिका की माँ को घर का कोई भी काम अच्छे तरीके से करना नहीं आता, दादी का कहना है कि उनकी बहु हर समय घरेलू कार्यों में ग़लतियाँ करती रहती है। जिस प्रकार दादी की सास ने उनके ऊपर अत्याचार किये थे, वैसा ही अमानवीय व्यवहार वह भी अपनी बहु के साथ

करती है। दादी कहती है, "देखो कैसे घुन्नी बनी बैठी है, न काम से मतलब न काज से। एक हम थे। हमारी सास की नज़र उठी नहीं कि उनके चरणों पर लोटने लगते थे।"[1] दादा दुकान पर काम करते थे इसलिए वह रात को देर से घर आते थे। ससुर के घर लौटने तक बहु खाने के लिए चौके में ही उनकी प्रतीक्षा करती थी तथा घर का सारा काम संपन्न करके सबसे अंत में सोने जाती थी किन्तु उसके पश्चात् भी दादी अपनी बहु को चैन से सोने नहीं देती थी। वह बहु को ताना मारते हुए कहती, "रसोई में बिल्ली खड़-खड़ कर रही है और यह यहाँ पसरी पड़ी है। अरे, यों तो न उजाड़ो अपने भरतार का घर!"[2] लेखिका के पिता आगरा में रहकर पढ़ाई करते थे और कभी-कभी घर में आते थे। अपनी सास का उपेक्षापूर्ण व्यवहार सहन करते-करते बहु का स्वभाव भी चिढ़चिढ़ा हो जाता है और वह अपनी बेटी (लेखिका) के साथ भी बुरा बर्ताव करने लगती है किन्तु दादी अपनी पोती से बहुत प्रेम करती थी, वह उसका पक्ष लेते हुए बहु के गुस्सा होने पर कहती, "बहुत गुस्सा आय रहा हो तो दो रोटी कम खाय लीजौ, गुस्सा आपे उतर जायेगौ।"[3]

सास के निरकुंश शासन में बहु की स्थिति इतनी ख़राब थी कि यदि सास खुश होती तो उसको एक रोटी अधिक खाने को मिल जाती अन्यथा उसे दिन-रात ताने और अपमान सहन करना पड़ता था। लेखिका की माँ का विचार था कि पति कि शिक्षा पूरी होने के पश्चात् उसके जीवन से सारे कष्ट दूर हो जाएँगे। जब लेखिका के पिता घर आते थे, तब दादी बहुत खुश होती थी। एक दिन बेटे के घर आने की ख़ुशी में उन्होंने उसके लिए दही मंगाया किन्तु लेखिका ने चोरी से दही के ऊपर से सारी मलाई खा ली। जब दादी को दही के ऊपर मलाई नहीं दिखाई दी तो इसका दोष भी उन्होंने अपनी बहु पर ही लगाया। बहु ने मलाई नहीं खाई थी इसलिए उसने इस बात को मानने से साफ़ इंकार कर दिया लेकिन सास अपनी बहु को झूठा कहते हुए अपने पुत्र को

उसकी पिटाई करने को कहती है, "देखो बड़के, मुझे झूठा ठहरा रही है। ये जन्म की चटोरी है। जो अपनी माँ का जायौ है तो लगा एक लात याके।"[4] बेटा भी अपनी पत्नी की बात पर विश्वास न करके अपनी माँ की बात को ही सच मानता है और खाना छोड़कर वहां से चला जाता है।

लेखिका की माँ लेखिका को उसके बचपन की एक घटना बताती है, जिसके अनुसार लेखिका जब सेंतालिस दिन की थी और उसकी माँ उसे खटोले पर रखकर घर का काम कर रही थी तब एक बन्दर उसे खटोले से उठा ले गया था। वह बन्दर एक तीन मंजिला मकान की छत पर चढ़ जाता है, ये देखकर माँ बहुत घबरा जाती है। बच्ची को बन्दर के हाथ में देखकर आसपास के सारे लोग वहां इकट्ठे हो जाते है किन्तु बन्दर बच्ची को नहीं छोड़ता। जिस छत पर बन्दर बैठा था उससे आठ घर आगे की छत पर दो युवक पतंग उड़ रहे थे। वह युवक अपनी जान पर खेलकर बच्ची को बन्दर से छुड़ाते हैं किन्तु जब बच्ची को सुरक्षित लेकर माँ घर जाती है तो सास खुश होने की जगह उस पर चरित्रहीन होने का आरोप लगाती है। उसके शब्दों में, "आने दे बड़के को आगरे से, बासै सब बताउंगी। वो दो मुस्टंडे यों ही नहीं अपनी जान पर खेल गये। तेरे का लगते थे, ममेरे भाई या यार! जरूर कोई पुरानी आसनाई रही होगी, नहीं तो कौन किसी की खातिर जान पे खेलतो है।"[5] अतः वह क्रोधित होकर बहु के सर पर बैठने का पट्टा निकाल कर मारती है जिससे उसके सर से बहुत खून निकलता है और बाद में माथे पर निशान बन जाता है। वह निशान लेखिका को उसकी माँ लेखिका के बड़े होने पर दिखाती है।

'उमस' कहानी में भी नारी की शोचनीय स्थिति दृष्टिगत होती है। इस कहानी की नायिका रानी अपनी सास के कटु व्यवहार को झेलते हुए जीवन व्यतीत करती है। विवाह के आरम्भ के वर्षों में रानी और उसके पति विनोद के बीच में बहुत प्रेम-भाव था। किन्तु कुछ साल बाद पत्नी के शारीरिक

परिवर्तन के कारण पति का प्रेम धीरे-धीरे अपनी पत्नी के लिए कम होता गया। रानी घर का सारा काम करती थी, प्रतिदिन घर पर आए हुए मेहमानों की पूरी सेवा करती थी परन्तु फिर भी उसकी सास उससे खुश नहीं रहती थी। घर का सारा काम पूरा करने के बाद भी यदि रानी की आँख लग जाती तो उसकी सास व्यंग करते हुए कहती, "बाल-बच्चेवालियां कहीं दिन-दोपहर इस तरह पैर फैलाकर सोती हैं! अरे, थोड़ी देर सुई-सलाई लेकर बैठ, कपड़े पड़े हैं इस्त्री फेर ले। शाम का काम अभी शुरू नहीं किया तूने।"[6] सास के ये बातें सुनकर रानी फिर से काम में लग जाती थी। जब वह रात को थककर बिस्तर पर सोने पहुंचती तो उसके पति विनोद की इच्छा होती कि उसकी पत्नी उसके साथ प्रेम सहित बातचीत करे लेकिन रानी दिनभर के घरेलू कामों से थके होने के कारण पति की इच्छाओं के अनुसार खरी नहीं उतर पाती थी जिससे पति-पत्नी के मध्य तनाव की स्थिति उत्पन्न हो जाती थी।

सास को पति-पत्नी के बीच की अनबन का पता स्वयं ही चल जाता था और वह बहु के साथ निरंकुश व्यवहार करते हुए उसे व्यंग्यपूर्ण कटु वचन सुनाती रहती थी, "तेरी उमर पर मैं आधी-आधी रात तक कपड़े धोया करती थी, चक्की चलाना, भैंस की सानी-पानी करना, कंडी बनाना, सीना-पिरोना- इस सब की तो गिनती ही नहीं थी। औरत जात का काम प्यारा होता है, चाम नहीं।"[7] जब रानी थकावट के कारण धीरे-धीरे काम करती थी तो सास फिर से डांट-फटकार लगाती थी, "तुझे यह भी पता नहीं कि मरे-मरे हाथ चलने से घर का दलिद्दर कभी नहीं भागता। जल्दी कर, फटाफट खाना बना डाल, मुझे सत्संग में जल्दी जाना है।"[8] रानी मन में सोचती थी कि क्या उसके हिस्से में कभी आराम नहीं आ सकता? उसका भी मन करता है कि वह भी सत्संग जाये किन्तु उसे कहीं घूमने जाने की अनुमति नहीं थी। रानी को घर पर आए हुए अतिथियों और घर के सदस्यों के बीच हो रही बातचीत के मध्य अपने

विचार रखने की बिल्कुल आज्ञा नहीं है, इस विषय पर रानी की सास अपने पुत्र से कहती है, "तू मर्द है, पर यह वहां मर्दों के बीच बार-बार क्या करने जाती है? यह नहीं कि औरतों की तरह चाय रखकर अन्दर चली आए।"[9]

घरेलू काम के दवाब के कारण रानी की मानसिक स्थिति अच्छी नहीं रहती, उसका पति और पुत्र पवन भी उसका साथ नहीं देता। रानी मन लगाकर घर का सारा काम करती है किन्तु फिर भी घरवालों को प्रसन्न नहीं रख पाती। उसके व्यवहार से दुखी होकर उसका पति घर में नौकर रखने की बात करता है किन्तु माँ को ये बात कदापि स्वीकार्य नहीं है कि बहु घर पर आराम करे वह कहती है, "और ये क्या करेगी? आराम? फिर तो यह और भी बिगड़ जाएगी।"[10] रानी को माँ की यह बात सुनकर हंसी आती है क्योंकि वह जानती है कि उसकी सास स्वयं भी आदर्श गुणों से संपन्न नहीं है। बहुत से कार्यों में सास भी त्रुटियाँ करती है लेकिन रानी कभी भी अपनी सास की कोई गलती नहीं निकलती। वह इस बात से भली-भांति परिचित है कि यदि वह भी सास की भांति व्यवहार करने लगी तो घर की शांति भंग हो जाएगी।

ममता कालिया जी की शाल कहानी शिक्षित-महिलाओं द्वारा एक आर्थिक रूप से विपन्न स्त्री को हेय दृष्टि से देखने की कहानी है। इस कहनी की मुख्य नारी पात्र ननकी है, ननकी एक विद्यालय में काम करने वाली बाई की अस्थाई नौकरी करती है। वह यहां अध्यापन का कार्य करने वाली महिला-शिक्षकों के लिए प्रतिदिन चाय बनाने का कार्य करती है। यदि किसी दिन ननकी को चाय बनाने में देर हो जाती है, तो अध्यापिकाएं उस पर भड़क जाती, "अरे अभी तक चाय नहीं चढ़ाई ननकी ने । ननकी, ओ ननकी, कहाँ मर गयी!"[11] ठण्ड के दिनों में ननकी थोड़ी चाय अपने लिए भी बचा लेती थी। एक दिन वह प्रधान-अध्यापिका के पास चाय लेकर जाती है तथा उनकी अच्छी मनोदशा देखकर उनसे अपने लिए एक गर्म शाल की मांग करती है

किन्तु वह उसे इंकार करते हुए कहती है, "हमने तुम्हारा ठेका लिया है! और इतनी बहनजी हैं उनसे मांगों। सबके कपड़े पुराने होते हैं।"[12] प्रधान-अध्यापिका के क्रोधित होने का कारण यह था कि उन्होंने पिछले वर्ष भी ननकी को एक शाल खरीदकर दिया था परन्तु वह शाल ननकी ने अपनी भाभी को दे दिया था। बहुत सोच-विचार के पश्चात् बड़ी बहनजी (प्रधानाचार्य) ने ये निर्णय लिया कि सभी अध्यापिकाएं शाल के लिए दो-दो रूपये का चंदा देंगी प्रधान-अध्यापिका की आज्ञानुसार उन्होंने बेमन से पैसे इकट्ठे किये और इन पैसों से ननकी को नीले रंग का शाल प्रदान किया गया, जिसे प्राप्त करके ननकी बहुत खुश हुई।

जब ननकी शाल ओढ़कर विद्यालय में जाती है तो सारी अध्यापिकाएं उसे देखकर चिढ़ जाती हैं। पहले पीरियड् में तिवारी नाम की शिक्षिका कुर्सी-मेज़ साफ़ न होने का दोष ननकी पर लगाती है तथा उसे डांटते हुए कहती है, "यह मेज़ साफ़ की है तुमने, नीचे जाले ही जाले लगे हैं, कुर्सी पर इतनी धूल है, मेरी साड़ी खराब हो गयी। तुम्हें तो नया शाल पहनकर बड़ी अकड़ हो गयी है, सफाई का काम मेरा है या तुम्हारा?"[13] ननकी घबराकर अपनी बात की सफाई देते हुए कहती है कि उसने साफ-सफाई की थी लेकिन वह अध्यापिका प्रधान-अध्यापिका से उसकी शिकायत करने की धमकी देती है। इसके पश्चात् मालवीय नामक अध्यापिका ननकी को चाय बनाने का आदेश देती है। जब वह चाय बनती है तो स्टाफ रूम में अध्यापिकाओं की संख्या बढ़ जाती है और चाय कम हो जाती है, इसपर भी उसको सिद्दीकी नाम की अध्यापिका के व्यंग्यपूर्ण वचन सुनने पड़ते हैं, "लो बोलो, चाय ख़त्म भी हो गयी, तुमने हमें पूछा तक नहीं। ए ननकी, तेरी शाल में हमने भी चंदा दिया है, तू हमीं से चालाकी करती है!"[14] वह रुष्ट होकर कहती है कि आज के बाद उसके हाथ की बनी चाय नहीं पिएगी। वह चपरासी रामदीन को चाय

लेने बाहर भेज देती है। उसी समय स्टाफ रूम में प्रधान-अध्यापिका का आगमन होता है और वह सब अध्यापिकाओं के अपनी-अपनी कक्षा में समय पर ना जाने का आरोप भी ननकी पर लगाती है।

इसी प्रकार शाम होने तक सभी अध्यापिकाएं किसी न किसी बहाने से ननकी को शाल के बारे में ताना मारती हैं तथा बारी-बारी से उस पर अपना क्रोध निकालती हैं। खेलकूद की आखिरी कक्षा में तिवारी नामक शिक्षिका ननकी को पैसे देकर बाहर दुकान से चाय लाने को कहती है, जब ननकी चाय लेकर वापिस आती है तो मैदान में खेलती हुई एक छात्रा उससे टकरा जाती है, जिस कारण सारी चाय मैडम के शाल पर गिर जाती है। यह देखकर वह अध्यापिका आग-बबूला होकर ननकी पर बरस पड़ती है, "ननकी, तुमने तो हद कर दी! खुद नया शाल क्या ओढ़ लिया, दूसरों के कपड़ों को तुम टाटपट्टी समझने लगी। शरम नहीं आती, चाय गिरा दी। मेरा तीन सौ का शाल खराब कर दिया, बदतमीज़ कहीं की।"[15] इस घटना के कारण ही ननकी को छुट्टी की घंटी बजाने में थोड़ी देर हो जाती है। शेष सभी अध्यापिकाएं जो छुट्टी की घंटी की बड़ी देर से प्रतीक्षा कर रही थी, वह फिर से ननकी को खरी-खोटी सुनाती है और उसे शाल देने पर पश्चाताप करती है। उनके अनुसार ननकी नया शाल ओढ़कर लापरवाह हो गयी थी। ननकी सुबह से शाम उस शाल के कारण उनके ताने, व्यंग्य और डांट सुनकर तंग आ जाती है और वह दुखी होकर शाल प्रधान-अध्यापिका को वापिस कर देती है। उसे लगता है कि ये शाल ही उसके दु:ख का कारण है अतः वह निर्णय लेती है कि सर्दी के मौसम में वह शाल के बिना रह लेगी किन्तु अध्यापिकाओं की अवहेलना को और अधिक सहन नहीं कर पाएगी।

निष्कर्षतः हम देखते है कि ममता कालिया जी की उपरोक्त तीनों कहानियों में एक स्त्री का दूसरी स्त्री के प्रति दयाहीन, संवेदनहीन एवं

आदर्शहीन भाव परिलक्षित हुआ है। यह हमारे समाज की विडम्बना है कि एक नारी बहु के रूप में अपनी सास का जो अत्याचारी, शोषणपूर्ण एवं व्यंग्यपूर्ण व्यवहार झेलती है, वही व्यवहार वह अपनी बहु के साथ दोहराना चाहती है। ऐसा करने पर उसे कुछ अनुचित प्रतीत नहीं होता है। नारी के इसी शोषक रूप का चित्रण ममता कालिया जी की माँ और उमस कहानी में देखने को मिलता है। यह स्त्रियाँ दूसरी स्त्री को कष्ट देकर सुख का अनुभव करती है। वह परिवार में केवल अपनी ही तानाशाही चलाना चाहती हैं। परिवार के अन्य सदस्य पति और पुत्र भी इस अन्याय का विरोध नहीं करते बल्कि प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप से वह भी इस शोषण में सम्मिलित होते हैं। शाल कहानी में भी विद्यालय की सभी अध्यापिकाएं आर्थिक रूप से विपन्न विद्यालय की एक चपरासिन के प्रति घृणा का भाव रखती हैं, जो उनकी अमानवीयता एवं संवेदनहीनता का परिचायक सिद्ध होता है।

सन्दर्भ ग्रन्थ

1.कालिया, ममता, चर्चित कहानियाँ, सामयिक प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण-2006, पृष्ठ-42

2.वही. पृष्ठ-42

3.वहीं. पृष्ठ -43

4. वहीं. पृष्ठ-43

5.वहीं. पृष्ठ-46

6. वहीं. पृष्ठ-128

7.वहीं. पृष्ठ-129

8.वहीं. पृष्ठ-129

9. वहीं. पृष्ठ-130

10. वहीं. पृष्ठ-131

11. वहीं. पृष्ठ-94

12. वहीं .पृष्ठ-95

13. वहीं. पृष्ठ-97

14. वहीं. पृष्ठ-97

15. वहीं. पृष्ठ-99

श्वेता रानी (शोधार्थी)

ईमेल: schwetarani@gmail.com

संघर्षमय जीवन की महागाथा : मणिकर्णिका

अपर्णा भारती

शोध सार

मणिकर्णिका आत्मकथा तुलसीराम के संघर्षमय जीवन की गाथा है। इसकी भूमिका में लेखक लिखते हैं-"बनारस की मणिकर्णिका किसी के भी अस्तित्व को हमेशा के लिए मिटा देती है किन्तु मेरे साथ एकदम उल्टा हुआ। बनारस में मेरा जन्म ही वहीं से शुरू हुआ, फिर भी मै उन चंद लोगों में शामिल हो गया, जो जीते जी शोकांजलि के शिकार हो गए।"[1] उच्च शिक्षा प्राप्त करने के उद्देश्य से विश्वविद्यालय में दाखिले के लिए पैसे कमाने के लिए वह कलकत्ता काम करते हैं। भविष्य की चिंता उनके सामने बराबर बनी रहती है और फूट- फूटकर रोने पर मजबूर कर देती है। भविष्य की अनिश्चयता से ऊबकर कई बार आत्महत्या का ख्याल उनके मन में आता है किन्तु स्वयं पर बुद्ध का प्रभाव होने से आत्महत्या को पाप समझकर संघर्षों से जूझकर जीवन जीने की ललक उनके अंदर पैदा हो जाती है।

बीज शब्द

अस्तित्व, संघर्ष, उच्च शिक्षा, जातिवाद, बौद्ध धर्म, मार्क्सवादी विचार, कम्युनिस्ट पार्टी, भुखमरी, गरीबी, आत्महत्या, भविष्य आदि।

मूल आलेख

तुलसीराम हिन्दी के बड़े रचनाकारों में अपना महत्वपूर्ण स्थान रखते हैं। उत्तरप्रदेश के आजमगढ़ जिले के धरमपुर गाँव में एक दलित परिवार में इनका जन्म हुआ था। दलित होने के कारण उन्हें जीवन बहुत संघर्षों का सामना करना पड़ा था। मार्क्स,बुद्ध तथा डॉ. अम्बेडकर को अपना नायक मानते थे। वे दलित कम, मानवतावादी लेखक के रूप में ज्यादा प्रसिद्ध हैं- आखर सगुन के अनुसार-"तुलसीराम वर्ण-व्यवस्था से भी अधिक अमानवीयता के

खिलाफ लड़ते दिखाई पड़ते हैं और अपने मानवीय प्रेम के कारण वैचारिक विरोध के बावजूद लोगों से संवाद कायम रख पाने में सफल रहते हैं।"[2] इन्होंने हिन्दी में दो भागों में आत्मकथा लिखी है-'मुर्दहिया' और 'मणिकर्णिका'। मणिकर्णिका में बनारस में उनके जीवन संघर्ष का वर्णन है। दलित जाति से होने के कारण यहाँ भी वह जाते उन्हें निराशा ही हाथ लगती। बनारस विश्वविद्यालय में दाखिले के लिए उन्हें संघर्षों का सामना करना पड़ता है। मित्र तपसीराम की मदद से दाखिला तो उन्हें मिल जाता है परन्तु संघर्ष जारी रहता है। बनारस में गैर-दलित लोग दलितों को किराए पर मकान नहीं देते थे। वह झूठ बोलकर कमरा तो ले लेते हैं, परन्तु जल्द ही भेद खुल जाता है। घर की मालकिन उनके चेचक वाले चेहरे पर निशाना साधते हुए कहती है- "ए के त म पहिले दिनवा देखते समझि गईलो कि ई जरुर चमार होई।"[3] रात को ही कमरा खाली करके वह आश्रम में रात बिताते हैं। निम्न जाति का होने के कारण उन्हें मंदिर में प्रवेश नहीं करने दिया जाता है। मंदिर की ओर जाता देख सभी पंडित, पुजारी मारने के टूट पढते हैं-"त्रिलोकी नाथ जोर से बोले चमार सियार मंदिर में नही आ सकते। चिमटे वाला पुजारी प्रहार करने की मुद्रा में मेरी तरफ दौड़ा। मैं स्थिति की गंभीरता को देखते हुए बड़ी तेजी से बी.एच.यू. की तरफ भागा। यदि मैं तेज रफ़्तार से भागता नहीं तो मेरी धार्मिक पिटाई निश्चित थी।"[4] गरीबी उनके लिए मुख्य समस्या थी। खाना पकाने के लिए अनाज न होने और पैसे का अभाव तो हमेशा ही उनके पास होता है जिस कारण कुछ खरीद पाना उनके लिए संभव नहीं होता है। एक बार वह नो दिन भूख से तड़पते हुए काटते हैं। अपनी एक कोर्स की किताब बेचकर नवरात्रि व्रत तोड़ते हैं। बनारस के विषय में बचपन में अध्यापक से सुनी हुई कुछ पंक्तियाँ उन्हें याद आती हैं-"बनारस में कोई भूखा नहीं रहता है,कहीं न कहीं से शाम को खाना अवश्य मिल जाता है। मेरा उनकी इस धारणा से अटूट

विश्वास हो गया था, किन्तु भदैनी में यह विश्वास टूटकर चकनाचूर हो गया। मुझे पहली बार ऐसा लगा की मान्यताओं या आस्थाओं से ज़िन्दगी नहीं चलती।"[5] भुखमरी की समस्या उनके लिए सबसे विकराल थी। परिणामस्वरूप कक्षाओं में उनकी उपस्थिति घटने लगी-"मैं दोपहर बाद अकसर आर्ट्स कॉलेज के सामने स्थित विशाल ऐम्फी थिएटर ग्राउंड में उस समय चला जाता, जब वहाँ कोई दूसरा नहीं होता। पढ़ाई अब छूटी की चिंता अश्रुधारा में बदल जाती थी।"[6] कक्षा में कोई भी उच्च जाती का छात्र उनके पास नहीं बैठता। जाति के कारण पग -पग पर अपमानित होना पड़ता है, किन्तु वह हिम्मत नहीं हारते, बल्कि उनका आत्मविश्वास और बढता जाता है-"यदि मैं ईश्वर को खदेड़ सकता हूं, तो इन जातिवादी मनुष्यों को क्यों नहीं? इस बार पक्का इरादा कर लिया था कि जातिवाद से भविष्य में डरूंगा नहीं, बल्कि मुकाबला करूँगा। बनारस में यह विचित्र स्थिति थी कि मकान तो किराए पर मिलता था, किन्तु जातिवाद मुफ़्त में।"[7]

तुलसीराम पर बुद्ध और मार्क्सवाद का प्रभाव रहा है।उनके उपदेशों से प्रभावित होकर वह जीवन में आगे बढ़ते जाते हैं-"दुनिया में जो कुछ पैदा होता है, वह नश्वर है; दुनिया हर क्षण परिवर्तित हो रही है, परिवर्तन का नियम ही एक ऐसा नियम है, जो कभी भी परिवर्तित नहीं होता; इसीलिए दो अच्छी वस्तुएं हमेशा एक साथ नहीं रह सकती। अत: दुख अवश्यम्भावी हो जाता है, जैसे हर दीपक के नीचे अंधेरा होता है। फलत: जीवन भी दुख है, मरण भी दुख है, अप्रिय का मिलन भी दुख है, प्रिय का बिछडन भी दुख है, आदि-आदि।"[8] बनारस में जो कमरा उन्हें मिलता है उसमें बिजली की सुविधा नहीं होती है। लैंप जला कर पढ़ते हैं, लैंप के नीचे अंधेरा होने के कारण किताब को उसके आगे-पीछे घुमाते रहते हैं-"उस समय बुद्ध का यह कहना मुझे हमेशा याद रहता था कि हर सुख का पीछा दुख वैसे ही करता है,

जैसे हर दीपक के नीचे अंधेरा होता है।"[9] भुखमरी और गरीबी के चलते शिक्षा बंद हो जाने की संभावना से कई बार उनके मन में आत्महत्या की कल्पना उनके दिमाग में आती है परन्तु बुद्ध की सीख उन्हें हर बार बचा लेती। बुद्ध आत्महत्या या नरहत्या के एकदम खिलाफ थे-"जो भिक्षु मानव हत्या करे या आत्महत्या के लिए हथियार लावे या मरने की तारीफ करे या कहे कि जीने से मरना अच्छा है, वह पाराजिक होता है।''[10]

घर से बाहर रहते हुए वह मांस, मछली आदि खाने बैठते तो उनका ध्यान अपने परिवार की तरफ चला जाता है कि उनके भाई अब भी अधपेटवा का जीवन व्यतीत कर रहे होंगे साथ ही माता-पिता भी। उच्च शिक्षा का लालच उन्हें भारत में क्रांति करने के लिए उत्साहित करता है,देश में क्रांति होगी और समाजवादी व्यवस्था लागू होगी। इस पर जोर देते हुए कहते हैं कि इससे उनके परिवार की हालत में भी सुधार आएगा तथा कोई भूखा नंगा नहीं रहेगा। यदि ऐसा करने में उनका भी योगदान होगा, तो इतिहास का हिस्सा बन जाऊंगा। इस पर उनका कहना है-"इस तरह मैं अपना सब कुछ लुटा देने पर आमादा हो गया तथा ऐसी क्रांति की कल्पना का एक अटूट हिस्सा बन गया। इस तरह मार्क्सवाद के प्रति मेरी कट्टरता बढ़ती चली गई।"[11] तुलसीराम कम्युनिस्ट पार्टी में सक्रिय सदस्य रहे हैं परन्तु एक समय ऐसा आता है जब उन्हें पार्टी में संघर्षों का सामना करना पड़ता है उनका दलितों पर किए जा रहे अत्याचारों पर लेख लिखना पार्टी के लोगों को पसंद नहीं आता है। वह जातीय अत्याचार पर लेख लिखते हैं जिसमें वह इस बात का उल्लेख करते हैं- "ऐसे जातिवादियों के बावजूद डॉ.अम्बेडकर जैसे एक दलित ने भारत का संविधान लिखा था।"[12] पार्टी का एक अन्य सदस्य नरेंद्र प्रसाद सिन्हा छपने से पहले इस वाक्य को निकलवा देते हैं और बाद में उनके सामने यह रहस्य खुलता है कि कम्युनिस्ट पार्टी की निगाह में उनका कोई महत्व ही

नहीं है- "मुझे यह भी प्रतीत हुआ कि जब कोई उच्च जाति का व्यक्ति दलितों पर किए जाने वाले अत्याचार पर लिखता या बोलता है, तो वह समाज सुधारक कहलाता है, किन्तु जब वही बात कोई दलित लिखता या बोलता है, तो उसे जातिवादी मान लिया जाता है। पार्टी में कुछ ऐसा ही संयोग मेरे साथ जुड़ गया।"[13] तमाम विवादों के बीच नरेंद्र प्रसाद सिन्हा उनके एकदम विरोध में आ जाते हैं और टाइमरी से प्रतिमाह मिलने वाली मज़दूरी को जनरल सेक्रेटरी से कहकर बंद करवा देते हैं, स्वयं उनका इस विषय में कहना है- "मेरे ऊपर आरोप लगाया गया कि मैं पार्टी का काम ठीक से नहीं कर रहा था। हकीकत तो यह थी कि पार्टी के अलावा एक पल भी मैं कुछ और नहीं सोचता था। पार्टी में मेरी आस्था पर यह एक गहरी चोट थी।"[14] इस सन्दर्भ में धीरजभाई वणकर की टिपण्णी सार्थक सिद्ध होती है- "जाति व्यवस्था का अमानवीय रूप तथा उससे संघर्ष का सामना एक दलित को कैसे करना पड़ता है, इसे तुलसीराम ने बड़ी ईमानदारी से बेनकाव किया है। वस्तुतः इस कृति ने दलित आत्मकथा साहित्य में एक नए विमर्श का सूत्रपात किया है।"[15]

बनारस विश्विद्यालय में छात्रसंघ पर प्रतिबंद लगाए जाने पर अन्य छात्रों के साथ छात्रसंघ बहाल किए जाने की मांग को लेकर हड़ताल कर देते हैं। शांतिभंग किए जाने के आरोप में उन्हें गिरफ्तार करके जेल में डाल दिया जाता है परिणामस्वरूप उन्हें स्नातक की फाइनल परीक्षा से वंचित रहना पड़ा। परीक्षाओं में न बैठ पाने के कारण बहुत चिंतित रहने लगते हैं किन्तु वह छात्रसंघ के मामलों में सक्रिय रहते हैं कारणवश उन्हें एक बार फिर गिरफ्तार कर लिया गया। उन पर अन्य आपराधिक धाराएं भी लगा दी गई। पुलिस उन्हें नक्सलवादी समझती थी जबकि उनके साथ उनका कोई सम्बन्ध नहीं था-"कुल मिलाकर मैं लगभग एक महीना चौकाघाट जेल में रहे। इसके बाद बनारस की कम्युनिस्ट पार्टी के जनरल सेक्रेटरी गिरिजेश राय ने मुझे

ज़मानत पर जेल से रिहा करवा लिया।"[16] संघर्षों से परिपूर्ण जीवन में ईश्वर के प्रति उनकी आस्था खत्म हो जाती है। वह पूर्णरूपेण नास्तिक हो जाते हैं। उनका मानना है ईश्वर हमेशा डरपोक दरवाज़े से ही दस्तक देता है, उसको चुनौती देने के लिए मनुष्य का साहसी होना आवशक है- "नास्तिकता ने मुझे हद से ज्यादा मानवीय बना दिया। मैं विशुद्ध रूप से मानवता का पुजारी बन गया। जो लोग मानवता की बात करते हुए ईश्वरीय अंधविश्वासों की वकालत करते हैं, मैं उन्हें सबसे बड़ा पाखंडी और डोंगी समझने लगा।"[17]

तुलसीराम का प्रेममय जीवन भी कम संघर्षमय नहीं रहा है। उन्होंने अपने जीवन में आई तीन लड़कियों के साथ अपने प्रेम प्रसंगों का वर्णन किया है- उत्पलवर्ना, टामुन एवं सबीहा। तीनों में से किसी एक का भी उन्हें जीवन भर का साथ नहीं मिल पाता है। कमलानंद झा के शब्दों में- "प्रेम के वियोग पक्ष का इतना मार्मिक उद्धाटन मणिकर्णिका को आधुनिक काल का उन्नत वियोग गद्य रचना सिद्ध करता है।"[18] अपने प्रेम प्रसंगों के विषय में तुलसीराम की स्पष्ट स्वीकारोक्ति है कि "चाहे क्रांति का सपना हो या एकतरफ़ा प्यार मैंने दोनों का खूब मजा लिया। जब दोनों मामलों में धराशायी हो गया, तो उठते ही दिल्ली भाग गया।"[19]

निष्कर्षत: मणिकर्णिका तुलसीराम के जीवन-संघर्ष की महागाथा है। यह आत्मकथा न केवल दलित आत्मकथाओं में अपना विशिष्ट स्थान रखती है, बल्कि ये हिन्दी की अनूठी कृति है। इसमें जातिगत भेदभाव, गरीबी, भुखमरी, कम्युनिस्ट आन्दोलन और जातिवाद से उठते प्रश्नों एवं संघर्षों की बेबाक अभिव्यक्ति है। मनिंदरनाथ ठाकुर के शब्दों में- "यह आत्मकथा अपने प्रताड़ित होने का रोना नहीं है, बल्कि समाज को समझने और मानवीय संबंधों को समझने का और एक खास दृष्टि बिंदु से समझने का प्रयास है। इसमें समाजशास्त्रीय विश्लेषण भी है, मनोवैज्ञानिक गहराई भी

और साहित्यिक संवेदना भी है।''[20] इसमें भारतीय समाज के ताने- बाने की उन बारीकियों को रेखांकित किया गया है जिनके चलते सामान्य व्यक्ति का जीना दूभर हो जाता है परन्तु तुलसीराम की जिजीविषा का इन विपरीत परिस्थितियों में भी हार न मानना और इनसे दो चार होते हुए अपने लिए स्थान बना लेना, निःसंदेह आगामी पीढीयों के लिए प्रेरणास्रोत है।

सन्दर्भ -

1 तुलसीराम: मणिकर्णिका (भूमिका), राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, पृष्ट 5

2 स. लीलाधर जंगूडी: नया ज्ञानोदय, जुलाई – २०१५ , पृष्ट 74

3 तुलसीराम: मणिकर्णिका, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली , पृष्ट 37

4 वही, पृष्ट 68

5 वही, पृष्ट 43

6 वही, पृष्ट 49

7 वही, पृष्ट 66

8 वही, पृष्ट 16

9 वही, पृष्ट 62

10 वही, पृष्ट 82

11 वही, पृष्ट 98

12 वही, पृष्ट 170

13 वही, पृष्ट 170 – 171

14 वही, पृष्ट 173

15 स. विश्वनाथ प्रसाद तिवारी, चंद्रशेखर कंबार और के. श्रीनिवासराव समकालीन भारतीय साहित्य, पृष्ट 187

16 तुलसीराम: मणिकर्णिका, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली पृष्ट 134

17 वही , पृष्ट 63

18 एकान्त श्रीवास्तव और कुसुम खेमानी , वागर्थ , पृष्ट 27

19 तुलसीराम : मणिकर्णिका (भूमिका), पृष्ट 6

20 स.विश्वनाथ प्रसाद तिवारी, चद्रशेखर कंबार और के. श्रीनिवासराव समकालीन भारतीय साहित्य, पृष्ट 187

अपर्णा भारती

‘मलबे का मालिक’ कहानी में मानवीय मूल्यों का विघटन

आशा देवी

सारांश: मोहन राकेश जी द्वारा लिखी कहानियों के अंतर्गत हम संबंधों की यंत्रणा और अकेलेपन को देखते हैं। ऐसा अकेलापन जो न केवल अकेले रहने पर महसूस किया जाता है बल्कि समाज में रहने के बावजूद भी व्यक्ति उस अकेलेपन से दूर नही हो पाता। राकेश जी ने यह अकेलापन अलग-अलग परिवेश के माध्यम से अपनी रचनाओं में अंकित किया है। मानसिक अंतर्द्वंद, आपसी संबंध का टकराव, और सांप्रदायिक विद्वेष तथा विभाजन की त्रासदी का दर्द भी इनकी कहानियों में सुनाई देता है। ‘मलबे का मालिक’ कहानी भी एक ऐसी ही कहानी है जिसमें विस्थापन की त्रासदी का दर्द तो है ही साथ ही मानवीय मूल्यों का विघटन भी उद्धघाटित होता है। यह एक ऐसी कहानी है जिसमें व्यक्तिगत स्वार्थ वृत्ति के चलते इंसान किसी भी घर परिवार को तबाह कर सकता है। वह केवल दूसरों की संपत्ति को देखकर अपनी इंसानियत और सामाजिक संबंधों को कुचल देता है। इस समाज में जहाँ हम केवल पारिवारिक संबंधों को ही महत्व नहीं देते, सिर्फ़ उन्हें ही अपना नहीं समझते, बल्कि विश्वास के आधार पर सामाजिक संबंधों को भी पूरी तरह से जीते हैं। परंतु कभी कभी यह विश्वास हमारे लिए सही साबित नहीं हो पाता और संबंधों का विखराब हो जाता है। ‘मलबे का मालिक’ कहानी भी इन्हीं सामाजिक संबंधों के बिखराव को प्रस्तुत करती हुई दिखती है।

मोहन राकेश जी ‘नयी कहानी आंदोलन’ के साहित्यकार हैं। इनका जन्म 8 जनवरी 1925 पंजाब में हुआ तथा मृत्यु 3 जनवरी 1972 ईस्वी को हुई थी। इन्होंने गद्य साहित्य की लगभग सभी

विधाओं पर अपनी लेखनी चलाई है। इन्होंने हिंदी नाटकों की विकास यात्रा को नए दौर के साथ जोड़ा। नाटकों में 'लहरों के राजहंस' , 'आषाढ़ का एक दिन', 'आधे अधूरे' विख्यात है। उपन्यासों में 'अंधेरे बंद कमरे', 'ना आने वाला कल', 'अंतराल' आदि। कहानियों में 'मिस पाल', 'आर्द्रा', 'जानवर और जानवर', 'परमात्मा का कुत्ता', आदि कहानियों ने हिंदी कहानी का परिदृश्य ही बदल दिया। इनके कथा साहित्य में शहरी मध्यवर्ग तथा भारत विभाजन की पीड़ा बहुत ही सशक्त रूप से अभिव्यक्त हुई है।

भारत देश को जब आज़ादी मिली तो देश के लोगों को उत्सव की खुशी के साथ साथ विस्थापन की त्रासदी का दर्द भी झेलना पड़ा। अंग्रेज़ी शासन द्वारा 'फूट डालो और शासन करो' की नीति ने देश के लोगों को एक दूसरे के खिलाफ़ खड़ा कर दिया। देश विभाजन के साथ ही सांप्रदायिकता ने जन्म लिया और हिंदू मुसलमानों में भयंकर दंगे हुए। इन्हीं दंगो के चलते अनेक लोगों को अपने घर और वतन को छोड़कर जाना पड़ा और जो लोग अपनी जन्मभूमि को छोड़कर नहीं जा सके अर्थात् अपने देश से अलग नहीं हुए उन्हें अपने ही घरों में अपने ही समाज में रहने वाले दूसरे धर्म के व्यक्तियों द्वारा छला गया, जिन्हें वह अपना विश्वासपात्र समझते थे। 'मलबे का मालिक' कहानी भी इसी पृष्ठभूमि को दर्शाती हुई दिखती है जिसमें विस्थापन,व्यक्तिगत स्वार्थ, हिंसा, विश्वासघात और मानवीय मूल्यों का हनन दिखाई देता है।

मोहन राकेश की कहानी' मलबे का मालिक ' सांप्रदायिकता की आड़ में अवसरवादिता की कहानी है, जिसमें रक्खा पहलवान नामक हिंदू व्यक्ति एक व्यक्ति चिरागदीन की हत्या केवल इसलिए

कर देता है कि वह उसके मकान को हड़प सके। वह केवल चिरागदीन को ही नहीं मारता बल्कि उसकी पत्नी जुबैदा और दोनों बेटियों किशवर और सुल्ताना को भी मार देता है। रक्खा पहलवान एक घर पर कब्ज़ा करने के लिए अपनी मानवता, एवं संवेदना इंसानियत को भूल जाता है। वह अपने ही मुहल्ले के चिरागदीन का हत्यारा बन जाता है । चिरागदीन रक्खा पहलवान पर इतना भरोसा करता था कि देश विभाजन के समय वह अपने अब्बू के साथ पाकिस्तान ना जाकर भारत में ही रहता है। यह कहानी एक मुस्लिम के द्वारा हिंदू पर अत्यधिक विश्वास की कहानी है जिसमें सामाजिक संबंधों और विश्वास को तार-तार होते हुए देखा जा सकता है।

कहानी की शुरुआत साढ़े सात साल बाद लाहौर से अमृतसर आए लोगों के एक दल की बातचीत से होती है। ये लोग हॉकी का मैच देखने आए थे जो केवल एक बहाना था। वे तो उन शहरों, बाज़ारों, गली, मुहल्ले, घरों को देखने आए थे जो वह बहुत सालों पहले छोड़ कर चले गए थे। वह पुरानी यादों के साथ चलते हुए बाज़ार का एक-एक कोना याद करते हुए कहते हैं "देख...फतेहदीना,मिसरी बाज़ार में अब मिसरी की दुकानें पहले से कितनी कम रह गई हैं ! उस नुक्कड़ पर सुक्खी भठियारिन की भट्ठी थी, जहां अब पानवाला बैठा है।"[1] वह विभाजन के समय हुई सांप्रदायिकता से हुए बदलाव को देखने और पहचानने का प्रयत्न कर रहे थे। कई जगह मस्जिदों को हटाकर गुरुद्वारे बना दिए गए थे, परन्तु जब वह टोली एक मस्जिद को वैसे का वैसा ही खड़ा पाते हैं तो उन्हें आश्चर्य भी होता है। शहर के लोग उत्सुकतापूर्वक पाकिस्तानी टोली को देख रहे थे।

अमृतसर का बांसा बाज़ार एक उजड़ा हुआ बाज़ार था। जहाँ ज्यादातर बांसों और शहतीरों की दुकानें थीं जो सब की सब एक आग में जल गई थी। यह आग अमृतसर की सबसे भयानक आग थी जिसने कितने ही मुसलमानों और कुछ हिंदुओं के घरों को भी जला दिया था। जगह जगह मलबे के ढेर भीषण दंगो में लगाई आग के प्रमाण थे जो अब भी मौजूद थे। बांसा बाज़ार में उस दिन भी चहल-पहल नहीं थी क्योंकि उस बाज़ार में रहने वाले ज़्यादातर लोग तो अपने मकानों के साथ शहीद हो गए थे और जो चले गए थे उनमें से शायद किसी में भी लौटकर आने की हिम्मत नहीं थी। सिर्फ एक दुबला पतला बुड्ढा नही उस दिन वीरान बाज़ार में आया और वहां की नई इमारतों को देखकर जैसे भूल-भुलैया में पड़ गया। वह बाई तरफ जाने वाली एक गली की तरफ़ मुड़ना चाहता था, मगर हिचकिचाकर उसके पैर गली की तरफ़ मुड़ नहीं पाए। वह अपने घर को देखने की चाह में वहाँ आया था। गली में एक बच्चे को रोता हुआ देखकर उसे चुप कराने के प्रयत्न से वह कहते हैं "इधर आ, बेटे! आ तुझे चिज्जी देंगे आ।"[2] अपना हाथ जेब में डालते है,तभी एक सोलह सत्रह साल की लड़की बच्चे को उठाकर गली के अंदर ले जाती है।

गनी मियां वही व्यक्ति है जो अपने परिवार को छोड़कर पाकिस्तान चला गया था और फिर कभी अपने परिवार से नहीं मिल पाया।एक नवयुवक मनोरी, गनी मियां को उसका घर दिखाने के लिए ले जाता है और दूर से एक मलबे की तरफ इशारा करते हुए कहता है 'वह था तुम्हारा मकान'। मलबे को देखकर गनी मियां की आंखें फटी की फटी रह जाती हैं। वह बहुत भावुक हो जाते हैं।गनी मियां के आते

ही साढ़े सात साल बाद आते ही लोगों को इतने वर्ष पहले हुई घटना भी याद आ जाती है, वही घटना जिसने मानवता को नष्ट भ्रष्ट कर दिया था।रक्खा पहलवान उस समय गली का बादशाह था और उसी ने चिराग को उसके घर से नीचे भुलाया था।चिराग उसका छुरेवाला हाथ पकड़कर चिल्लाया था "रक्खा पहलवान, मुझे मत मार ! हाय कोई मुझे बचाओ।"[3] रक्खे ने उसकी बांह पकड़ ली और जांघो को अपने घुटनों से दबाए हुए बोला "चीखता क्यों है, भैण के...... तुझे मैं पाकिस्तान भेज रहा हूं, ले पाकिस्तान।"[4] जो लोग इस दृश्य के साक्षी थे उन्होंने अपने किवाड़ बंद कर दिए थे और खुद को इस घटना के उत्तरदायित्व से मुक्त कर लिया था। बंद किवाड़ो में भी उन्हें देर तक जुबैदा, किशवर और सुल्ताना के चीखने की आवाजें सुनाई देती रही थी। रक्खे पहलवान और उसके साथियों ने उन्हें भी दे दिया था। रक्खे पहलवान को कुएं पर बैठा देखकर गनी मियां ने उसकी तरफ बाहें फैलाकर कहा "रक्खे पहलवान मुझे पहचाना नहीं। मैं गनी हूं,अब्दुलगनी, चिरागदीन का बाप।" गनी मियां कहते हैं, " मैंने उसे समझाया था कि मेरे साथ चला चल पर वह ज़िद पर अड़ा रहा कि नया मकान छोड़कर नहीं जाऊंगा। यह अपनी गली है यहां कोई खतरा नहीं है......। रक्खे उसे तेरा बहुत भरोसा था। कहता था रक्खे के रहते मेरा कोई कुछ नहीं बिगाड़ सकता। मगर जब जान पर बन आई, तो रक्खे के रोके भी न रुकी।"[5] गनी के मुंह से भरोसे की बात सुनकर रक्खा पहलवान शर्मसार हो गया। गनी मियां का यह कहना कि, "मैंने आकर तुम लोगों को देख लिया, सो समझूंगा कि चिराग को देख लिया।"[6] इस वाक्य ने शायद कहीं न कहीं रक्खे पहलवान के मन को कचोटा होगा उसके भीतर की इंसानियत को जगाया होगा

तभी वह गली के बाहर बाई तरफ की दुकान के तख्ते पर बैठकर उस दिन लच्छे को अपनी वैष्णो देवी की उस यात्रा का वर्णन सुनाता रहा जो पंद्रह साल पहले की थी।

रक्खे पहलवान ने चिरागदीन के उस घर को मलबा बना दिया जो उसके लिए स्वर्ग था।एक घर की लालसा में रक्खे ने भरे पूरे परिवार को खत्म कर दिया। चिरागदीन के परिवार की मृत्यु के पीछे कहीं भी सांप्रदायिक दंगो को कारण नहीं ठहराया जा सकता। इसके पीछे तो सिर्फ अवसरवादिता देखी जा सकती है जिसका फ़ायदा रक्खे पहलवान ने उठाना चाहा। इस कहानी में मलबा मिट्टी का मलबा न होकर रक्खे पहलवान के दिमाग़ का मलबा है। वह मलबा जिसमें उन्माद और वहशीपन भरा पड़ा है। कहानी के मूल में कहीं भी हिंदू मुस्लिम घृणा को नहीं देखा गया। अगर देखा गया तो सिर्फ़ मकान पर कब्ज़ा करने की लालसा को। मलबे में चौखट की लकड़ी से गिरता हुआ भुरभुरा बिखरते हुए संबंधों का द्योतक है। विभाजन के साथ साथ यह कहानी सांप्रदायिकता, उसके दुष्परिणामों सामाजिक और दुष्परिणामों के संदर्भ में व्यापक हो उठती है, मोहन राकेश ने ' मलबे के मालिक' कहानी के माध्यम से हमारी क्षीण होती सामाजिकता, मनुष्यता और नागरिकता को उद्घघाटित किया है।

संदर्भः

1. मोहन राकेश की संपूर्ण कहानियां, राजपाल एंड सन्ज़, कश्मीरी गेट, दिल्ली -110006 पृष्ठ. 224

2. वही, पृष्ठ 225

3. वही, पृष्ठ 227

4. वही, पृष्ठ 227

5. वही, पृष्ठ 229

6. वही, पृष्ठ 230

कहानी

माँ-बेटे

रविवार का दिन, आराम का दिन। आम लोगों के समान डॉक्टर भी सुबह के समय अपने दवाखाने में सेवा देने के बाद शाम के वक्त दोस्त-परिवार वालों के साथ गुज़ारना पसंद करते हैं। ऐसे ही रविवार की एक शाम आयुष्मान नर्सिंग होम के वार्ड ब्वॉय और नर्स टीवी पर रविवार की फिल्म देखकर टाइम पास कर रहे थे। फिल्म के बीच में आने वाले विज्ञापनों से वार्ड ब्वॉय की फिल्म देखने की निरंतरता टूटती तो खिन्न होकर वह टिप्पणी भी करता। वार्ड ब्वॉय और नर्स के साथ-साथ भर्ती मरीज़ों के रिश्ते नाते वाले भी मजबूरी और बेबसी के चलते फिल्म देखने की कोशिश कर रहे थे। नर्सिंग होम के सामने एक आटो रिक्शे के रुकने की आवाज आई। वार्ड ब्वॉय ने काँच से बाहर देखा। आटो रिक्शे वाले को पैसे देने के बाद एक व्यक्ति, अचेत महिला को गोद में उठाकर नर्सिंग होम में दाखिल हुआ....। वृद्ध महिला को बेंच पर लेटाते हुए पूछा, "डॉक्टर साहब है?"

"आज संडे है। डॉक्टर साहब नहीं आते हैं। वार्ड ब्वॉय ने बताया।"

"मैं गिरीश वर्मा, मैं डॉक्टर का रिश्तेदार हूँ।"

"डॉक्टर साहब के सारे मरीज तो रिश्तेदार ही होते हैं। रिश्तेदारों को मैं जानता हूँ। आठ साल से काम कर रहा हूँ, आपको तो कभी नहीं देखा?" वार्ड ब्वॉय ने अपना अनुभव बताया।

"हम उनके दूर के रिश्तेदार हैं।" व्यक्ति ने गलती सुधारते हुए कहा,"देखिए यह मेरी माँ है। बूढ़ी है, बाथरूम में गिर गई फिर होश नहीं आया। रुक-रुक कर सांस ले रही थी अब अचेत है। छः माह पहले लकवा पड़ा था। जल्दी से डॉक्टर साहब को बुला दे।"

"देखिए मरीज की ऐसी हालत को देखते हुए डॉक्टर का इंतजार करने से बेहतर भर्ती कराना होगा।" नर्स ने सलाह दी,"यहाँ डॉक्टर साहब के असिस्टेंट है। कहे तो भर्ती कर दू?"

"मैं अकेले निर्णय नहीं ले सकता, मेरे तीन और भाई हैं, उनके आए बिना मैं क्या करूं?" गिरीश ने असमर्थता जाहिर की।
"ठीक है, जैसा आप उचित समझे। लेकिन जल्दी कीजिए, मरीज को कुछ भी हो सकता है, वैसे भी माँ जी की हालत गंभीर दिख रही है।"
नर्सिंग होम में एक पुरुष और एक महिला दाखिल हुए।
"क्यों रे गिरीश, क्या हुआ माँ को?" आगंतुक ने पूछा।
" रमेश भैया, माँ बाथरूम में गिरकर बेहोश हो गई। हाथ-पाँव ठंडे पड़ने लगे। आटो रिक्शे में लेकर यहाँ आया हूँ। डॉक्टर है नहीं, ये लोग कहते हैं भर्ती करा दो वर्ना..." इतना कह गिरीश रो पड़ा।
"भर्ती कराने में क्या दिक्कत है?" रमेश ने पूछा।
"क्यों भाई साहब माँ को भर्ती क्यों नहीं कर लेते?" रमेश ने वार्ड ब्वॉय से पूछा।
"दो हजार जमा कर दीजिए। मरीज भर्ती कर लेंगे।" वार्ड ब्वॉय ने टीवी पर निगाहें हटाए बिना जवाब दिया।
"भाई डॉक्टर साहब हमारे पहचान के हैं।"
"पैसे जमा कराने का नियम भी उन्हीं का है। देखिए, आप पैसे जमा कर दे ताकि मरीज को दवा-दारू मिल सके।"
"क्यों रे गिरीश पैसे क्यों नहीं जमा किया?" रमेश ने पैसे पर जोर देते हुए कहा।
"रमेश भैया चार महीने से माँ मेरे यहाँ है। उनकी देखभाल और दवा-दारू का खर्च मैं ही उठा रहा हूँ। नगर निगम के मोहर्रिर को मिलता ही कितना है। हम चारों भाई ने मिलकर तय किया था कि तीन-तीन महीने माँ को अपने पास रखेंगे।"
"शैलजा, माँ की देखभाल करो, मैं डॉक्टर को लेकर आ रहा हूँ।" रमेश स्कूटर लेकर नर्सिंग होम से बाहर निकला। एक टेलीफोन बूथ पर रुक कर उसने सबसे बड़े भाई
शिवप्रकाश को फोन लगाया।

"भैया माँ बहुत सीरियस है। आयुष्मान नर्सिंग होम में गिरीश उनको लेकर आया है। आप जल्दी पहुँचे। और हाँ तीन हजार रुपए रख लेंगे, मैं भी कुछ रकम लेकर डॉक्टर साहब को लेते हुए पहुँच रहा हूँ।" इतना कहकर रमेश ने फोन काट दिया।

" किसका फोन था?" शिवप्रकाश की पत्नी सविता ने पूछा।

"चलो आयुष्मान नर्सिंग होम, माँ भर्ती है, रमेश का फोन था, एक-दो हजार रुपए भी रख लो।"

"पैसे रखना जरूरी है?" सविता ने पूछा।

"बड़ा हूँ , फर्ज तो निभाना पड़ेगा।"

"क्या रमेश के पास पैसे नहीं है?" सविता बोली और वे दोनों नर्सिंग होम के लिए निकल गए।

"क्यों रे गिरीश, भर्ती करने के लिए पैसे नहीं थे तो फोन क्यों नहीं किया?" शिवप्रकाश ने सिगरेट जलाते हुए पूछा।

"भैया, रमेश भैया को फोन किया था। आपको फोन करेंगे कह रहे थे, इसी कारण फोन नहीं किया।"

"क्यों तुम फोन कर देते तो क्या होता?"

"भैया, आपके यहाँ जब भी फोन लगाया, आप नहीं है का जवाब मिला है। भाभी से पूछ लीजिए।"

"खैर, चिंता मत करो। मैं देखता हूँ।" शिवप्रकाश काउंटर पर पहुँचा। "मैडम माँ को भर्ती करना है।"

"ठीक है यह फॉर्म भर दीजिए और दो हजार जमा कर दीजिए।"

"हमें डॉक्टर साहब अच्छे से जानते हैं।"

"सर, मरीज को भर्ती करने से पहले कन्सेंट जरूरी है।" शिवप्रकाश ने माँ का नाम, पिता का नाम और उम्र तत्परता से लिखा। लेकिन पते के कालम पर कलम रुक गई।

"एक्सक्यूज मी मैडम, यह रुपए रखिए। मैं फॉर्म में भर कर देता हूँ।"

"सॉरी सर, फॉर्म जरूरी है।मरीज को कुछ हो जाने पर बहुत लफड़ा होता है।"
"अच्छा, गिरीश इधर आ। माँ को अभी कहाँ रहना था रमेश के पास या महेश के पास?" "महेश भैया के पास, भैया।" शिवप्रकाश ने महेश का पता फॉर्म में लिखा और महेश वर्मा के नाम से दस्तखत कर दिया। नर्स ने फॉर्म लेकर मरीज को एडमिट कर जनरल वार्ड के चार नंबर बेड पर भेजने के लिए वार्ड ब्वॉय और नर्स को कहा। स्ट्रेचर लाकर दोनों माँ को चार नंबर बेड पर ले गए। असिस्टेंट ने ब्लड-प्रेशर नापा, थर्मामीटर लगाया और फिर ग्लूकोज की बोतल चढ़ा दी। शिवप्रकाश सविता और गिरीश कोने में खड़े थे। रमेश अपनी पत्नी के साथ शिवप्रकाश और सविता के पैर छुए।
"क्यों रमेश कैसे हो?" शिवप्रकाश ने पूछा।
"बस भैया, क्या बताऊँ धंधे में लगातार घाटा हो रहा है। आपके पैसे नहीं दे पा रहा हूँ। आज मेरी लाचारी देखिए, माँ को भर्ती के पैसे भी नहीं है मेरे पास।"
"फोन पर तो तुम पैसे लेकर आने की बात कह रहे थे।" "घबराहट में बोल गया होगा भैया, वर्ना मेरी स्थिति तो गिरीश से गई गिरी है। भैया यह वक्त इन बातों का नहीं है। अभी तो माँ की जान बचाना जरूरी है।"
"जान बचाने के लिए तुम्हारे बड़े भैया हैं। उसके बाद कौन देखेगा? महेश को भी बुला लो ताकि वो यह ना कहे कि उसको बताया नहीं गया।" सविता ने मौन तोड़ा।
"वह जोरू का गुलाम क्या पूछेगा भाभी। मां को रखने की जिम्मेदारी उसकी थी लेकिन ताला लगाकर भाग गए।" गिरीश ने अपना गुस्सा निकाला।
"देखो हम तीनों यही है। माँ की देखभाल करने का नियम चारों ने बनाया था। महेश को बात माननी होगी। सबसे पहले वह गिरीश को एक माह का पैसा दे दे। माँ को रखने और दवा-दारू के खर्चे के लिए, माँ ठीक होती है तो तीन माह अपने पास रखें।" शिवप्रकाश ने बड़प्पन झाड़ते हुए कहा।
"यदि नहीं रखेगा तो?" रमेश ने पूछा।

"कैसे नहीं रखेगा। माँ सब की है, जिम्मेदारी भी सबकी है।" "बड़े भैया, मेरी कमाई इतनी नहीं है कि मैं तीन माह भी रख सकूँ लेकिन सब पैसे की मदद करें तो मैं माँ को जिंदगी भर अपने पास रख सकता हूँ।" गिरीश ने सुझाव दिया।

महेश और उसकी पत्नी भी नर्सिंग होम पहुँचे।

"माँ कैसी है भैया?" महेश ने बिना अभिवादन किए पूछा। "तुम्हें माँ से क्या? अपने घर में नहीं रख सकते। ताला लगाकर भाग जाते हो। बड़े आए पूछने वाले।" गिरीश ने नाराजगी दिखाई।

"मैं तुम जैसे छोटे लोगों के मुँह नहीं लगता। जरूरी काम था तो गया था। एक माह से इसी शहर में हो। माँ का ख्याल था तो क्यों नहीं आए लेने।"गिरीश ने सवाल किया।

"मैंने ठेका नहीं ले रखा है। मेरी अपनी परेशानी है, मैं माँ को नहीं रख सकता। हाँ, पैसे की सहायता करना हो तो मैं कर सकता हूँ।"

"महेश पैसे का घमंड ठीक नहीं। फिर भी तुम्हारे पास पैसे है तो गिरीश की माँ को एक महीने का खर्च और दवा-दारू का खर्च दे दो।"

"कितना खर्च हुआ गिरीश तेरा, बता?"

"भैया यह जगह हिसाब करने की नहीं है, माँ को बचाने की है।" गिरीश रो पड़ा।

नर्सिंग होम में डॉक्टर की कार ने प्रवेश किया। कार पार्क कर डॉक्टर सबके पास रुके, और कहा, " आज सारा वर्मा परिवार एक साथ! अच्छी बात है।" डॉक्टर ने जनरल वार्ड में प्रवेश किया। चार नंबर बैड के पास रुककर मरीज की नब्ज टटोली। 'विवेक, टॉर्च लेकर आओ। वार्ड ब्वॉय टॉर्च लेकर पहुंचा। डॉक्टर ने मरीज की आंखें खोली और टॉर्च से रोशनी डाली, कोई प्रतिक्रिया नहीं पाकर पलके बंद की और चादर ओढ़ा दिया। बाहर निकलकर डॉक्टर ने शिवप्रकाश को बुलाया।

"सॉरी शिवप्रकाश, माँ मर चुकी है। गर्मी के दिन है लाश ज्यादा देर नहीं रखी जा सकती, सबेरे जल्दी अंतिम संस्कार करवा देना वरना दुर्गंध आने लगेगी।"
"जी डॉक्टर साहब।"
"मैं डिस्चार्ज पेपर बना देता हूँ। मैडम, शिवप्रकाश जी ने जो पैसे दिए हैं वापस कर दो।"
"सर एक ग्लूकोज बॉटल लगा था।"
"कोई बात नहीं। शिवप्रकाश जी पैसे वापस ले लेंगे। घर की बात है ओके।"
भारी कदमों के साथ शिवप्रकाश वापस आया।
"माँ हम लोगों को छोड़कर चली गई। डॉक्टर साहब का कहना है गर्मी का मौसम है, अंतिम संस्कार सुबह जल्दी करना है वर्ना दुर्गंध आने लगेगी। मेरे घर में अंतरा और मिनी की पीएमटी की परीक्षा में एक सप्ताह है इसलिए अंतिम संस्कार और सब कार्यक्रम तुम तीनों में से किसी एक के यहाँ कराना ठीक रहेगा।"
"मेरी तो आर्थिक स्थिति ठीक नहीं है। आपका पैसा लौटा नहीं पा रहा हूं।" रमेश ने हाथ खड़े कर दिए।
"मैं भी पंद्रह दिन का समय नहीं दे पाऊँगा, हाँ पैसे की मदद कर सकता हूँ।" महेश ने अपना पल्ला झाड़ा।'
"बस भैया बहुत सुन लिया बाबूजी के गुजर जाने के बाद माँ ने हम लोगों को भूखे रहकर पाला। आज मर गई है तो जगह नहीं है! मैं ले जाऊँगा माँ को। मैं करूंगा सब काम। हाँ आप लोगों के पास वक्त होगा तो आ जाना। वरना लोग कहेंगे चार बेटे अर्थी को कंधा भी एक साथ नहीं दे सके।" कहते-कहते गिरीश फफक पड़ा।

पूजा गुप्ता
भगवानदास की गली
आदर्श स्कूल के सामने
गणेश गंज मिर्जापुर (उत्तर प्रदेश)
मोबाइल फोन- 7007224126 पिन कोड – 231001

रिश्ते की बात

डॉ. प्रदीप कुमार शर्मा

समय कभी रुकता नहीं है। वह अपनी रफ़्तार से निरंतर चलता रहता है। कमल जी को पता ही नहीं चला कि कभी उनकी हथेली में खेलने वाली बेटी नेहा शादी के लायक हो गई है। इतना जरूर है कि उनकी श्रीमती जी बार-बार उन्हें याद दिलाती रहतीं कि अब अपनी लाड़ली के लिए एक अच्छा वर-घर देखना शुरू कर दो, पर कमल जी हमेशा मजाक में टाल देते कि नेहा अभी शादी के लायक छोटी है। अभी-अभी तो उसकी नौकरी लगी है। कुछ दिन तो उसे चैन से नौकरी करने दो। हां, रमेश कुमार जी के यहां से रिश्ता आने पर वे टाल न सके।

आज लड़के वाले नेहा को देखने उसके घर आने वाले थे। लड़का शहर के सबसे प्रतिष्ठित समाजसेवी और धनाढ्य लोगों में शुमार रमेश कुमार जी का इकलौता बेटा डॉ. दिनेश कुमार था। डॉ. दिनेश कुमार की गिनती भी शहर के अच्छे उभरते हुए डॉक्टरों में होती थी। पंडित जी ने जब रिश्ते की बात छेड़ी, तो नेहा के पिता कमल जी को पहले तो अपनी कानों पर विश्वास ही नहीं हुआ, पर जब पंडित जी ने बताया कि "कमल जी, डॉ. दिनेश कुमार और आपकी नेहा बिटिया स्कूल के दिनों में एक साथ पढ़ चुके हैं और एक दूसरे को अच्छे से जानते-पहचानते हैं। रमेश और उनकी पत्नी सुभद्रा जी नेहा बिटिया को नगर पालिका के गार्डन में लोगों को सुबह-सुबह योगा सिखाते हुए पहले ही देखकर पसंद कर चुके हैं। यदि आपकी अनुमति हो, तो वे लोग रिश्ते की बात करने के लिए अगले इतवार को आपके घर आना चाहते हैं।"

कमल जी पहले तो मारे खुशी के उछल पड़े कि उनकी बेटी के लिए इतने बड़े परिवार से रिश्ता आया है, पर वास्तविकता का अहसास होते ही उन्होंने पंडित जी से कहा, "पंडित जी, आपसे तो हमारी हैसीयत छुपी हुई नहीं है। रमेश जी कहाँ राजा भोज और मैं कहाँ गंगू..."

पंडित जी ने उन्हें आश्वस्त किया, "कमल जी, मैंने रमेश जी और उनकी पूरी फैमिली को आपके बारे में सारी बता स्पष्ट रूप से बता दी है। वे लोग दान-दहेज़ के सख्त खिलाफ हैं। भगवान का दिया हुआ सब कुछ है उनके पास। मेरा उनके घर में तब से आना-जाना है, जब दिनेश जी का जन्म भी नहीं हुआ था। रमेश जी की शादी में मेरे पिताजी ही पुरोहित थे। रमेश जी की पत्नी सुभद्रा जी भी एक साधारण परिवार से ही हैं। मैं कई बार सुभद्रा जी के घर पूजा-पाठ के सिलसिले में जा चुका हूँ।"

"ठीक है पंडित जी, यदि ईश्वर ने चाहा और आपका आशीर्वाद रहा, तो नेहा बिटिया की तो जीवन ही संवर जाएगी। हमारी ओर से आप उन्हें अगले इतवार को आने का न्योता दे दीजिएगा।" कमल जी ने दोनों हाथ जोड़कर कहा।

"ठीक है कमल जी, मैं उन्हें अगले इतवार की दोपहर के ठीक तीन बजे लेकर आपके घर पहुंचता हूँ।" कहकर पंडित जी ने उनसे विदा ली।

निर्धारित दिन कमल, उनकी पत्नी कमला और बेटा-बहू ने लड़के वालों की खातिरदारी की पूरी तैयारी कर ली । कई तरह के पकवान और मिठाइयां बना लीं साथ ही कुछ मिठाइयां और स्नेक्स वगैरह बाजार से भी मंगवा लीं। घर को दुल्हन की तरह सजा लिया था।

पंडित जी रमेश कुमार, सुभद्रा और डॉ. दिनेश को लेकर दोपहर को ठीक तीन बजे उनके घर पहुँच गए। थोड़ी देर की औपचारिक बातचीत के बाद सुभद्रा जी ने कहा, "भाई साहब, हमें आपकी नेहा बिटिया बहुत पसंद है। हम तो बस बिटिया का हाथ मांगने आए हैं। पसंद तो हम उसे पहले ही कर चुके थे। यदि आप लोगों को भी हमारा बेटा दिनेश और परिवार पसंद हो, तो हम लोग शादी की बात आगे बढ़ा सकते हैं।"

"अहो भाग्य हमारे सुभद्रा बहन, हमारी बेटी आपके परिवार की बहू बनेगी, इससे बड़ा और हमारा क्या सौभाग्य होगा?" लड़की की मां कमला ने कहा।

"सौभाग्य तो हमारा होगा कमला बहन। आप लोगों ने अपनी नेहा बिटिया को अच्छी शिक्षा और सु-संस्कार की श्रृंगार से ऐसा सजाया है कि आज पूरा शहर उसके सदगुणों का कायल है। नेहा बिटिया इस नगर की सबसे प्रतिष्ठित स्कूल में एक शिक्षिका के रूप में सेवा देते हुए भी रोज सुबह 5 बजे से नगर पालिका गार्डन में लोगों को नि: शुल्क योग प्रशिक्षण देकर जो पुण्य कमा रही है, हम उसका क्या बखान करें? अब तो हमारा डॉक्टर बेटा दिनेश भी अपने मरीजों को रोज सुबह नगर पालिका के गार्डन में जाकर योग सीखने और योगाभ्यास करने की सलाह देने लगा है।" दिनेश के पिता रमेश जी ने कहा।

"जी... जी... वो..." कमला जी कुछ कहना चाहती थीं।

कमला जी की बात काटते हुए सुभद्रा जी ने कहा, "कमला जी, आप बिलकुल भी चिंता मत करिए। हमें नेहा बिटिया की वह शर्त भी मंजूर है कि शादी के बाद भी वह अपनी स्कूल की नौकरी और नि: शुल्क योग प्रशिक्षण जारी रखेगी। यह बात हमें इसलिए मालूम है क्योंकि नेहा बिटिया योगा सिखाते समय अक्सर कहती है कि वह प्रशिक्षण कार्य शादी के बाद भी जारी रखेगी।"

"बहन जी, आपने तो मेरे मन की बात पढ़ ली।" कमला जी ने मुस्कुराते हुए कहा।

"तो फिर हम ये रिश्ता पक्का समझें बहन जी?" लड़के के पिता रमेश जी ने पूछा।

"भाई साहब, आप तो हमें अच्छे से जानते हैं। हमारी हैसियत आपके मुकाबले... हम तो आपके सामने खड़े होने के लायक भी नहीं... फिर भी यदि लेन-देन की बात भी तय हो जाती तो..." लड़की के पिता कमल जी ने किसी तरह से हिम्मत जुटाकर कहा।

"क्या भाई साहब, आप कौन-सी दुनिया में रहते हैं? आज लड़कियां चांद पर पहुंच गईं, बड़े-बड़े जहाज उड़ा रही हैं और आप अठारहवीं सदी में ही अटके पड़े हैं ?" रमेश जी ने उत्साह के साथ कहा।

"वो तो ठीक है भाई साहब, पर दुनियादारी भी तो निभानी होगी न। जैसा कि समाज में दूसरे लोग..."

कमल कुमार की बात काटते हुए रमेश जी ने कहा, "दूसरे लोग क्या करते हैं और क्या नहीं करते, हम और हमारे परिवार के लोग उस पर बिलकुल भी ध्यान नहीं देते हैं। ईश्वर की कृपा और पूर्वजों के आशीर्वाद से हमारे घर किसी भी चीज की कोई कमी नहीं है। मेरा व्यवसाय और बेटे की प्रैक्टिस दोनों बहुत ही अच्छे से चल रहे हैं। हमें कमी है तो बस नेहा बिटिया जैसी एक सुंदर, सुसंस्कृत बहू की, जिसकी पूर्ति आप लोग कर सकते हैं।"

"हां भाई साहब... पर..." कमल जी कुछ कहना चाह रहे थे।

"भाई साहब, पर वर कुछ नहीं। यदि और कोई बात नहीं है तो आप, बहन जी, नेहा और उसके भैया-भाभी सब लोग एक बार हमारे घर पधारिए। सब कुछ देख कर ही बताइए कि यह रिश्ता आपको मंजूर है या नहीं? और हां, यदि कोई ऐसी चीज जो हमारे घर न दिखे, तो हमें बेहिचक बता दीजिएगा, ताकि हम उसे पूरा करने की कोशिश करेंगे।" रमेश जी ने कहा।

"भाई साहब, हमारी ये मजाल नहीं कि हम आपके घर आकर कोई कमी निकाल सकें।" कमल जी ने हाथ जोड़कर कहा।

"मजाल वाली बात नहीं है भाई साहब। हम तो लड़के वाले हैं। हम आपके घर आए हैं माँगने के लिए। वह भी कुछ ऐसा-वैसा नहीं, आपके जिगर का टुकड़ा। हमने भी अपनी बेटी ब्याही है। हमें अच्छे से पता है कि अपनी बेटी के लिए एक योग्य वर-घर की तलाश के क्या मायने होते हैं? आप सबका और नेहा बिटिया का तो हक बनता है उस घर को देखने का, जहां वह शादी के बाद रहने वाली है। वर तो आपके सामने बैठा ही है। एक ही शहर के होने से हम लोग भी सर्वथा अपरिचित नहीं हैं।" रमेश जी बोले।

"क्या भाई साहब, आप तो लगे हमारी खिंचाई करने... शादी के पहले बेटी ससुराल देखने जाए... ऐसे तो लोग..." कमल जी ने सकुचाते हुए कहा।

"कमल जी, आप फिर से लोगों की परवाह करने लगे। समय के साथ हम लोगों को भी अपनी सोच को बदलना जरूरी है। क्या हमारे और आपके दादा जी अपनी शादी के समय लड़की देखने गए थे? नहीं न? लेकिन हम तो गए थे न। आप भी गए ही होंगे? तो अब हमारी बेटियां अपना भावी वर और घर देखने के लिए क्यों न जाएं, जहां कि उनको अपना पूरा जीवन बितानी है ?" रमेश जी ने कहा।

"हूं... भाई साहब,बात तो आपकी सौ टका सही है।" कमल जी ने भी उनकी बात पर हामी भरते हुए कहा।

"तो फिर कब पधार रहे हैं आप लोग हमारे घर?" रमेश जी ने पूछा।

"आज... बल्कि अभी... क्योंकि यदि आज नहीं जा सके, तो हम सबको फिर से इकट्ठे होने के लिए अगले सन्डे का इंतजार करना होगा।" इस बार कमला जी ने कहा।

"तो फिर चलें, शुभस्य शीघ्रम ।" रमेश जी ने उत्साहित होकर कहा।

"हाँ, पर मेरी एक शर्त है भाई साहब?" कमल जी ने कहा।

"शर्त ... कैसी शर्त?" रमेश जी ने आश्चर्यचकित होकर पूछा । शर्त की बात सुनकर सब लोग कमल जी की ओर देखने लगे थे।

"मेरी शर्त बस यही है कि नेहा बिटिया और दिनेश जी का रिश्ता तय होने की खुशी में मिठाई खिलाकर ही हम यहाँ से आपके घर की ओर निकालेंगे समधी जी।" कमल जी ने मुस्कुराते हुए सुरेश जी को मिठाई खिलाई।

अपने-अपने पिता जी को खुशी-खुशी आपस में गले मिलते देखते हुए नेहा और दिनेश की एक बार फिर आँखें चार हुईं और उन्होंने नजरें झुका लीं।

डॉ. प्रदीप कुमार शर्मा
मोबाइल नंबर : 9827914888
ईमेल : pradeep.tbc.raipur@gmail.com

डॉ. स्वदेश कुमार भटनागर की कविताएँ

रे मन!

बहुत देख लिए मैंने
गुलदान
ज्योति से भरे जीवन
उन्मत्त डैने
पारदर्शी पत्थर
जोगिया सपने
अक्षत एकांत
स्वस्थऔर हँसमुख वसंत
एक नीरस सूनापन लगता है सबमें।

न मीठा भ्रम है कहीं
न निश्छल कामना
भैया!
मैं भर पाया इस दुनिया से
बहुत भोग ली रोशनी
नीली-पीली साँझ
यहाँ सरल बातों पर

हाय-तौबा के सिवा कुछ भी नहीं
एक छद्म नैतिकता तारी है
हर शब्द पर
शब्द के अर्थ पर।

रे मन!
चल अब कहीं और चलें।

जीवन को अर्थ देना पड़ता है

जैसे
शब्द लिखने की चीज़ है
लिखा जाना चाहिए
जैसे
प्रेम करने की चीज़ है
किया जाना चाहिए
जैसे
जंगल सुनने की चीज़ है
सुना जाना चाहिए
जैसे

मृत्यु इन्तज़ार करने की चीज़ है
किया जाना चाहिए
जैसे
जीवन जीने की चीज़ है
जिया जाना चाहिए
जो जीवन
धूप में नंगे पाँव चल नहीं सकता
धूप में अंगूठे पर नाच नहीं सकता
धूप में कमल के पत्ते पर गिरी,
ओस की बूंद आँखों से चुन नहीं सकता
वो क्या ख़ाक जियेगा
जीवन का कोई अर्थ नहीं होता
उसे स्वयं अर्थ देना होता है।

तलाश

मैं अपनी देह में
खिले फूल में
तलाश करूँगा वसंत।

मैं अपनी यंत्रणाओं के केंद्र में

तलाश करूँगा जिजीविषा।

मैं अपने चुम्बन की
मृगतृष्णा से सहरा में

तलाश करूँगा एक घूँट नदी।

मैं अपने प्रेम की सफ़ेद वेदना में
तलाश करूँगा एक बूँद चाँद।

मैं अपने हृदय की
अबोध सरलता में

तलाश करूँगा

आदमी होता हुआ ईश्वर

ईश्वर के क़द के ठीक बराबर

कोई शब्द

जैसे "मिज़राब"

क्या ईश्वर एक मिज़राब नहीं है।

डॉ. स्वदेश कुमार भटनागर
कैल्टन स्कूल के बराबर लाइनपार
मुरादाबाद-२४४००१, उ.प्र.

डॉ. पूनम मानकर पिसे की कविताएँ

किताबें अक्सर

किताबें अक्सर झाँकती है कांच के परदें से..
गुलाबी, जामुनी, नीली, हरी...
इंद्रधनुष सा उतर आता है आंखों में तब..

कुछ करती है इशारा, बुलाती है पास..
जो है अनछुई अबतक..

कुछ सुकून से बैठी है..
खोई हुई.. ऊंघती सी..
मेरी उंगलियों के स्पर्श से तृप्त..
कुछ ने मुझे भिगोया है नखशिख..
तो कुछ ने दी है थपकियां
मेरी बेचैन, कलपती
रातों को..
उदास दिनों को,
व्याकुल पलों को..
कुछ बनी है ढाल मेरी..
रखा है दूर हमेशा
कुटिल बाणों को..
छद्म तानों को..
भड़काती आग को..
द्वेष और दाग को..

कुछ किताबों की चुप्पी भी है चीख..
रहस्य भी है सीख..
कुछ शब्दांकित चिंगारियां..
कुछ भस्मांकित राख.

किताबें नहीं है बेजान..
वो धड़कती है सदा..
पहले नब्ज़ में..
फिर
दिल में..
और अंत में
गुरूत्वाकर्षण बन
सृष्टि में..

किताबें और मैं

मैंने मांगा साथ कुछ पलों का
वह मुस्कुराया
उसने थमा दी
जिम्मेदारियां..मजबूरियां..
आर्थिक, पारिवारिक, सामाजिक
मैं जुट गई निभाने में..
समय बीतता गया..

मैंने फिर मांगा साथ
कुछ पलों का..
वह फिर मुस्कुराया

इस बार उसने थमा दी
सुख सुविधाएं..
घर, गाड़ी,गहने..
मैं जुट गई संवारने में..संभालने में.
समय बीतता गया..

अबकी बार
मैं खरीद लाई कुछ किताबें
अब पढ़ती हूँ..बढ़ती हूं
लिखती हूं..गढ़ती हूं...
रात दिन सुकून के साथ..

समय के साथ
बीत गई सारी जिम्मेदारियां सारी मांगे
अब वह मुक्त है
और हैरान भी..
मेरी कुछ पलों की मांग बीतने पर बेचैन भी..
वह करता रहा इंतजार
मेरी पुरानी मांग के सिर उठाने का..
थक कर, हार कर
आज उसने मांगा है
साथ कुछ पलों का..

मैं मुस्कुराई..
मैंने थमा दी है कुछ किताबें उसे.

डॉ. पूनम मानकर पिसे

लेखकों, शोधार्थियों के लिए दिशानिर्देश

कश्मीर विश्वविद्यालय के हिंदी विभाग की वार्षिक शोध पत्रिका 'वितस्ता, में आपका स्वागत है। यदि आप वितस्ता के लिए कोई रचना प्रेषित करना चाहते है तो निम्नलिखित बातों का ध्यान रखना आवश्यक हैं-

पत्रिका के प्रधान संपादक सम्पादकीय बोर्ड के सदस्यों की सिफ़ारिशों पर प्रमुख विद्वानों और भाषा विशेषज्ञों के बीच ही पीर-रेफ्रीज़ (peer referees) का चयन करता है। सामग्री की समीक्षा हेतु दो रेफ्रीज़ को पांडुलिपि भेजी जाती हैं और लेखकों की पहचान गुप्त रखी जाती है। पांडुलिपि की स्वीकृति रेफरी की सिफ़ारिशों पर आधारित होती है। यदि कोई दोष या त्रुटी प्रेषित सामग्री में पाई गई तो पांडुलिपि तीसरे रेफरी को अंतिम निर्णय के लिए भेजी जाती है।

विश्लेषित सामग्री/पांडुलिपियाँ सम्बंधित लेखक को सिफारिशों/टिप्पणियों के साथ वापस भेजी जाती है। यद्यपि रेफरी के नाम गोपनीय रखे जाते है। सम्बंधित लेखक को रेफरी की टिप्पणियों के जवाब में किए गए संशोधनों/सुधारों को स्पष्ट रूप से बताना होगा। प्रकाशन के लिए स्वीकृति या अस्वीकृति के सम्बन्ध में अंतिम निर्णय मुख्य संपादक द्वारा सम्बंधित लेखक को ईमेल किया जाता है। Peer review प्रक्रिया में सामान्यतः पांडुलिपि जमा होने के छ: से आठ सप्ताह लगते है और आलेख उनकी स्वीकृति के छ: माह पश्चात् प्रकाशित होते हैं।

नैतिक कदाचार की रोकथाम के लिए प्रतिबद्ध, हम उम्मीद करते हैं कि लेखक 'वितस्ता' को पांडुलिपि प्रस्तुत करने से पहले हमारी नैतिक नीति को पढ़ेंगे और उसका पालन करेंगे। लेखक को यह पुष्टि करते हुए संपादक को एक प्रमाण पत्र प्रस्तुत करना होगा कि आलेख एक मूल कार्य है और यह कहीं पर प्रकाशित नहीं हुआ है। सम्पूर्ण सामग्री के स्रोत और सन्दर्भ की खुले तौर पर खुलासा किया जाना चाहिए।

साहित्यिक चोरी जैसी समस्यओं पर विशेष रूप से ध्यान दिया जाता है। आलेख प्रेषित करने से पहले plagiarism का ध्यान रखें, मौलिक शोध कार्य की ही स्वीकार्यता है। साहित्यिक चोरी या कॉपीराइट का उल्लंघन कभी-कभी समझ की कमी के कारण हो सकता है, और जरूरी नहीं कि धोखाधड़ी के इरादे से हो। आलेख भेजने से पहले सामग्री की मौलिकता की जांच करने के लिए, साहित्यिक चोरी का पता लगाने वाले कश्मीर विश्वविद्यालय की साहित्यिक चोरी विरोधी नीति सॉफ़्टवेयर का उपयोग करें।

यदि आप पहली बार 'वितस्ता' में शोध-पत्र प्रकाशित कराना चाहते है तो हम आशा करते है कि निम्नलिखित दिशानिर्देश आपके लिए उपयोगी होंगे।

पांडुलिपि प्रारूप-

- ❖ माइक्रोसॉफ्ट वर्ड सॉफ्टवेयर का उपयोग करके ही आलेख तैयार करें।
- ❖ सम्पूर्ण शोध - सामग्री में डबल स्पेसिंग का प्रयोग करें।
- ❖ यूनिकोड हिंदी फॉण्ट का ही प्रयोग करें।

शोध पत्र की शब्द सीमा-

२०००-२५०० शब्द। शब्द गणना के सन्दर्भ, टेबल और बॉक्स सम्मिलित है। आलेख के भीतर शीर्षक सुसंगत और तार्किक रूप से क्रमबद्ध होने चाहिए।

सन्दर्भ-

सन्दर्भों में MLA style sheet (eighth edition) का ही प्रयोग करें।

शोधालेख निम्न ईमेल आय.डी. पर प्रेषित करें-

hindijournal.vitasta098@gmail.com

अधिक जानकारी के लिए संपर्क करें डॉ. मुदस्सिर अहमद भट्ट 9682593408

इस अंक के योगदानकर्ताओं की सूची-

प्रो. रुबी जुत्शी
हिन्दी-विभाग
कश्मीर विश्वविद्यालय, श्रीनगर कश्मीर

डॉ. शिबन कृष्ण रैणा
पूर्व-अध्येता,
भारतीय उच्च अध्ययन संस्थान,
राष्ट्रपति निवास, शिमला

डॉ. शगुफ्ता नियाज़
एसोसिएट प्रोफेसर
हिन्दी विभाग
वीमेंस कालेज, ए०एम०यू०

डॉ. भारतेंदु कुमार पाठक
सहायक आचार्य
स्नातकोत्तर हिंदी विभाग
कश्मीर विश्विद्यालय हज़रतबल, श्रीनगर
दूरभाष- 7889760568
ई-मेल-pathakupandkashmir@gmail.com

डॉ. वनीत कौर
पूर्व शोध छात्रा, हिंदी विभाग
कश्मीर विश्विद्यालय हज़रतबल, श्रीनगर

डॉ. आलोक कुमार सिंह
सहायक आचार्य
हिन्दी विभाग
माँ मंशा देवी महाविद्यालय, चंदौली

डॉ. अमृता सिंह
श्रीनगर जम्मू व कश्मीर

डॉ. मुदस्सिर अहमद भट्ट
श्रीनगर जम्मू व कश्मीर

डॉ. सुरेश शर्मा
सहायक आचार्य, ज्योतिष विद्याशाखा
केन्द्रीय संस्कृत विश्वविद्यालय
श्री रघुनाथकीर्ति परिसर देवप्रयाग

नेहा यादव
शोधार्थी (पी.एच.डी.)
हिंदी विभाग
हैदराबाद विश्वविद्यालय
तेलंगाना
nehayadav170797@gmail.com

कोमल कुमारी (शोधार्थी)
हिंदी विभाग, मानविकी संकाय
इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय, नई दिल्ली
email: komal7152@gmail.com

सीताराम गुप्ता
ए.डी. 106 सी., पीतमपुरा,
दिल्ली - 110034
मोबा0 नं0 9555622323
email : srgupta54@yahoo.co.in

श्वेता रानी (शोधार्थी)
हिंदी विभाग, कश्मीर विश्वविद्यालय श्रीनगर
जम्मू व कश्मीर
ईमेल: schwetarani@gmail.com

अपर्णा भारती (शोधार्थी)
हिंदी विभाग, कश्मीर विश्वविद्यालय श्रीनगर
जम्मू व कश्मीर

आशा देवी (शोधार्थी)
हिंदी विभाग, कश्मीर विश्वविद्यालय श्रीनगर
जम्मू व कश्मीर

पूजा गुप्ता
भगवानदास की गली

आदर्श स्कूल के सामने
गणेश गंज मिर्जापुर (उत्तर प्रदेश)
मोबाइल फोन- 7007224126 पिन कोड – 231001

डॉ. प्रदीप कुमार शर्मा
मोबाइल नंबर : 9827914888
ईमेल : pradeep.tbc.raipur@gmail.com

डॉ. स्वदेश कुमार भटनागर
कैल्टन स्कूल के बराबर लाइनपार
मुरादाबाद-२४४००१, उ.प्र.

डॉ. पूनम मानकर पिसे
ओखला महाराष्ट्र
सेल: 9284842716